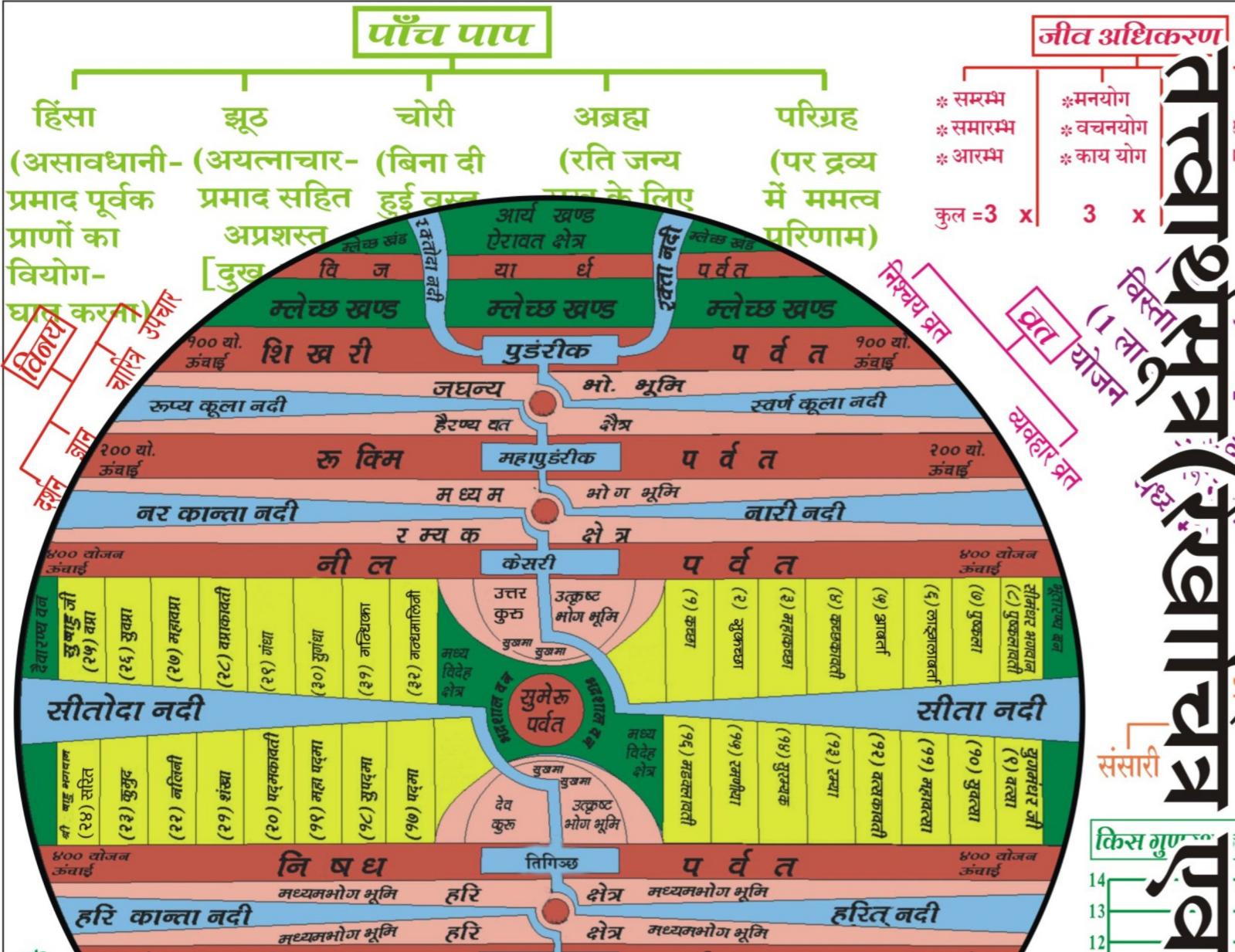
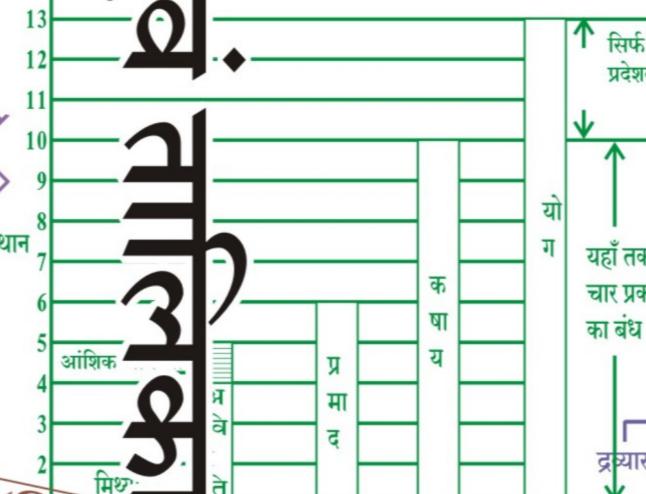


तत्त्वार्थसूत्र

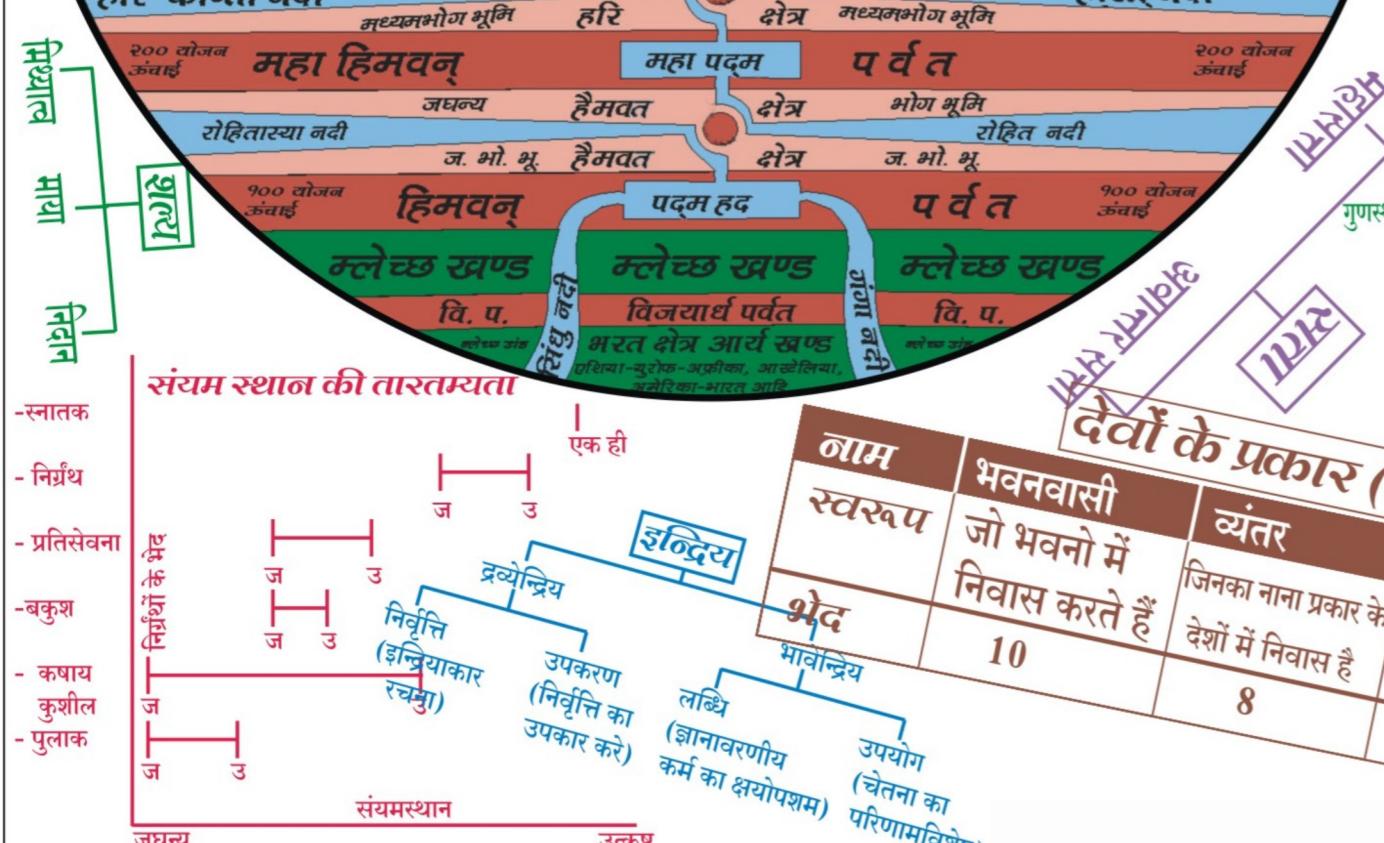
खाचित्र एवं तालिकाओं में



किस गुणात् तक बंध के कौन से कारण होते हैं



जाव वैमानिक
जो ज्योतिमय विमानों
में निवास करते हैं



जीवराज जैन ग्रंथमाला, सोलापुर.
(हिंदी विभाग - पुष्प ५८)



आचार्य उमास्वामी कृत
तत्त्वार्थसूत्र
(स्नेहाचित्र एवं तालिकाओं में)

Tattvartha-Sutra in
Charts & Tables

लेखिका

श्रीमती पूजा-प्रकाश छाबड़ा



-प्रकाशक-

जैन संस्कृति संरक्षक संघ

(जीवराज जैन ग्रन्थमाला)

टी. पी. 4, प्लॉट नं. 56/10, बुधवार पेठ, जूना पुणे नाका, सोलापुर-2
फोन: 0217-2320007, मो. 09421040022

प्रकाशक :- श्री अरविंद रावजी दोशी,
अध्यक्ष, जैन संस्कृति संरक्षक संघ, सोलापुर - 2.

प्रथम संस्करण :	1000	18 / 10 / 2009
द्वितीय संस्करण :	3000	16 / 05 / 2010
तृतीय संस्करण :	4000	14 / 12 / 2010
चतुर्थ संस्करण :	5000	26 / 10 / 2011

वीरसंवत् - २५३८

अर्थ सहयोग :

- श्रीमान राजकुमार अखिलेशकुमार अमीतकुमार शाह बड़नगर वाले, इन्दौर 35000/-
- कुमारी श्रुति एवं स्वाति जैन 'अरिहंत केपिटल', इन्दौर 25000/-
- श्रीमती कीर्ति सिद्धार्थ बड़जात्या 'श्रीकमल', इन्दौर 15000/-
- माणकचंद पारमार्थिक न्यास, गाँधीनगर, इन्दौर 15000/-
- श्रीमान पराग शाह, केलिफोर्निया, अमेरिका 10000/-

प्राप्ति स्थान : • श्रीमान् विमलचन्द छाबड़ा

53, मल्हारगंज, मेनरोड, इन्दौर

फोन: 099260-40137, 097534-14796

• जीवराज जैन ग्रंथमाला, सोलापुर.

लागत मूल्य : 60 रुपए

न्यौछावर राशि : 40 रुपए

मुद्रण स्थल : प्रभात प्रिंटिंग वर्क्स,
487, गुलटेकडी, पुणे. (सर्वाधिकार सुरक्षित)

प्रस्तावना

बाल ब्र. पण्डित श्री रत्नलालजी शास्त्री
इन्द्र भवन, तुकोगंज, इन्दौर

श्री तत्त्वार्थसूत्रजी अपरनाम मोक्षशास्त्रजी वर्तमान में द्वादशांग का सार है। पूर्ववर्ती एवं उत्तरवर्ती आचार्य भगवन्तों की परम्पराओं अर्थात् दोनों श्रुतस्कन्ध परम्पराओं का संगम यानि प्रयाग है। यह ग्रंथ चारों अनुयोगों का नवनीत है। इस ग्रन्थ का एक-एक सूत्र बीजबुद्धि ऋद्धि के समान है। हर एक सूत्र अनेकान्तरूप है। व्याकरण, न्याय, कोष, सिद्धान्त की अपेक्षा आदि से अंत तक अविरोध रूप से है। इस ग्रन्थ पर अनेक आचार्य भगवन्तों व विद्वज्जनों की टीकाएँ व अनुवाद विद्यमान हैं। ‘अत्यबुद्धि भव्यात्माओं को सहज रूप से तत्त्वार्थसूत्र ग्रंथ आत्मसात् हो जाए’ इस पवित्र भावना से प्रेरित होकर एवं अनेकानेक भव्यात्माओं के अतीव आग्रह से श्रीमती पूजाजी एवं प्रकाशजी छाबड़ा (जैन) ने बहुत ही लगन व परिश्रम पूर्वक ‘तत्त्वार्थसूत्र (रेखाचित्र एवं तालिकाओं में)’ को प्रकाशित कराया है। जिसकी सर्वत्र सराहना हुई है तथा अगला संस्करण प्रकाशित करना अनिवार्य हो गया है।

लेखिका श्रीमती पूजा छाबड़ा एवं उनके पति श्री प्रकाश छाबड़ा में ज्ञान एवं वैराग्य का अद्भुत संयोग है। श्री प्रकाश छाबड़ा ने अमेरिका में मास्टर्स ऑफ कम्प्यूटर साइंस की उपाधि प्राप्त कर विश्व की सर्वोच्च कम्पनी ‘माइक्रोसॉफ्ट कॉर्पोरेशन, अमेरिका’ में सॉफ्टवेयर इंजीनियर के रूप में कार्य किया। श्रीमती पूजा छाबड़ा ने भी अमेरिका में सी. पी. ए. (चार्टर्ड अकाउटेण्ट के समकक्ष) की उपाधि प्राप्त कर अमेरिका में प्रोफेशनल अकाउटेण्ट के पद पर कार्य किया। सात वर्षों के अमेरिका प्रवास में भी आपका धार्मिक अध्ययन व अध्यापन चलता रहा।

आत्मकल्याण की भावना से प्रेरित होकर दोनों अमेरिका व लाखों की नौकरी छोड़कर मात्र 31 व 28 वर्ष की अवस्था में निवृत्त जीवन जीने का संकल्प कर भारत वापस आ गए। आप यहाँ अत्यन्त सादगीमय व भौतिक

साधनों से विरत होकर एक आदर्श श्रावक का जीवन यापन कर रहे हैं एवं अनन्त संसार के अभाव के लिए ही अपना समग्र पुरुषार्थ लगाकर आगे बढ़ रहे हैं। अपने पूर्ण समय में आपने गोमटसारजी जीवकाण्ड-कर्मकाण्ड, लब्धिसारजी, क्षणणासारजी, त्रिलोकसारजी, पद्मपुराण, हरिवंशपुराण, अनगर धर्मामृतजी, समयसारजी, प्रवचनसारजी, सर्वार्थसिद्धिजी आदि चारों अनुयोगों के अनेकानेक ग्रंथराजों का क्रमिक एवं गूढ़ अध्ययन किया एवं अध्ययन के साथ-साथ शास्त्र प्रवचन, धार्मिक कक्षाओं में अध्यापन, नई तकनीक (प्रोजेक्टर/कम्प्यूटर) के माध्यम से करणानुयोग के विषय को अत्यंत सरलता से प्रस्तुत कर रहे हैं।

इनके लघुभ्राता श्री विकास-सारिका छाबड़ा भी मात्र 27 वर्ष की उम्र में माइक्रोसॉफ्ट, अमेरिका की नौकरी छोड़कर निवृत्तिमय धार्मिक मार्ग पर उक्त प्रकार से ही चल रहे हैं। पूजा की माताजी श्रीमती जयश्री टोंग्या का भी जीवन धर्म से ओत-प्रोत है। आपके संस्कार पुत्री में परिलक्षित हो रहे हैं।

दोनों प्रकाश एवं पूजा प्रचार-प्रसार से दूर मात्र स्व-पर कल्याण हेतु ही इस मार्ग पर अग्रसर हैं। मेरी मंगल कामना है कि आप सदैव उत्तरोत्तर मोक्षमार्ग में वृद्धि करें। अलमस्तु।

- रत्नलाल जैन

इन्द्र भवन, तुकोगंज, इन्दौर

27/04/2010

प्राक्कथन

श्रीमती पूजा-प्रकाश छाबड़ा, इन्दौर
फोन नं. 99260-40137

आचार्य उमास्वामी कृत तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) के रेखाचित्रों एवं तालिकाओं को पुस्तक के रूप में प्रस्तुत करने के विचार का उद्गम तत्त्वार्थ सूत्र वर्ष के अन्तर्गत कक्षा में पढ़ाने के फलस्वरूप हुआ। वर्तमान में नई पीढ़ी को चार्ट के माध्यम से विषयवस्तु का ग्रहण सरलता से हो जाता है एवं धारणा ज्ञान में शीघ्रता से आ जाता है। इसी बात को ध्यान में रखकर तत्त्वार्थ सूत्र पढ़ाने हेतु ही ये चार्ट तैयार किए गए थे। विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त सरल, संक्षिप्त व विशेष उपयोगी जानकर व इसकी माँग को देखते हुए इसे पुस्तकाकार रूप में प्रस्तुत किया गया था। प्रौढ़ पाठकों को पुस्तक सन्दर्भ के लिए भी उपयोगी साबित हुई है। प्रथम तीन संस्करण के हाथों-हाथ समाप्त होने व अधिक माँग होने से इसका चतुर्थ संस्करण प्रस्तुत किया जा रहा है।

इस पुस्तक में सूत्र एवं सूत्रार्थ सर्वार्थसिद्धि ग्रन्थ से लिये गए हैं। इसके साथ ही पूर्वाचार्यों के कथन को ही रेखाचित्रों के माध्यम से तथा उन्हीं के द्वारा बताए गए लक्षणों को संक्षेप में प्रस्तुत किया है। सूत्रों के क्रम को चार्ट आदि के आग्रह से पूर्ववत् आगे-पीछे रखा गया है। इन्हें तैयार करने में जिन ग्रन्थों का आधार लिया गया है, उनमें तत्त्वार्थसूत्र टीकाएँ सर्वार्थसिद्धि, राजवार्तिक, अर्थप्रकाशिका तथा प्रवचनसार, त्रिलोकसार, गोमटसार, पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, वृहद द्रव्य संग्रह प्रमुख हैं। ‘को न विमुद्यति शास्त्रसमुद्रे’ के अनुसार पुस्तक में त्रुटियाँ होना सम्भव है। अतः सुधी पाठकों से अनुरोध है कि त्रुटियाँ सुधारकर पढ़ें व मुझे भी अवगत करावें, ताकि आगामी संस्करण में उनकी पुनरावृत्ति न होवे। प्रस्तुत पुस्तक को लिखने की प्रेरणा तथा आद्योपांत पूर्ण सहयोग के लिए मैं अपने पति श्री प्रकाश जी छाबड़ा के प्रति विशेष कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। मैं आदरणीय बा. ब्र. पं. श्री रत्नलाल जी शास्त्री की विशेष आभारी हूँ, जिनके सान्निध्य में करणानुयोग के अनेक ग्रन्थों का अभ्यास किया और प्रस्तुत पुस्तक लिखने में समर्थ हुई।

रेखाचित्र एवं तालिकाओं की सूची		
सम्बन्धित सूत्र	विषय	पृष्ठ संख्या
	आचार्य उमास्वामी का परिचय	1
	तत्त्वार्थ सूत्र	1
	सूत्र की विशेषता	2
	ग्रन्थ के नाम की सार्थकता	2
	टीकाएँ	3
	मंगलाचरण	3
	मंगलाचरण की विशेषता	4
प्रथम अध्याय		
	प्रथम अध्याय विषय-वस्तु	4
1	मोक्षमार्ग क्या है?	5
2	सम्यग्दर्शन क्या है?	5
3	सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति के हेतु	6
4	सात तत्त्व	6
5	निक्षेप	7
	पदार्थों को जानने के उपाय	7
6	-संक्षिप्त रुचि शिष्यों के लिए	7
7	-मध्यम रुचि शिष्यों के लिए	8
8	-विस्तार रुचि शिष्यों के लिए	8
9-12	प्रमाण (सम्यग्ज्ञान) के भेद	9
	ज्ञान सम्बन्धी प्रयोजनभूत विचार	10
13	मतिज्ञान के अन्य नाम	10
14	मतिज्ञान की उत्पत्ति के निमित्त	10

15	मतिज्ञान के भेद	11
16-17	पदार्थों के 12 भेद	11
18-19	मतिज्ञान का विषय व 336 भेद	12
	ज्ञान की उत्पत्ति का क्रम	12
20	श्रुतज्ञान के भेद	13
21-22	अवधिज्ञान के भेद	13
22	गुणप्रत्यय अवधिज्ञान के भेद	14
	अन्य प्रकार से अवधिज्ञान के भेद	14
23	मनःपर्ययज्ञान के भेद	14
24	ऋजुमति-विपुलमति मनःपर्ययज्ञान में अंतर	15
25	अवधिज्ञान-मनःपर्ययज्ञान में अंतर	15
26-29	5 ज्ञानों का विषय	16
30	एक जीव के एक साथ कितने ज्ञान हो सकते हैं	17
31-32	मिथ्याज्ञान (कुज्ञान) के भेद	18
33	नय के भेद	19
द्वितीय अध्याय		
	द्वितीय अध्याय विषय-वस्तु	20
1-2	जीव के असाधारण भाव	21
	कर्म की प्रकृतियाँ	22
3	औपशमिक भाव के भेद	23
4	क्षायिक भाव के भेद	23
5	क्षायोपशमिक भाव के भेद	24
	क्षयोपशम का स्वरूप	24
6	औदयिक भाव के भेद	25
7	पारिणामिक भाव के भेद	25
	सम्यक्त्व आदि गुणों में सम्भावित भाव	26

	लक्षणाभास के भेद	26
8	लक्षण के भेद	27
8-9	उपयोग के भेद	27
	उपयोग (अध्यात्म भाषा से 3 प्रकार का)	27
10-11	जीव के भेद	28
12-14, 22-23	संसारी जीवों के भेद	29
	पाँच स्थावरों के प्रत्येक के 4-4 भेद	29
15	पाँच इन्द्रियाँ	30
16-18	इन्द्रिय के भेद	30
19-21	इन्द्रियों और मन के विषय व आकार	31
24	संज्ञा शब्द के अनेक अर्थ	31
25,29-30	विग्रहगति	32
26-28	अनुश्रेणि गति	33
31,33-35	जन्म के भेद	33
	किन जीवों के नियम से कौन-सा जन्म होता है	34
	कर्मभूमिया पंचेन्द्रिय असैनी व सैनी तिर्यक्च के जन्म	34
32	योनि के भेद	35
	किस योनि में कौन जीव जन्म लेता है?	35
	84 लाख योनियाँ	36
39,45-46	शरीर के भेद	37
40-42	तैजस और कार्मण शरीर की विशेषता	38
43	एक साथ एक जीव के कितने शरीर होते हैं	38
44	कार्मण शरीर उपभोग रहित होता है	39
47	वैक्रियिक शरीर के प्रकार	39

48	तैजस शरीर के प्रकार	39
	निःसरण तैजस शरीर के प्रकार	40
49	आहारक शरीर की विशेषता	40
50-52	वेद	41
53	अनपवर्त्य आयु	41
	तृतीय अध्याय	
	तृतीय अध्याय विषय-वस्तु	42
	लोक का विस्तार	43
	त्रस नाड़ी का विस्तार	43
	अधोलोक का विस्तार	44
1	वातवलय	45
1 - 2	नरकों का वर्णन	45
2	बिल	46
6	नारकियों का वर्णन	47
	नरक से निकला हुआ जीव कहाँ उत्पन्न होता है	48
	नरक से निकला जीव क्या नहीं होता है	48
3-5	नारकियों के दुःख	49
	नारकियों द्वारा परस्पर दिए जाने वाले दुःख	50
7-8	मध्य (तिर्यक्) लोक का विस्तार	51
9	जम्बूद्वीप का वर्णन	52
9	सुदर्शन मेरु	52
9	मेरु पर चार वन	52
10	जम्बूद्वीप के 7 क्षेत्र	53
11-13	जम्बूद्वीप के 6 पर्वत/कुलाचल	54

14-19	जम्बूद्वीप के 6 सरोवर	56
20-23	जम्बूद्वीप की 14 नदियाँ	57
24-26,32	भरतादि क्षेत्रों का विस्तार	58
27	काल चक्र परिवर्तन	59
27,29-31	काल चक्र परिवर्तन विशेषता	60
28	अवस्थित भूमियों के काल	61
33-35	अद्वाई द्वीप (मनुष्य क्षेत्र/नर लोक)	62
36	मनुष्यों के भेद	62
	कुभोगभूमि मनुष्य विशेषता	63
37	द्वाईद्वीप में कर्मभूमियाँ एवं भोग भूमियाँ	63
38-39	मनुष्य एवं तिर्यचों की आयु	64
	तिर्यचों की आयु-विशेष	64
	पूर्वांग	65
	पूर्व	65
	3 प्रकार के पत्त्व	65
	सागर	65
	सूत्र से अन्य रचनाएँ व अन्य विषय	65
	तीर्थकरों की गणना	66
	त्रिकाल चौबीसी	66
	तीन लोक के अकृत्रिम चैत्यालय	66
	मध्यलोक के 458 अकृत्रिम चैत्यालय	67
	चतुर्थ अध्याय	
	चतुर्थ अध्याय विषय-वस्तु	68
	ऊर्ध्वलोक का विस्तार	68
1,3-5, 10-12	देवों के प्रकार (निकाय)	70

4	देवों के 10 सामान्य भेद	70
	चार निकाय के देवों का निवास	71
2	भवनत्रिक देवों की लेश्याएँ	72
6	इन्द्रों की व्यवस्था	72
7-9	देवों में प्रवीचार (मैथुन - काम सेवन)	73
13-15	ज्योतिषी देव	74
16-17,23	वैमानिक देवों के भेद	74
18-19	वैमानिक देवों के विमानों का वर्णन	76
22	वैमानिक देवों का वर्णन	77
	वैमानिक देवों की देवांगनाओं का वर्णन	78
29-34,42	वैमानिक देवों की आयु आदि	79
20	वैमानिक देवों में उत्तरोत्तर अधिकता	80
21	वैमानिक देवों में उत्तरोत्तर हीनता	80
24-25	लौकान्तिक देव	81
26	दो भवावतारी	82
	एक भवावतारी	82
27	तिर्यच कौन हैं?	82
	कौन तिर्यच मरकर किस स्वर्ग में उत्पन्न होता है?	83
	कौन मनुष्य मरकर किस स्वर्ग में उत्पन्न होता है?	84
	कौन देव मरकर कहाँ उत्पन्न होते हैं?	85
	त्रेसठ शलाका पुरुषों सम्बन्धी विशेषता	85
28,37-41	भवनत्रिक देवों की आयु आदि	86
35-36	नारकियों की आयु	87
	पंचम अध्याय	
	पंचम अध्याय विषय-वस्तु	88

1-7	छह द्रव्य	89
8-11	द्रव्यों के प्रदेश	91
12-15	द्रव्यों का लोक में अवगाह	92
	संख्यामान-संख्यात, असंख्यात, अनंत	92
16	जीव और पुद्गल के आकाश के अत्यं प्रदेशों में रहने का हेतु	93
17	धर्म और अर्थर्म द्रव्य का उपकार - मुख्य बिन्दु	93
18	आकाश का उपकार - मुख्य बिन्दु	94
19	पुद्गल का उपकार	94
20	पुद्गल का अन्य प्रकार से उपकार	95
21	जीव का उपकार	95
22	काल का उपकार	96
17-22	द्रव्यों का उपकार - सार	96
23-24	पुद्गल का स्वरूप, गुण और पर्यायें	97
24	(1) शब्द	97
24	(2) बंध	98
24	(3) सूक्ष्म	98
24	(4) स्थूल	98
24	(5) संस्थान (आकार)	98
24	(6) भेद (टुकड़े - भंग होना)	99
24	(7) तम (अंधकार)	99
24	(8) छाया (प्रकाश को ढकने वाली)	99
24	(9) आतप	99
24	(10) उद्योत	99
25	पुद्गल के भेद (जाति अपेक्षा)	100
	परमाणु में एक साथ कितनी पर्यायें हो सकती हैं	100

	पुद्गल के अन्य प्रकार से भेद	101
26-28	स्कन्धादि की उत्पत्ति के कारण	101
29-30	द्रव्य का लक्षण	102
	द्रव्य अगर उत्पाद स्वरूप, व्यय स्वरूप, ध्रौव्य स्वरूप या उत्पाद-व्यय रूप ही हो?	102
	द्रव्य-भेद से और अभेद से	103
	सत्ता के भेद	103
31	नित्य का स्वरूप	103
32	स्याद्वाद शैली	104
33	बंध किनका होता है?	105
33-36	परमाणुओं का बंध	105
37	बंध होने पर क्या होता है	105
	पुद्गल बंध से जीव बंध की तुलना	106
38	द्रव्य का अन्य प्रकार से लक्षण	106
38	सामान्य-विशेष गुण	107
38	अन्य प्रकार से गुण के भेद	107
38	सामान्य गुणों का स्वरूप	108
38	पर्याय के भेद	108
39	काल भी द्रव्य है!	109
40	काल के प्रकार	109
	काल द्रव्य की सिद्धि	110
	प्रचय के भेद	110
41	गुण का लक्षण	111
42	परिणाम (भाव) का स्वरूप	111

षष्ठ अध्याय		
	षष्ठ अध्याय विषय-वस्तु	112
	आस्रव के भेद	113
1	योग के भेद	113
1	निमित्त अपेक्षा योग के भेद	113
	योग गुण	113
2	आस्रव का स्वरूप	114
3	योग के निमित्त से आस्रव में भेद	114
4	स्वामी अपेक्षा आस्रव के भेद	115
5	साम्परायिक आस्रव-39 भेद	116
5	25 क्रियाएँ	117
5	5 विभिन्न क्रियाएँ	117
5	5 हिंसा भाव की मुख्यतारूप क्रियाएँ	117
5	5 इन्द्रियों के भोग बढ़ाने सम्बन्धी क्रियाएँ	117
5	5 धर्माचरण में दोष कारक क्रियाएँ	118
5	5 धर्म-धारण से विमुख करने वाली क्रियाएँ	118
6	आस्रव में हीनता-अधिकता के कारण	118
7	अधिकरण के प्रकार	119
8	जीव अधिकरण के भेद	119
9	अजीव अधिकरण के भेद	120
10-27	आठ कर्मों में प्रत्येक के आस्रव के कारण	121
10	ज्ञानावरण - दर्शनावरण के आस्रव के कारण	121
11	असाता वेदनीय के आस्रव के कारण	121
12	साता वेदनीय के आस्रव के कारण	122
13-14	मोहनीय के आस्रव के कारण	123
15-21	आयु के आस्रव के कारण	125

नामकर्म के आस्रव के कारण		
22	योग वक्रता एवं विसंवादन में अन्तर	126
24	तीर्थकर नामकर्म के आस्रव के कारणभूत सोलहकारण भावना	127
25-26	गोत्र के आस्रव के कारण	128
-	किस जीव के कौन-से गोत्र का उदय होता है	128
27	अन्तराय के आस्रव के कारण	129
सप्तम अध्याय		
सप्तम अध्याय विषय-वस्तु		
1	ब्रत के भेद	131
2	ब्रत के प्रकार	131
3	पाँच ब्रतों की पाँच-पाँच भावनाएँ	132
4	अहिंसा ब्रत की पाँच भावनाएँ	132
5	सत्य ब्रत की पाँच भावनाएँ	133
6	अचौर्य ब्रत की पाँच भावनाएँ	133
7	ब्रह्मचर्य ब्रत की पाँच भावनाएँ	134
8	परिग्रह त्याग ब्रत की पाँच भावनाएँ	134
9-10	हिंसादि से विरक्त होने की भावना	135
11	ब्रती के चिन्तन योग्य अन्य भावनाएँ	136
12	ब्रती को वैराग्य बढ़ाने के लिए भावनाएँ	136
13-17	पाँच पाप	137
13	हिंसा के भेद	137
13	हिंसा के अन्य प्रकार से भेद	137
13	पर जीव के घात रूप हिंसा के प्रकार	138
13	हिंसा के त्याग के लिए जानें	138
13	प्रमाद के भेद	138

13	प्राण के भेद	139
14	असत्य के भेद	139
16	अब्रह्म के भेद	140
17	परिग्रह के भेद	140
18	ब्रती की विशेषता	141
	शत्य के भेद	141
19	ब्रती के भेद	141
	गृहस्थ के ब्रत	142
20	अणुब्रत के भेद	142
	7 शीलब्रत के भेद	143
	अनर्थदण्ड के भेद	143
	उपभोग-परिभोग का स्वरूप	144
	अतिथि संविभाग के योग्य सामग्री	144
22	सल्लेखना का स्वरूप	144
23	सम्यग्दर्शन के अतिचार	145
	ब्रतभंग के लिए सहायक परिणाम	145
	अतिचार-अनाचार में अन्तर	146
24-29	ब्रतों के पाँच-पाँच अतिचार	146
25	अहिंसाणुब्रत के अतिचार	146
26	सत्याणुब्रत के अतिचार	147
27	अचौर्याणुब्रत के अतिचार	147
28	ब्रह्मचर्याणुब्रत के अतिचार	148
29	परिग्रह परिमाणाणुब्रत के अतिचार	148
30-32	गुणब्रत के अतिचार	149
30	दिग्विरति के अतिचार	149
31	देशविरति के अतिचार	149

32	अनर्थदण्डविरति के अतिचार	150
33-36	शिक्षाब्रत के अतिचार	150
33	सामायिक ब्रत के अतिचार	150
34	प्रोषधोपवास ब्रत के अतिचार	151
35	उपभोग-परिभोग परिमाण ब्रत के अतिचार	151
36	अतिथि संविभाग ब्रत के अतिचार	152
37	सल्लेखना के अतिचार	152
38	दान का स्वरूप	153
39	दान के फल में विशेषता के कारण	153
39	विधि विशेष	154
	दाता के सात गुण	154
	दान के प्रकार	154
आठम अध्याय		
	अष्टम अध्याय विषय-वस्तु	155
1	बंध के कारण	155
	योग के भेद	156
	किस गुणस्थान तक बंध के कौन - से कारण होते हैं?	156
2	बंध क्या है?	157
	कर्म बंध चक्र	157
	द्रव्य कर्म-भाव कर्म निमित्त-उपादान	158
3	बंध के भेद	158
	कर्म के भेद	159
4-5	प्रकृति बंध (आठ मूल कर्म)	160
	अनुजीवी प्रतिजीवी गुण	161
6	ज्ञानावरण कर्म के भेद	161
7	दर्शनावरण कर्म के भेद	162

	दर्शन के भेद	163
	दर्शन - ज्ञान का व्यापार	163
	मनः पर्ययज्ञान की उत्पत्ति का क्रम	163
8	वेदनीय कर्म के भेद	164
	आत्मा का सुख गुण	164
9	मोहनीय कर्म के भेद	165
	कषायों के उत्कृष्ट-जघन्य स्थान के वृष्टांत	166
10	आयु कर्म के भेद	166
11	नाम कर्म के भेद	167
11	नाम कर्म की 14 पिण्ड प्रकृतियाँ	168
11	शरीर, बंधन, संघात में अन्तर	169
11	संस्थान के भेद	169
11	संहनन के भेद	169
	किस संहनन सहित मरकर जीव कहाँ जन्म ले सकता है?	170
	किस जीव के कौन-सा संहनन होता है?	170
11	नाम कर्म की 8 प्रत्येक प्रकृतियाँ	171
11	आतप, उद्योत, उष्ण नामकर्म में अन्तर	171
11	नाम कर्म के 10 जोड़े	172
11	पर्याप्ति का स्वरूप व भेद	172
11	अपर्याप्ति के प्रकार	173
12	गोत्र कर्म के भेद	173
13	अंतराय कर्म के भेद	173
14-20	मूल कर्म जघन्य उत्कृष्ट स्थिति बंध व आबाधा	175
	शेष जीवों की उत्कृष्ट कर्म स्थिति बंध	176
	उत्तर प्रकृति उत्कृष्ट स्थिति बंध	176

21-23	अनुभाग बंध क्या है?	178
	कैसे परिणामों से कैसा रस (अनुभाग) बंध होता है?	178
	अनुभाग की प्रवृत्ति	178
	फल दान शक्ति की तारतम्यता	179
	निर्जरा के प्रकार	179
24	प्रदेश बंध	180
25-26	पुण्य-पाप प्रकृति विभाजन	180
25	पुण्य प्रकृतियाँ	181
26	पाप प्रकृतियाँ	181
	घातिया कर्म की सर्वघाति-देशघाति प्रकृतियाँ	182
नवम अध्याय		
	नवम अध्याय विषय-वस्तु	183
1	संवर के भेद	184
	गुणस्थान का स्वरूप	185
	किन आस्व के कारणों के अभाव में किन प्रकृतियों का संवर होता है?	186
2	संवर के कारण	188
	निर्जरा के भेद	188
3	निर्जरा का कारण	188
4-18	संवर प्रकरण	189
4	गुप्ति के भेद	189
5	समिति के भेद	189
6	धर्म के भेद	190
7	अनुप्रेक्षा (भावना) के भेद	191
8	परीषह क्यों सहना?	192
9	22 परीषह	192

10-12	कहाँ कौन - सा परीषह सम्भव है?	193
13-16	किस कर्म के उदय से कौन सा - परीषह होता है?	194
17	एक साथ एक जीव को कितने परीषह सम्भव हैं?	195
18	चारित्र के भेद	195
	परिहार विशुद्धि चारित्र की विशेषता	196
	सामायिकों में अन्तर	196
19-45	निर्जरा प्रकरण	197
	तप के भेद	197
19	बाह्य तप के भेद	198
	4 प्रकार का आहार	198
	6 प्रकार के रस	198
20-21	आभ्यंतर तप के भेद	199
22	प्रायश्चित्त तप के भेद	200
23	विनय तप के भेद	200
24	वैयावृत्त्य तप के विषय	201
	4 प्रकार का संघ	201
25	स्वाध्याय तप के भेद	202
26	व्युत्सर्ग तप के भेद	202
27	ध्यान क्या है?	202
	अंतर्मुहूर्त का स्वरूप	203
28-29	ध्यान के भेद	203
29-35	आर्त-रौद्र ध्यान में अन्तर	205
	निदान शल्य-निदान आर्तध्यान में अन्तर	205
36	धर्म्य ध्यान के भेद	206
43-44	वितर्क व वीचार का स्वरूप	207
37-42	शुक्लध्यान के भेद	208

45	गुणश्रेणी निर्जरा में विशेषता के 10 स्थान	209
46-47	निर्गम्य के भेद	210
47	संयम स्थान की तारतम्यता	212
	दसवाँ अध्याय	
	दसवाँ अध्याय विषय-वस्तु	213
	मोक्ष के भेद	213
1	मोक्ष के पहले केवलज्ञान की उत्पत्ति	214
2	मोक्ष होने के हेतु	214
	मोक्ष होने पर किन कर्मों का अभाव (क्षय) होता है?	215
3-4	मोक्ष होने पर किन भावों का अभाव और सन्दाव रहता है?	217
	3 प्रकार के कर्मों के नाश होने पर मोक्ष होता है	217
5-8	मोक्ष होने के बाद आत्मा ऊपर जाता है। हेतु और वृद्धिंत	218
	मोक्ष होने पर सिद्धों (मुक्त जीवों) का निवास	219
	अष्टम पृथिवी - ईषत् प्राग्भार	219
	सिद्ध शिला	219
	सिद्धों का निवास - सिद्ध क्षेत्र	219
9	मुक्त जीवों में भेद नहीं	220
9	मुक्त जीवों में कथंचित् भेद	220
9	अत्प-बहुत्व(सिद्ध होने वाले जीवों की संख्या की तुलना)	222
	परिशिष्ट - 1	
	सभी कर्मों के आस्त्र के विशेष कारण	223
	परिशिष्ट - 2 (पाठान्तर)	229
	सम्मतियाँ	231

तत्त्वार्थसूत्र

आचार्य उमास्वामी

- * कम से कम लिखकर अधिक से अधिक प्रसिद्धि पाने वाले आचार्य हैं।
- * कुन्दकुन्द आचार्य के पट्ट शिष्य थे।
- * विक्रम की प्रथम शताब्दी का अंत एवं द्वितीय का पूर्वार्थ आपका समय है।
- * उमास्वाति एवं गृद्धपिच्छाचार्य भी आपके अन्य नाम हैं।
- * प्राचीन जैनाचार्य अपने बारे में कुछ नहीं लिखते थे। अतएव आपके जीवन परिचय से जैन समाज अपरिचित है।

तत्त्वार्थसूत्र

- * यह संस्कृत भाषा का सर्वप्रथम जैन ग्रंथ है।
- * समग्र जैन समाज में प्रामाणिकता प्राप्त ग्रंथ है।
- * जो महत्त्व वैदिकों में गीता, ईसाइयों में बाईबल तथा मुसलमानों में कुराना का है; वही जैनदर्शन में तत्त्वार्थसूत्र का है।
- * जिनागम के लगभग सम्पूर्ण विषयों की ‘सूची’ इस ग्रंथ में सूश्रावप में उपलब्ध है। अतः इसे सूची ग्रन्थ भी कहा जा सकता है।
- * सच्चे शास्त्र का उपलक्षण या प्रतिनिधि ग्रन्थ है।
- * सारे भारतवर्ष के जैन परीक्षा बोर्डों के पाठ्यक्रम में और जैन विद्यालयों में निर्धारित है।
- * इसमें कुल 357 सूत्र हैं।

सूत्र

- * तत्त्वार्थसूत्र जैन साहित्य का आदि संस्कृत सूत्र-ग्रन्थ है।
- * व्याकरण के अनुसार जो कम से कम शब्दों में पूर्ण अर्थ बता दे, उसे “सूत्र” कहते हैं।
- * छन्द में गद्य की अपेक्षा कम शब्दों में अधिक विषय एवं सूत्र में छन्द की अपेक्षा कम से कम शब्दों में अधिक विषय समाहित होता है।
- * सूत्र अर्थात् गागर में सागर भरना।
- * सूत्र की रचना में आधी मात्रा बच जाने पर सूत्रकार पुत्रोत्सव समान सुख मानते हैं।
- * सूत्रों का निर्माण वैज्ञानिक पद्धति से होता है।
- * सूत्रों की रचना एवं क्रम युक्तिसंगत होता है।
- * सूत्र = धागा, साधक, संकेत।
- * जैसे सूत्र में पिरोई सुई गुमती नहीं, वैसे ही सूत्र का पाठी दुर्गति में भ्रमता नहीं है।

नाम की सार्थकता

- * यह ग्रन्थ सूत्र रूप में है, इसलिए इसका “सूत्र” नाम सार्थक है।
- * “तत्त्वार्थ” नाम सार्थक है, क्योंकि इसमें 7 तत्त्वों का वर्णन है, जो कि 10 अध्यायों में निम्न प्रकार से है :-

अध्याय	तत्त्व
प्रारंभ के चार अध्याय	जीव तत्त्व
पाँचवाँ अध्याय	अजीव तत्त्व
छठवाँ एवं सातवाँ अध्याय	आस्रव तत्त्व
आठवाँ अध्याय	बंध तत्त्व
नौवाँ अध्याय	संवरव व निर्जरा तत्त्व
दसवाँ अध्याय	मोक्ष तत्त्व

- * अपर नाम मोक्षशास्त्र, क्योंकि प्रारंभ मोक्षमार्ग से एवं अंत में भी मोक्ष का वर्णन है।

टीकाएँ

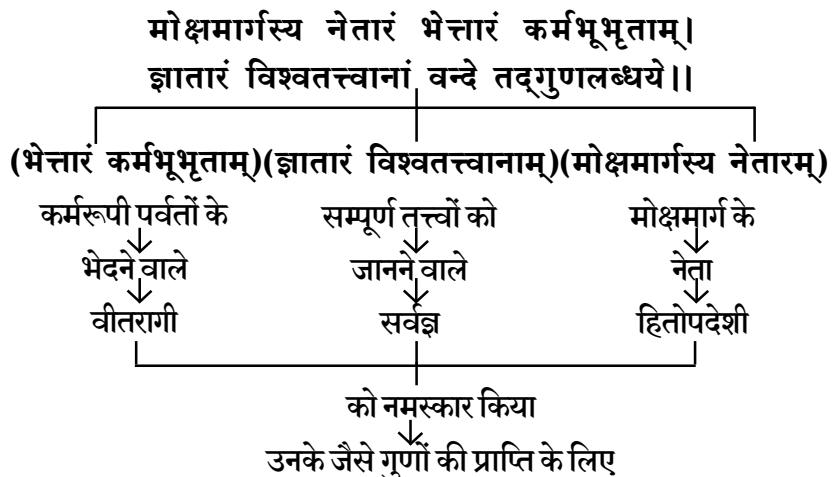
* दिगम्बर एवं श्वेताम्बर दोनों सम्प्रदायों में संस्कृत एवं हिन्दी की टीकाएँ और भाष्य उपलब्ध हैं। कुछ टीकाओं के नाम निम्नलिखित हैं :-

आचार्य का नाम	टीका का नाम
आचार्य पूज्यपाद	सर्वार्थसिद्धि
आचार्य अकलंकदेव	तत्त्वार्थ राजवार्तिक
आचार्य विद्यानन्दि	तत्त्वार्थ श्लोकवार्तिक
आचार्य समन्तभद्र	गंधहस्ति महाभाष्य (अप्राप्य)
आचार्य श्रुतसागर	तत्त्वार्थवृत्ति
* द्वृढारी भाषा के प्राचीन विद्वान् - पं. सदासुखदासजी कासलीवाल	अर्थप्रकाशिका

- * आधुनिक टीकाकार विद्वान् -

- पं. फूलचंदजी सिद्धान्ताचार्य
- पं. कैलाशचन्दजी सिद्धान्ताचार्य
- पं. पन्नालालजी साहित्याचार्य
- पं. रामजी भाई दोशी आदि

मंगलाचरण



भावार्थ - जो मोक्षमार्ग के नेता हैं, कर्मरूपी पर्वतों के भेदनेवाले हैं और विश्वतत्त्वों के ज्ञाता हैं, उनकी मैं उन समान गुणों की प्राप्ति के लिए द्रव्य और भाव उभयरूप से बन्दना करता हूँ।

मंगलाचरण की विशेषता

तत्त्वार्थसूत्र के मंगलाचरण पर :-

- * आचार्य समन्तभद्र स्वामी ने 115 श्लोकों में देवागम स्तोत्र बनाया, जो कि गंधहस्ति महाभाष्य (तत्त्वार्थसूत्र टीका) का मंगलाचरण है।
- * देवागम स्तोत्र पर 800 श्लोकों में अष्टशती भट्ट अकलंक देव ने बनायी।
- * अष्टशती पर 8000 श्लोकों में अष्टसहस्री आचार्य विद्यानंदि ने बनायी।

प्रथम अध्याय

विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
मोक्षमार्ग का स्वरूप	1	1	5
सम्यग्दर्शन	2-4	3	5-6
पदार्थों के जानने के उपाय	5-8	4	7-8
सम्यग्ज्ञान-प्रमाण	9-12	4	9
मतिज्ञान	13-19	7	10-12
श्रुतज्ञान	20	1	13
अवधिज्ञान और मनःपर्यय ज्ञान	21-25	5	13-15
पाँच ज्ञानों का विषय	26-29	4	16
एक साथ कितने ज्ञान सम्भव	30	1	17
मिथ्याज्ञान	31-32	2	18
नय	33	1	19
	कुल	33	

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः॥1॥

सूत्रार्थ - सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र - ये तीनों मिलकर मोक्ष का मार्ग है॥1॥

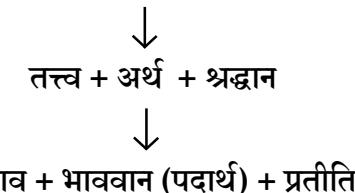
मोक्षमार्ग क्या है

	सम्यग्दर्शन	सम्यग्ज्ञान	सम्यक्चारित्र
व्यवहार स्वरूप	सात तत्त्वों का सही श्रद्धान	सात तत्त्वों का सही ज्ञान	अशुभ से निवृत्ति, शुभ में प्रवृत्ति
निश्चय स्वरूप	परद्रव्यों से भिन्न आत्मा की रूचि	परद्रव्यों से भिन्न आत्मा का जानना	परद्रव्यों से भिन्न आत्मा में लीनता

तत्त्वार्थश्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्॥2॥

सूत्रार्थ - अपने-अपने स्वरूप के अनुसार पदार्थों का जो श्रद्धान होता है, वह सम्यग्दर्शन है॥2॥

सम्यग्दर्शन



तन्निसर्गादधिगमाद्वा॥3॥

सूत्रार्थ - वह (सम्यग्दर्शन) निसर्ग से और अधिगम से उत्पन्न होता है॥3॥

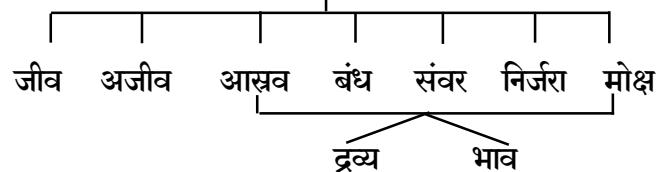
सम्यन्दर्शन की उत्पत्ति के हेतु

निसर्गज	अधिगमज
* स्वभाव से	* पर के उपदेश से
उदाहरण * कॉटे की नोंक (कॉटे की नोंक स्वाभाविक होती है)	* बाण की धार (बाण की धार को बनाने के लिए किसी की आवश्यकता होती है)

जीवाजीवास्त्रवबंधसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्त्वम् ॥4॥

सूत्रार्थ - जीव, अजीव, आस्त्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा और मोक्ष ये तत्त्व हैं ॥ 4॥

सात तत्त्व



द्रव्य

कर्मों	का आना	- आस्त्रव
	का आत्मा से सम्बन्ध होना	- बन्ध
	का आना रुकना	- संवर
	का एकदेश खिरना	- निर्जरा
	का सम्पूर्ण नाश	- मोक्ष

भाव

शुभ - अशुभ भावों	की उत्पत्ति - आस्त्रव
	का बने रहना - बन्ध
	उत्पत्ति - संवर
	वृद्धि - निर्जरा
शुद्ध भावों की	पूर्णता - मोक्ष

नामस्थापनाद्रव्यभावतस्तत्त्वासः ॥5॥

सूत्रार्थ - नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव रूप से उनका अर्थात् सम्यन्दर्शन आदि और जीव आदि का न्यास अर्थात् निक्षेप होता है ॥5॥

निक्षेप

(लोक अथवा आगम में शब्द व्यवहार करने की पद्धति)

	नाम	स्थापना	द्रव्य	भाव
स्वरूप	जिस पदार्थ में जो गुण नहीं, उसको उस नाम से कहना	“वह यह है” इस प्रकार बुद्धि से अभेद करना	जो गुणों को प्राप्त हुआ था अथवा गुणों को प्राप्त होगा	वर्तमान पर्याय संयुक्त वस्तु
उदाहरण	वीरता न होने पर भी महावीर नाम रखना	महावीर की प्रतिमा को महावीर कहना	राजकुमार वर्द्धमान को 'महावीर' 'भगवान' 'महावीर' कहना	अनंत चतुष्य युक्त को 'भगवान' 'महावीर' कहना

प्रमाणनयैरधिगमः ॥6॥

सूत्रार्थ - प्रमाण और नयों से पदार्थों का ज्ञान होता है ॥6॥

संक्षिप्त रुचि शिष्यों के लिए -

पदार्थों को जानने के उपाय

प्रमाण	नय
* सच्चा ज्ञान	* श्रुत ज्ञान का अवयव (अंश)
* पदार्थ को सर्वदेश ग्रहण करता है।	* पदार्थ का एकदेश ग्रहण करता है।

निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरणस्थितिविधानतः॥७॥

सूत्रार्थ - निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति और विधान से सम्बन्धित आदि विषयों का ज्ञान होता है॥७॥

मध्यम रुचि शिष्यों के लिए -

पदार्थों को जानने के उपाय

निर्देश	स्वामी	साधन	अधिकरण	स्थिति	विधान
(स्वरूप)	(मालिक)	(उत्पत्ति का कारण)	(आधार)	(काल)	(भेद)

सत्संख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभावात्यबहुत्वैश्च॥८॥

सूत्रार्थ - सत्, संख्या, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव और अत्यबहुत्व से भी सम्बन्धित आदि विषयों का ज्ञान होता है॥८॥

विस्तार रुचि शिष्यों के लिए -

पदार्थों को जानने के उपाय

सत् (अस्तित्व)	संख्या (गिनती)	क्षेत्र (वर्तमान निवास)	स्पर्शन (तीन कालों में विचरण क्षेत्र)	काल (अवधि)	अंतर (विरह काल)	भाव (ज्यादा की तुलना करना)	अत्यबहुत्व
-------------------	-------------------	-------------------------------	--	---------------	-----------------------	--	------------

मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ज्ञानम्॥९॥

सूत्रार्थ - मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञान - ये पाँच ज्ञान हैं॥९॥

तत्प्रमाणे॥१०॥

सूत्रार्थ - वह पाँचों प्रकार का ज्ञान दो प्रमाण रूप है॥१०॥

आद्ये परोक्षम्॥११॥

सूत्रार्थ - प्रथम दो ज्ञान परोक्ष प्रमाण हैं॥११॥

प्रत्यक्षमन्यत्॥१२॥

सूत्रार्थ - शेष सब ज्ञान प्रत्यक्ष प्रमाण हैं॥१२॥

प्रमाण (सम्यन्दिनान)

परोक्ष

(इन्द्रिय और मन की सहायता के द्वारा पदार्थों को जानना)

मति

प्रत्यक्ष

(बिना किसी की सहायता के केवल आत्मा के द्वारा पदार्थों को स्पष्ट जानना)

श्रुत

विकल

(मर्यादित)

सकल
(सम्पूर्ण)

अवधि

मनःपर्यय

केवलज्ञान

ज्ञान सम्बन्धी प्रयोजनभूत विचार

मति-श्रुत ज्ञान	केवलज्ञान
1. हमारा वर्तमान प्रकट ज्ञान	1. हमारा स्वभाव
2. पराधीन	2. स्वाधीन
3. क्रमिक - इन्द्रियों द्वारा पदार्थों को क्रम से जानता है	3. युगपत् - सम्पूर्ण पदार्थों को इन्द्रियबिना एकसाथ जानता है
4. क्षणिक - क्षायोपशमिक होने से क्षणिक है	4. शाश्वत - क्षायिक होने से शाश्वत रहता है
5. घटता-बढ़ता है	5. एक जैसा रहता है
6. इन्द्रियज ज्ञान है	6. अतीन्द्रियज ज्ञान है

मति: स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम्॥13॥

सूत्रार्थ - मति, स्मृति, संज्ञा, चिन्ता और अभिनिबोध - ये पर्यायवाची नाम हैं॥13॥

मतिज्ञान के अन्य नाम

मति	स्मृति	संज्ञा	चिन्ता	अभिनिबोध
(इन्द्रिय और मन की सहायता)	(स्मरण) (जोड़रूप ज्ञान)	(तर्क-व्याप्ति)	(अनुमान)	

तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम्॥14॥

सूत्रार्थ - वह (मतिज्ञान) इन्द्रिय और मन के निमित्त से होता है॥14॥

मतिज्ञान की उत्पत्ति

5 इन्द्रिय	मन
इन्द्रिय	अनिन्द्रिय/नो इन्द्रिय
(आत्मा की पहचान के चिह्न)	(किंचित् इन्द्रिय)

अवग्रहेहावायधारणा:॥15॥

सूत्रार्थ - अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा - ये मतिज्ञान के चार भेद हैं॥15॥

मतिज्ञान के भेद

स्वरूप	अवग्रह	ईहा	अवाय	धारणा
स्वरूप जानना	सर्वप्रथम	इच्छा- अभिलाषा	निर्णय	भूलना नहीं
कालांतर में		संशय-विस्मरण हो जाता है	संशय तो नहीं, पर विस्मरण होता है	न संशय, न विस्मरण होता है

बहुबहुविधक्षिप्रानि:सृतानुकृतधूवाणां सेतराणाम्॥16॥

सूत्रार्थ - सेतर (प्रतिपक्षसहित) बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिःसृत, अनुकृत और धूव के अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा रूप मतिज्ञान होते हैं॥16॥

अर्थस्य॥17॥

सूत्रार्थ - अर्थ (वस्तु के) अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा - ये चारों मतिज्ञान होते हैं॥17॥

पदार्थों के भेद

बहु (1)	बहु विध(2)	क्षिप्र(3)	अनिःसृत(4)	अनुकृत(5)	धूव(6)
(बहुत पदार्थों के पदार्थ)	(बहुत प्रकार के पदार्थ)	(शीघ्र)	(गूढ़)	(बिना (अचल/बहुत कहा) काल स्थायी)	
अत्य(7)	एक विध(8)	अक्षिप्र(9)	निःसृत(10)	उक्त(11)	अधूव(12)
(अत्य पदार्थों के पदार्थ)	(एक प्रकार मंद)	(प्रकट)	(बताया (चंचल/हुआ) विनाशीक)		

व्यञ्जनस्यावग्रहः॥१८॥

सूत्रार्थ - व्यंजन का अवग्रह ही होता है॥१८॥

न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम्॥१९॥

सूत्रार्थ - चक्षु और मन से व्यंजनावग्रह नहीं होता॥१९॥

मतिज्ञान का विषय व ३३६ भेद

व्यंजन(अप्रकट-अव्यक्त)	अर्थ(प्रकट-व्यक्त)	
सिर्फ अवग्रह	अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा	→ 4
नेत्र एवं मन के अलावा $\times 4$	पाँचों इन्द्रियों एवं मन से	$\times 6$
शेष 4 इन्द्रियों से		
12 प्रकार के पदार्थ $\times 12$	12 प्रकार के पदार्थ	$\times 12$
कुल = <u><u>48</u></u>	+ <u><u>288</u></u>	= <u><u>336</u></u>

ज्ञान की उत्पत्ति का क्रम

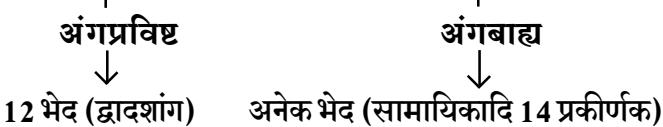
चक्षु को छोड़कर शेष चार इन्द्रियाँ	अचक्षुदर्शन → व्यञ्जनावग्रह → अर्थावग्रह → ईहा → अवाय → धारणा
चक्षु इन्द्रिय	चक्षुदर्शन → अर्थावग्रह → ईहा → अवाय → धारणा
मन	अचक्षु दर्शन → अर्थावग्रह → ईहा → अवाय → धारणा

श्रुतं मतिपूर्व द्व्यनेकद्वादशभेदम्॥२०॥

सूत्रार्थ - श्रुतज्ञान मतिज्ञान पूर्वक होता है। वह दो प्रकार का, अनेक प्रकार का और बाहर प्रकार का है॥२०॥

श्रुतज्ञान

(मतिज्ञान से जाने हुए पदार्थ का अवलम्बन कर अन्य पदार्थ का ज्ञान)



भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम्॥२१॥

सूत्रार्थ - भवप्रत्यय अवधिज्ञान देव और नारकियों के होता है॥२१॥

क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम्॥२२॥

सूत्रार्थ - क्षयोपशम निमित्तक अवधिज्ञान छह प्रकार का है, जो शेष अर्थात् तिर्यचों और मनुष्यों के होता है॥२२॥

अवधिज्ञान

(द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा लिये रूपी पदार्थों को स्पष्ट जा नना)

	भव प्रत्यय	गुण प्रत्यय(क्षयोपशम निमित्तिक)
स्वरूप	जिसके होने में भव ही कारण हो	जिसके होने में सम्यग्दर्शनादि कारण हो
स्वामी	सर्व देव, नारकी, तीर्थकर	मनुष्य, तिर्यच

गुणप्रत्यय

अनुगामी अननुगामी वर्धमान हीयमान अवस्थित अनवस्थित
 (अन्य क्षेत्र/ (अन्यक्षेत्र/ (बढ़ता (घटता (न घटे, (घटता,
 भव में साथ भव में साथ हुआ) हुआ) न बढ़े) बढ़ता रहे)
 जाए) न जाए)

अन्य प्रकार से अवधिज्ञान के भेद



परमावधि और सर्वावधि के स्वामी नियम से उसी भव में मोक्ष जाते हैं।

ऋजुविपुलमति मनःपर्ययः॥२३॥

सूत्रार्थ - ऋजुमति और विपुलमति मनःपर्ययज्ञान हैं॥२३॥

विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः॥२४॥

सूत्रार्थ - विशुद्धि और अप्रतिपात की अपेक्षा इन दोनों में अन्तर है॥२४॥

मनःपर्ययज्ञान

(जो दूसरों के मन में स्थित रूपी पदार्थों को स्पष्ट जाने)

ऋजुमति

* सरल को जाने

विपुलमति

* सरल - कुटिल दोनों को जाने

ऋजुमति - विपुलमति में अंतर

ऋजुमति	विपुलमति
चिन्तित पदार्थ को जानता है	चिन्तित, अचिन्तित, अर्धचिन्तित को जानता है
आत्मा की कम विशुद्धता होती है	अधिक विशुद्धता होती है
संयम परिणामों में	गिरावट नहीं हो सकती है
गिरावट हो सकती है (प्रतिपाती)	(अप्रतिपाती)
उसी भव में मोक्ष जाने का नियम नहीं है	नियम से उसी भव में मोक्ष जाते हैं

विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्ययोः॥२५॥

सूत्रार्थ - विशुद्धि, क्षेत्र, स्वामी और विषय की अपेक्षा अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञान में भेद है॥२५॥

अवधि-मनःपर्यय ज्ञान में अंतर

	अवधिज्ञान	मनःपर्ययज्ञान
विशुद्धि -	कम विशुद्ध	अधिक विशुद्ध
क्षेत्र		
उत्पत्ति क्षेत्र	त्रस नाड़ी	मनुष्य लोक
विषय क्षेत्र	समस्त लोक	45 लाख योजन का घनप्रतर रूप क्षेत्र
स्वामी	चारों गति के सैनी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीव	-कर्मभूमि के गर्भज मनुष्यों को एवं -जो संयमी हो एवं -जो वर्धमान चारित्र सहित हो एवं -जिसके 7 ऋद्धियों में से कम से कम 1 ऋद्धि हो
विषय	परमाणु तक	अवधिज्ञान के विषय का अनंतवाँ भाग (मन के विकल्प ज्यादा सूक्ष्म होते हैं)

मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु॥२६॥

सूत्रार्थ - मतिज्ञान और श्रुतज्ञान की प्रवृत्ति कुछ पर्यायों से युक्त सब द्रव्यों में होती है॥२६॥

रूपिष्ववधे:॥२७॥

सूत्रार्थ - अवधिज्ञान की प्रवृत्ति रूपी पदार्थों में होती है॥२७॥

तदनन्तभागं मनःपर्ययस्य॥२८॥

सूत्रार्थ - मनःपर्ययज्ञान की प्रवृत्ति अवधिज्ञान के विषय के अनन्तवें भाग । में होती है॥२८॥

सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य॥२९॥

सूत्रार्थ - केवलज्ञान की प्रवृत्ति सब द्रव्य और उनकी सब पर्यायों में होती है॥२९॥

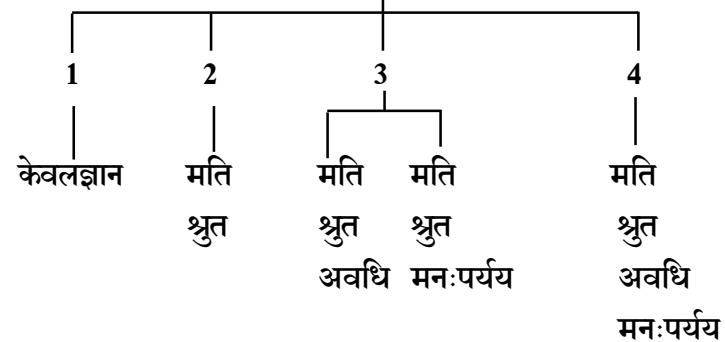
५ ज्ञानों का विषय

	मति-श्रुत	अवधि	मनःपर्यय	केवल
द्रव्य	सर्व द्रव्य	रूपी द्रव्य * पुद्गल * संसारी जीव	रूपी द्रव्य	सर्व द्रव्य
पर्याय	कुछ पर्यायें	कुछ पर्यायें	कुछ पर्यायें (अवधि का अनंतवाँ भाग)	सर्व पर्यायें

एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः॥३०॥

सूत्रार्थ - एक आत्मा में एक साथ एक से लेकर चार ज्ञान तक भजना से होते हैं॥३०॥

एक जीव के एक साथ कितने ज्ञान

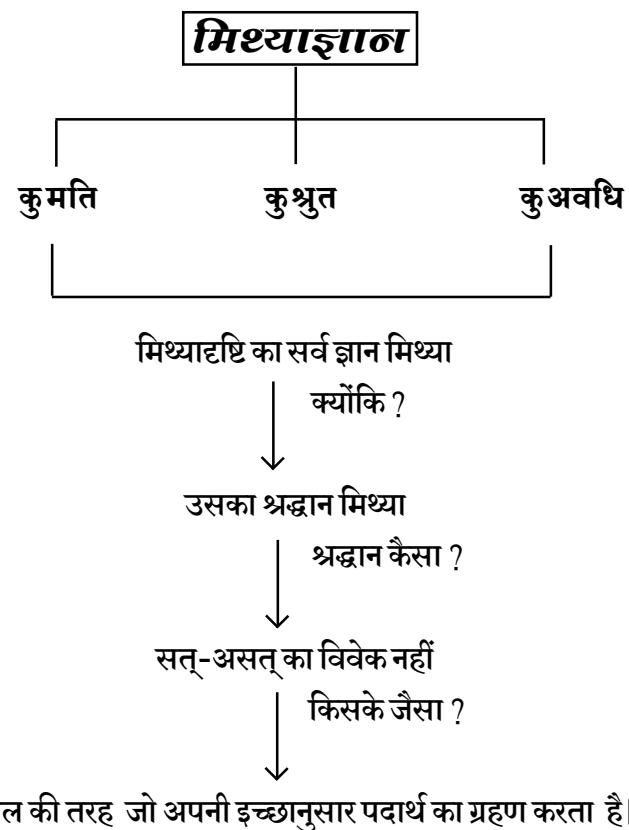


मतिश्रुतावध्यो विपर्ययश्च॥३१॥

सूत्रार्थ - मति, श्रुत और अवधि - ये तीन विपर्यय भी हैं॥३१॥

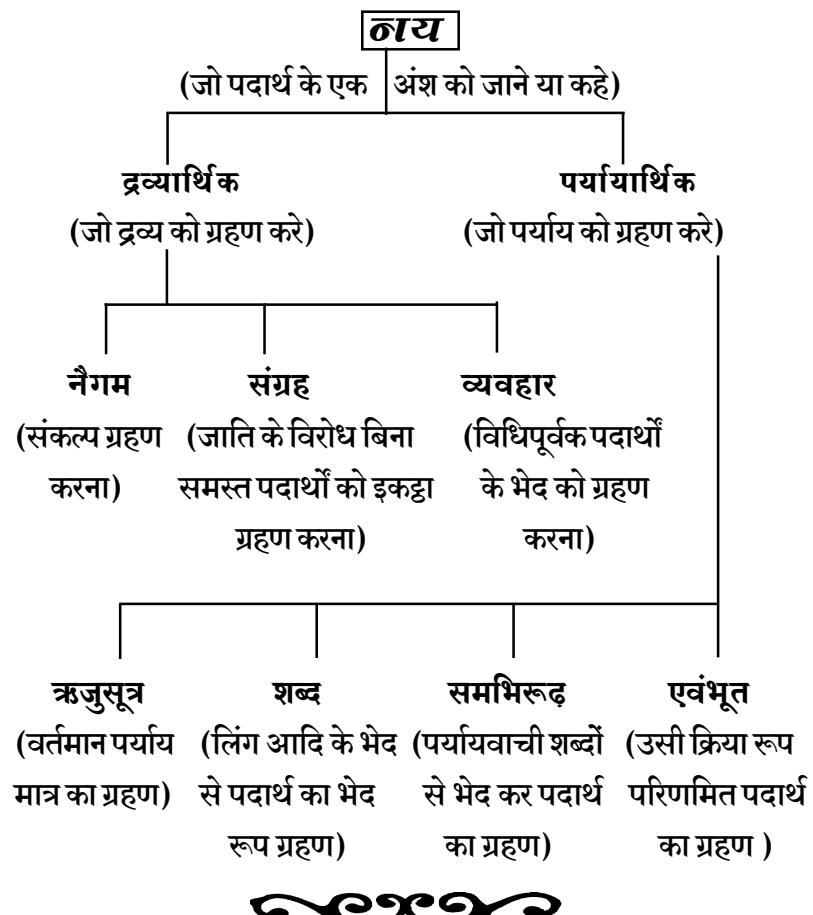
सदसतोरविशेषाद्यहच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत्॥३२॥

सूत्रार्थ - वास्तविक और अवास्तविक के अन्तर के बिना यहच्छोपलब्धि (जब जैसा जी में आया उस रूप ग्रहण होने) के कारण उन्मत्त की तरह ज्ञान भी अज्ञान हो जाता है॥३२॥



नैगमसंग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्दसमभिरुदैवम्भूता नयाः॥३३॥

सूत्रार्थ - नैगम, संग्रह, व्यवहार, ऋजुसूत्र, शब्द, समभिरुद और एवंभूत - ये सात नय हैं॥३३॥



द्वितीय अध्याय

विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
जीव के असाधारण भाव	1-7	7	20-26
जीव का लक्षण	8-9	2	26-27
जीवों के भेद	10-14	5	28-29
इन्द्रियाँ	15-24	10	30-31
विग्रहगति	25-30	6	32-33
जन्म और योनि	31-35	5	33-36
शरीर	36-49	14	36-40
वेद	50-52	3	40-41
आयु अपवर्तन से मरण	53	1	41
कुल	53		

औपशमिककौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिक-
पारिणामिकौ च॥1॥

सूत्रार्थ - औपशमिक, क्षायिक, मिश्र, औदयिक और पारिणामिक - ये जीव
के स्वतत्त्व हैं॥1॥

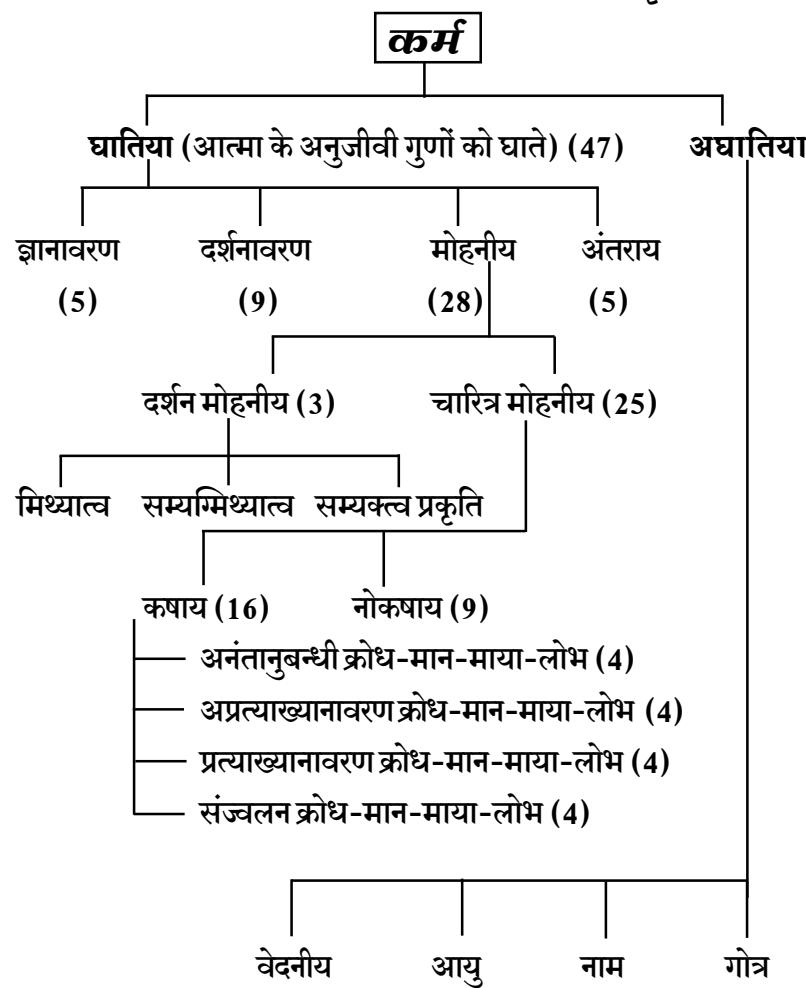
द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम्॥2॥

सूत्रार्थ - उक्त पाँच भावों के क्रम से दो, नौ, अठारह, इक्कीस और तीन भेद
हैं॥2॥

जीव के असाधारण भाव

नाम	औपशमिक	क्षायिक	मिश्र (क्षायोपशमिक)	औदयिक	पारिणामिक
भेद	2	9	18	21	3
कर्म का	उपशम (दबना)	क्षय (अत्यन्त वियोग)	क्षयोपशम (फल, दबना, वियोग एक साथ)	उदय (फल)	कर्म-निरपेक्ष -
संबंधित कर्म	मोहनीय	4 घातिया	4 घातिया	8 कर्म	-
उदाहरण	जल में मैल का नीचे बैठना	जल का पूर्ण शुद्ध होना	जल मे कुछ मैल का अभाव तथा दबना एवं कुछ का प्रकट होना	गंदला जल	जल सामान्य
आत्मा में	श्रद्धा व चारित्र सम्बन्धी भाव- मल दबना	गुणों की अवस्था में अशुद्धता का सर्वथा क्षय	गुणों का आंशिक विकास	विभाव रूप परिणमन	जीवत्व, भव्यत्व अभव्यत्व होना
हेय- उपादेय	एकदेश उपादेय	प्रकट करने योग्य उपादेय	एकदेश उपादेय	हेय	आश्रय करने योग्य परम उपादेय
जानने से लाभ व सिद्धि	पारिणामिक भाव के आश्रय से विकार दूर होना शुरू होता है	पुरुषार्थ से विकार नष्ट होता है	अनादि से विकार करता हुआ भी जीव जड़नहीं होता है	स्वभाव से शुद्ध होने पर भी कर्म सम्बन्ध से पर्याय में विकार है	आत्म - निर्भरता आती है
जीवों की संख्या	संख्यात अथवा असंख्यात	अनंत (औपशमिक से अनंतगुणों) 4-14 गुण- स्थानवर्ती+ सिद्ध भगवान	अनंत (क्षायिक से अनंतगुणों) 1-12 गुणस्थान- वर्ती	अनंत (क्षायोपशमिक से विशेष अधिक) 1-14 गुण- स्थानवर्ती	समस्त जीव (औदयिक से विशेष अधिक) 1-14 गुणस्थानवर्ती +सिद्ध भगवान

५ भावों को समझने के लिए आवश्यक कर्म प्रकृतियाँ -



सम्यक्त्वचारित्रे ॥३॥

सूत्रार्थ - औपशमिक भाव के दो भेद हैं- औपशमिक सम्यक्त्व और औपशमिक चारित्र ॥३॥

औपशमिक भाव

औपशमिक सम्यक्त्व औपशमिक चारित्र
(मोहनीय की 7, 6 अथवा (मोहनीय की 21 प्रकृतियों के दबने से)
5 प्रकृतियों के दबने से)

ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोपभोगवीर्याणि च ॥४॥

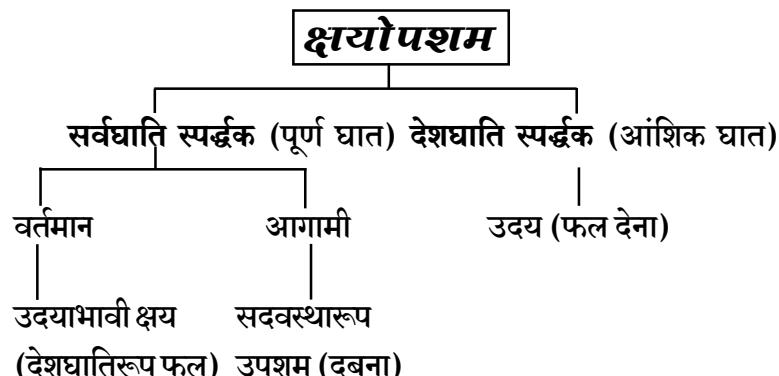
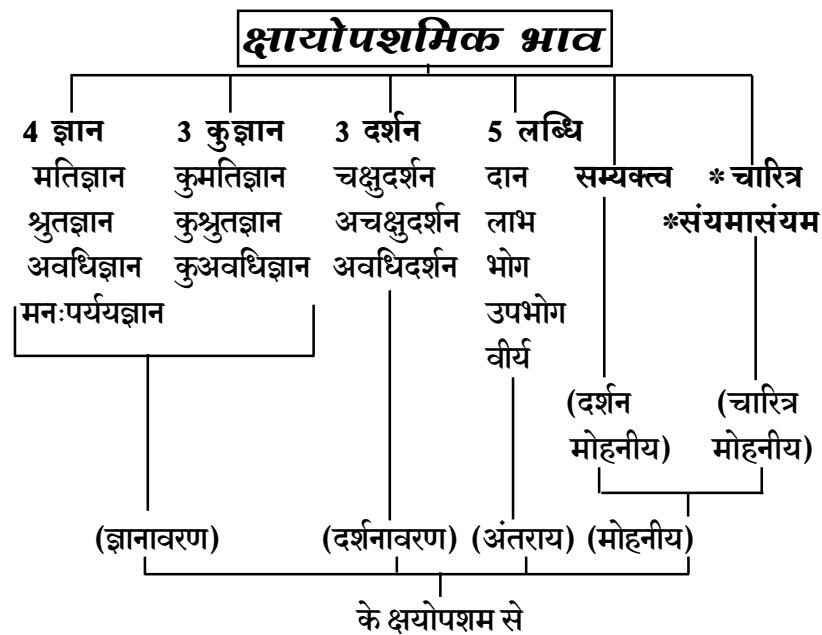
सूत्रार्थ - क्षायिक भाव के नौ भेद हैं - क्षायिक ज्ञान, क्षायिक दर्शन, क्षायिक दान, क्षायिक लाभ, क्षायिक भोग, क्षायिक उपभोग, क्षायिक वीर्य, क्षायिक सम्यक्त्व और क्षायिक चारित्र ॥४॥

क्षायिक भाव

क्षायिक ज्ञान (ज्ञानावरण के क्षय से)	क्षायिक दर्शन (दर्शनावरण के क्षय से)	क्षायिक दान क्षायिक लाभ क्षायिक भोग क्षायिक उपभोग क्षायिक वीर्य (चारित्र मोहनीय अंतराय के क्षय से)	क्षायिक सम्यक्त्व (दर्शन मोहनीय के क्षय से)
--	--	--	---

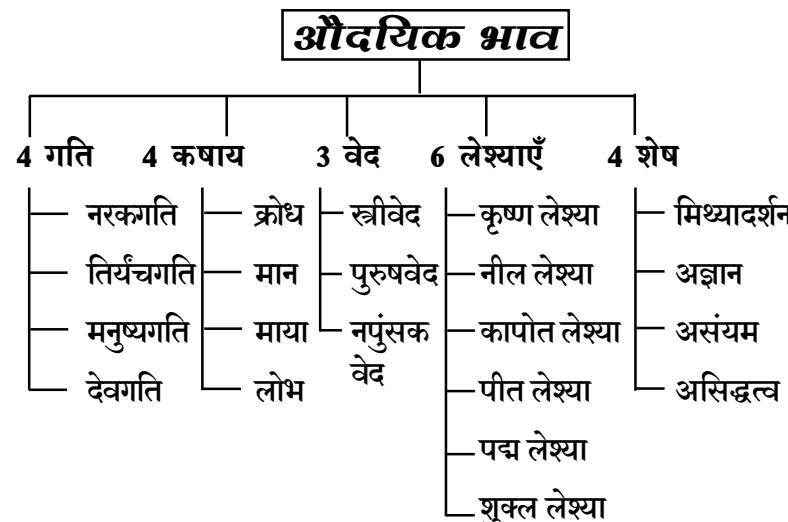
ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्ध्यश्चतुस्त्रित्रिपञ्चभेदाः सम्यक्त्वचारित्रसंयमा-
संयमाश्च॥५॥

सूत्रार्थ - क्षयोपशमिक भाव के अठारह भेद हैं- चार ज्ञान, तीन अज्ञान,
तीन दर्शन, पाँच दानादि लब्धियाँ, सम्यक्त्व, चारित्र और
संयमासंयम॥५॥



गतिकषायलिङ्गमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयतासिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्रे -
कैकैकैकषद्भेदाः॥६॥

सूत्रार्थ - औदयिक भाव के इक्कीस भेद हैं- चार गति, चार कषाय, तीन
लिंग, एक मिथ्यादर्शन, एक अज्ञान, एक असंयम, एक असिद्ध भाव
और छह लेश्याएँ॥६॥

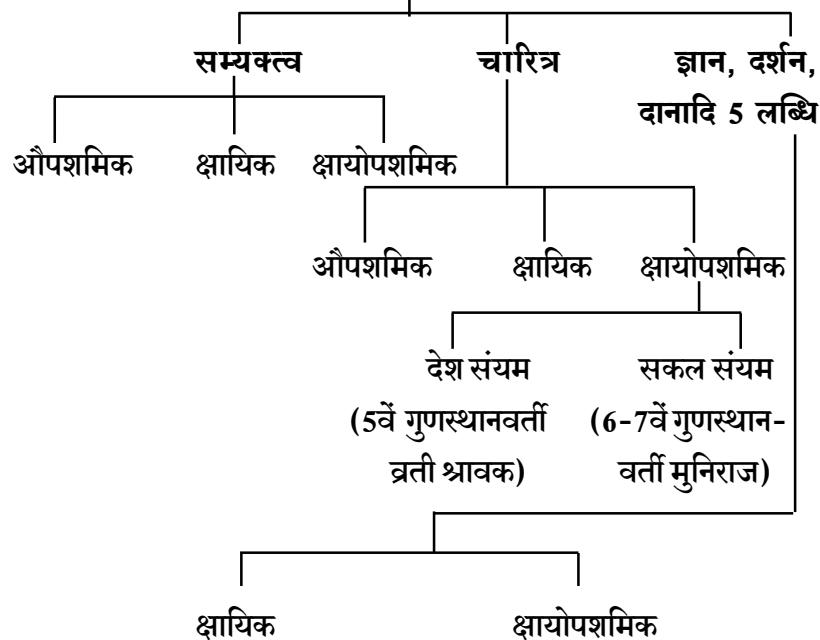


जीवभव्याभव्यत्वानि च॥७॥

सूत्रार्थ - पारिणामिक भाव के तीन भेद हैं- जीवत्व, भव्यत्व और अभव्यत्व॥७॥



सम्यक्त्व आदि गुणों में सम्भावित भाव



उपयोगो लक्षणम्॥४॥

सूत्रार्थ - उपयोग जीव का लक्षण है॥४॥

लक्षणाभास (सदोष लक्षण)

अव्याप्ति	अतिव्याप्ति	असम्भव
जैसे- जीव का लक्षण केवलज्ञान	जीव का लक्षण अमूर्तिक	जीव का लक्षण स्पर्श, रस, गंध, वर्ण

लक्षण

(बहुत से मिले पदार्थों में से एक को जुदा करने वाला हेतु)

आत्मभूत

अनात्मभूत

(जैसे - उपयोग जीव का आत्मभूत लक्षण है)

स द्विविधोऽष्टचतुर्भेदः॥९॥

सूत्रार्थ - वह उपयोग दो प्रकार का है- ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग। ज्ञानोपयोग आठ प्रकार का है और दर्शनोपयोग चार प्रकार का है॥९॥

उपयोग (जीव का लक्षण)

ज्ञानोपयोग (विशेष जानना)	दर्शनोपयोग (सामान्य प्रतिभास)
(साकार)	(निराकार)
5 सम्यग्ज्ञान 3 मिथ्याज्ञान	चक्षुदर्शन अचक्षुदर्शन अवधिदर्शन केवलदर्शन

उपयोग (अद्यात्म भाषा से 3 प्रकार)

शुभोपयोग (देव, शास्त्र, गुरु की भक्ति आदि)	अशुभोपयोग (5 पाप, 4 कषाय व इन्द्रियविषयों में प्रवृत्ति)	शुद्धोपयोग (शुभ और अशुभ उपयोग से रहित वीतराग भाव)
---	---	--

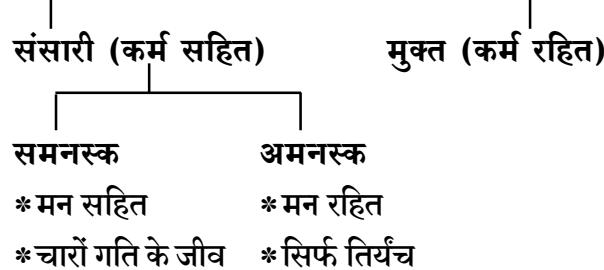
संसारिणो मुक्ताश्च॥10॥

सूत्रार्थ - जीव दो प्रकार के हैं- संसारी और मुक्त॥10॥

समनस्कामनस्काः॥11॥

सूत्रार्थ - मनवाले और मनरहित ऐसे संसारी जीव हैं॥11॥

जीव



संसारिणस्त्रस्थावराः॥12॥

सूत्रार्थ - (तथा) संसारी जीव त्रस और स्थावर के भेद से दो प्रकार हैं॥12॥

पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः॥13॥

सूत्रार्थ - पृथिवीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक - ये पाँच स्थावर हैं॥13॥

द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः॥14॥

सूत्रार्थ - दो इन्द्रिय आदि त्रस हैं॥14॥

सूत्र क्रमांक 15 से 21 तक के लिए आगे देखें !

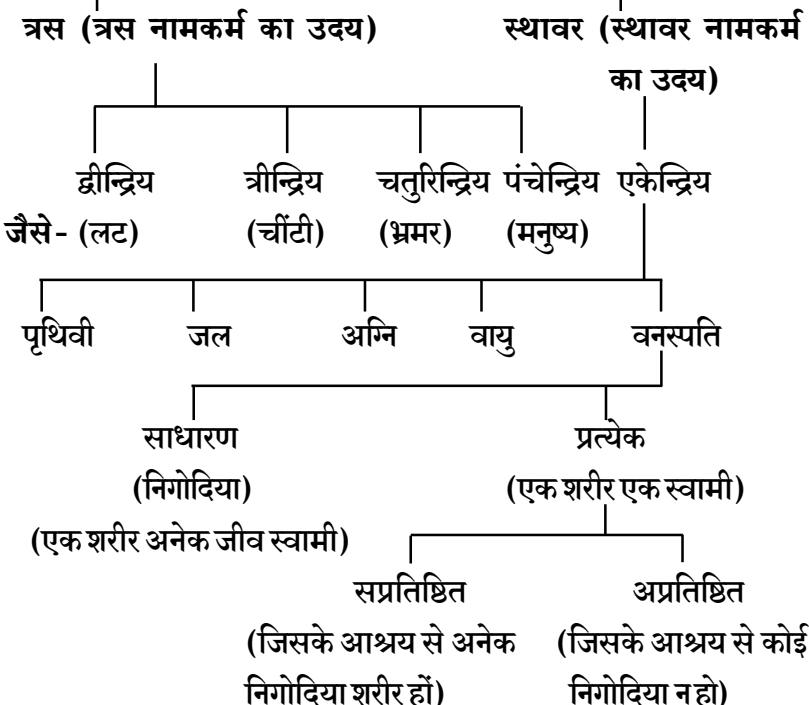
वनस्पत्यन्तानामेकम्॥22॥

सूत्रार्थ - वनस्पतिकायिक तक के जीवों के एक अर्थात् प्रथम इन्द्रिय होती है॥22॥

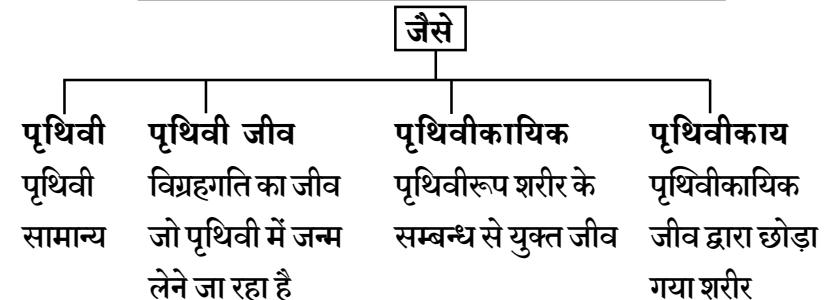
कृमिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि॥23॥

सूत्रार्थ - कृमि, पीलिका, भ्रमर और मनुष्य आदि के क्रम से एक-एक इन्द्रिय अधिक होती है॥23॥

संसारी जीवों के अन्य प्रकार से भेद



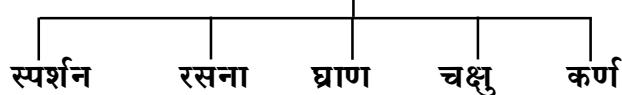
पाँच स्थावरों के प्रत्येक के 4 - 4 भेद



पञ्चेन्द्रियाणि॥15॥

सूत्रार्थ - इन्द्रियाँ पाँच हैं॥15॥

इन्द्रियाँ (जीव की पहचान के चिह्न)



द्विविधानि॥16॥

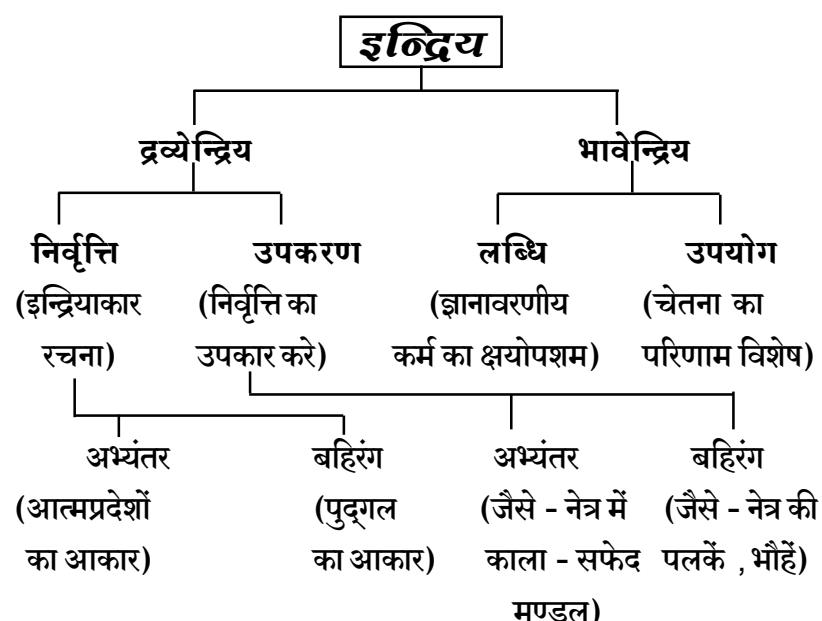
सूत्रार्थ - वे प्रत्येक दो-दो प्रकार की हैं॥16॥

निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम्॥17॥

सूत्रार्थ - निर्वृत्ति और उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय है॥17॥

लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम्॥18॥

सूत्रार्थ - लब्धि और उपयोगरूप भावेन्द्रिय है॥18॥



स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि॥19॥

सूत्रार्थ - स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत्र - ये पाँच इन्द्रियाँ हैं॥19॥

स्पर्शरसगन्धवणशब्दास्तदर्थः॥20॥

सूत्रार्थ - स्पर्शन, रस, गन्ध, वर्ण और शब्द - ये क्रम से उन इन्द्रियों के विषय हैं॥20॥

श्रुतमनिन्द्रियस्य॥21॥

सूत्रार्थ - श्रुत मन का विषय है॥21॥

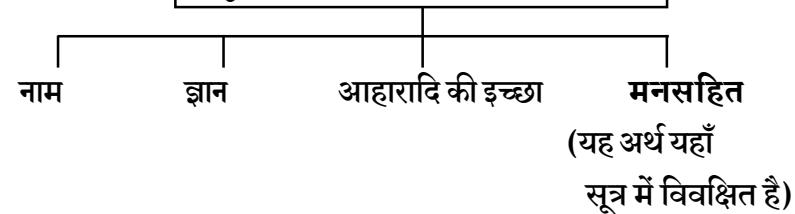
इन्द्रियों और मन के विषय व आकार

नाम	स्पर्शन	रसना	घ्राण	चक्षु	श्रोत्र	मन
विषय	8 प्रकार का स्पर्श	5 प्रकार का रस	2 प्रकार की गंध	5 प्रकार का वर्ण	7 प्रकार का शब्द	श्रुतज्ञान के विषय- भूतपदार्थ
आकार	अनेक	खुरपा	तिल पुष्प	मसूर दाल	यव की नाली	आठ पंखुड़ियों का फूला कमल

संज्ञिनः समनस्काः॥24॥

सूत्रार्थ - मनवाले जीव संज्ञी होते हैं॥24॥

संज्ञा शब्द के अनेक अर्थ



विग्रहगतौ कर्मयोगः॥२५॥

सूत्रार्थ - विग्रहगति में कार्मण काययोग होता है॥२५॥

अनुश्रेणि गतिः॥२६॥

सूत्रार्थ - गति श्रेणि के अनुसार होती है॥२६॥

अविग्रहा जीवस्य॥२७॥

सूत्रार्थ - मुक्त जीव की गति विग्रहरहित होती है॥२७॥

विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः॥२८॥

सूत्रार्थ - संसारी जीव की गति विग्रहरहित और विग्रहवाली होती है। उसमें विग्रहवाली गति चार समय से पहले अर्थात् तीन समय तक होती है॥२८॥

एकसमयाऽविग्रहा॥२९॥

सूत्रार्थ - एक समयवाली गति विग्रहरहित होती है॥२९॥

एकं द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः॥३०॥

सूत्रार्थ - एक, दो या तीन समय तक जीव अनाहारक रहता है॥३०॥

विग्रहगति

(जीव का एक शरीर छोड़ दूसरे शरीर के लिए गमन करना)

अविग्रहा (मोड़े रहित)

विग्रहवती (मोड़े सहित)

नाम	ऋगुगति/इषु गति	पाणिमुक्ता	लांगलिका	गौमूत्रिका
मोड़ा	सीधी - बिना मोड़	1 मोड़ा	2 मोड़ा	3 मोड़ा
समय	1 समय	2 समय	3 समय	4 समय
अनाहारक काल	अनाहारक नहीं होता	1 समय	2 समय	3 समय
- औदारिकादि तीन शरीर तथा छः पर्याप्तियों के योग्य पुद्गलों के ग्रहण करने को आहार कहते हैं।				

अनुश्रेणि गति

(आकाश के प्रदेशों की पंक्ति के अनुसार गमन)

मुक्त जीव
↓
सिर्फ़ ऋगुगति

संसारी जीव
↓
चारों प्रकार की गति

समूच्छनगर्भोपपादा जन्म॥३१॥

सूत्रार्थ - समूच्छन, गर्भ और उपपाद - ये (तीन) जन्म हैं॥३१॥

सूत्र क्रमांक ३२ के लिए आगे देखें!

जरायुजाण्डजपोतानां गर्भः॥३३॥

सूत्रार्थ - जरायुज, अण्डज और पोत जीवों का गर्भजन्म होता है॥३३॥

देवनारकाणामुपपादः॥३४॥

सूत्रार्थ - देव और नारकियों का उपपाद जन्म होता है॥३४॥

शेषाणां समूच्छनम्॥३५॥

सूत्रार्थ - शेष सब जीवों का समूच्छन जन्म होता है॥३५॥

जन्म

(पूर्व शरीर का त्याग कर नये शरीर का ग्रहण करना)

गर्भ
(माता-पिता के रज व वीर्य से)

उपपाद

समूच्छन

(अंतर्मुहूर्त में शरीर पूर्ण युवा हो जाता है)

(सब ओर से परमाणु ग्रहण कर शरीर की रचना)

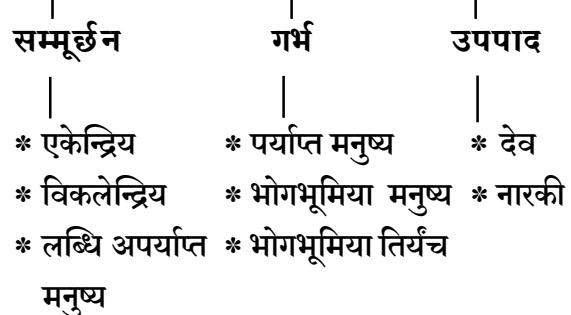
जरायुज
(जेर लिपटे हुए जरायु से पैदा होते हैं)
जैसे - गाय, हाथी, चील, कक्षूर

अंडज
(अंडे से पैदा होते हैं)
चिंह, नेवला

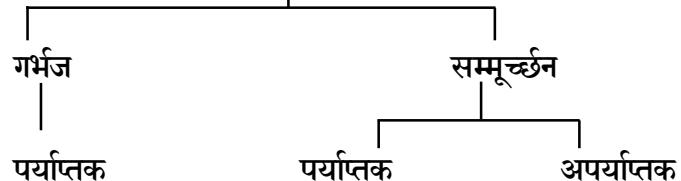
पोत
(बिना आवरण चलने लगते हैं)
देव व नारकी

शेष जीव

निम्नलिखित जीवों के नियम से निम्न जन्म ही होते हैं।



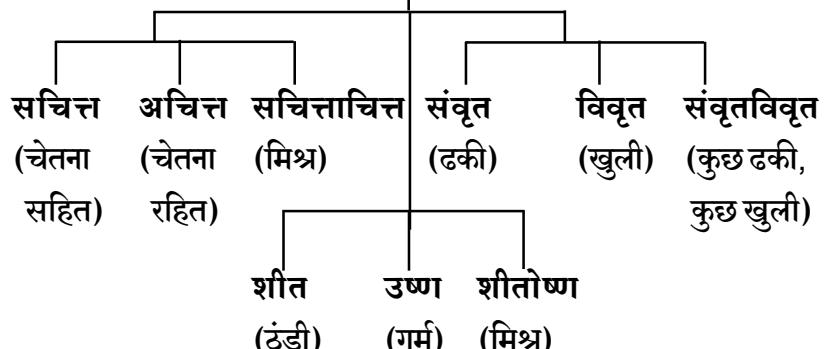
कर्मभूमिया पंचेन्द्रिय असैनी व सैनी तिर्यच



सचित्तशीतसंवृतः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः॥३२॥

सूत्रार्थ - सचित्त, शीत और संवृत तथा इनकी प्रतिपक्षभूत अचित्त, उष्ण और विवृत तथा मिश्र अर्थात् सचित्ताचित्त, शीतोष्ण और संवृतविवृत - ये उसकी अर्थात् जन्म की योनियाँ हैं॥३२॥

योनि (उत्पत्ति स्थान)



प्रत्येक जीव के ऊपर नौ में से हर समूह में से एक,
अर्थात् कुल मिलाकर ३ योनि नियम से होती हैं।

किस योनि में कौन जीव जन्म लेता है?

जीव	योनि		
देव व नारकी	अचित्त	शीत व उष्ण	संवृत्
गर्भज-मनुष्य व तिर्यच	सचित्ताचित्त		संवृत्विवृत्
सम्भूर्धन मनुष्य व पंचेन्द्रिय तिर्यच		तीनों प्रकार	विवृत्
विकलेन्द्रिय	दो प्रकार		
एकेन्द्रिय (पृथिवी, वायु, प्रत्येक वनस्पति)	(अचित्त व मिश्र)		
अग्नि		उष्ण	संवृत्
जल		शीत	
साधारण वनस्पति	सचित्त	तीनों प्रकार	

84 लाख योनियाँ

-तिर्यच			
* <u>एकेन्द्रिय</u>			
नित्य निगोद, इतर निगोद, पृथिवी, जल अग्नि, वायु (प्रत्येक की 7-7 लाख) प्रत्येक वनस्पति	6 x 7	42 लाख 10 लाख	
* <u>विकलेन्द्रिय</u>			
द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय (प्रत्येक की 2 लाख)	3 x 2	6 लाख 4 लाख	
* <u>पंचेन्द्रिय तिर्यच</u>			
-नारकी		4 लाख	
-देव		4 लाख	
-मनुष्य		14 लाख	
कुल योनि		84 लाख	

औदारिक वैक्रियिकाहारक तैजसकार्मणानि शरीराणि ॥36॥

सूत्रार्थ - औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस और कार्मण - ये पाँच शरीर हैं ॥36॥
परं परं सूक्ष्मम् ॥37॥

सूत्रार्थ - आगे-आगे का शरीर सूक्ष्म है ॥37॥

प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥38॥

सूत्रार्थ - तैजस से पूर्व तीन शरीरों में आगे-आगे का शरीर प्रदेशों की अपेक्षा
असंख्यात गुणा है ॥38॥

अनन्तगुणे परे ॥39॥

सूत्रार्थ - परवर्ती दो शरीर प्रदेशों की अपेक्षा उत्तरोत्तर अनन्तगुणे हैं ॥39॥

सूत्र क्रमांक 40 से 44 तक के लिए आगे देखें!

गर्भसम्मूर्छनजमाद्यम् ॥45॥

सूत्रार्थ - पहला शरीर गर्भ और संमूर्छन जन्म से पैदा होता है ॥45॥

औपपादिक वैक्रियिकम् ॥46॥

सूत्रार्थ - वैक्रियिक शरीर उपपाद जन्म से पैदा होता है ॥46॥

शरीर

नाम	औदारिक	वैक्रियिक	आहारक	तैजस	कार्मण
स्वामी	मनुष्य व तिर्यच	देव व नारकी	छठे गुणस्थान- वर्ती आहारक ऋद्धिधारी मुनिराज	सभी संसारी जीव	सभी संसारी जीव
स्वरूप	स्थूल शरीर	जो एक- अनेक, सूक्ष्म- स्थूल, हल्का- भारी रूप हो सके	जो सूक्ष्म पदार्थ का निर्णय व संयम की रक्षा के लिए होता है	जो तीन शरीरों को कांति देता है	ज्ञानावर- णादि 8 कर्मों का समूह
सूक्ष्मता	सबसे स्थूल	औदारिक से सूक्ष्म	वैक्रियिक से सूक्ष्म	आहारक से सूक्ष्म	सबसे सूक्ष्म
प्रदेशों (परमा- णुओं) की संख्या	सबसे कम (पर अनंत)	औदारिक से असंख्यात गुणे	वैक्रियिक से असंख्यात गुणे	आहारक से अनंतगुणे	सबसे ज्यादा (तैजस से अनंत गुणे)
आगे-आगे के शरीरों में प्रदेशों की अधिकता होने पर भी उनका सम्बन्ध लौह पिण्ड की तरह सघन होता है, अतः वे बाह्य में अल्प (सूक्ष्म) रूप होते हैं।					

अप्रतिधाते॥40॥

सूत्रार्थ - प्रतिधात रहित हैं॥40॥

अनादिसम्बन्धे च॥41॥

सूत्रार्थ - आत्मा के साथ अनादि सम्बन्ध वाले हैं॥41॥

सर्वस्य॥42॥

सूत्रार्थ - तथा सब संसारी जीवों के होते हैं॥42॥

तैजस और कार्मण शरीर की विशेषता

अप्रतिधात	अनादि-सम्बन्ध	सभी के
(न किसी से रुकता है, न किसी को रोकता है)	(अनादि-संतति अपेक्षा) (सादि-निर्जरा अपेक्षा)	(सर्व संसारी जीवों के)

तदादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः॥43॥

सूत्रार्थ - एक साथ एक जीव के तैजस और कार्मण से लेकर चार शरीर तक
विकल्प से होते हैं॥43॥

एक साथ एक जीव के कितने शरीर

कौन से-	2			3			4		
	तैजस,	तैजस,	तैजस,	तैजस,	तैजस,	तैजस,	तैजस,	तैजस,	तैजस,
कार्मण		कार्मण		कार्मण,	वैक्रियिक		कार्मण,	औदारिक,	आहारक
औदारिक									वैक्रियिक
स्वामी-	मोड़े वाली विग्रह गति में स्थित जीव	मनुष्य, तिर्यच	देव, नारकी	छठे गुणस्थान- वर्ती आहारक मुनिराज	विक्रिया ऋद्धिधारी मुनिराज				

निरूपभोगमन्त्यम्॥44॥

सूत्रार्थ - अन्तिम शरीर उपभोग रहित है॥44॥

- इन्द्रियों के द्वारा शब्द वर्गैरह के ग्रहण करने को उपभोग कहते हैं।
- कार्मण शरीर में इस प्रकार का उपभोग न होने से वह निरूपभोग है।

लब्धिप्रत्ययं च॥47॥

सूत्रार्थ - तथा लब्धि से भी पैदा होता है॥47॥

वैक्रियिक शरीर

उपपाद जन्म से	लब्धि से
*देव और नारकियों का	*मुनिराज को तप विशेष से प्राप्त ऋद्धि
	*औदारिक शरीर का ही परिणमन

तैजसमपि॥48॥

सूत्रार्थ - तैजस शरीर भी लब्धि से पैदा होता है॥48॥

तैजस शरीर

अनिःसरण	निःसरण
स्वरूप	शरीरों को कांति देने वाला
स्वामी	सभी संसारी जीव
किसका परिणमन	तैजस वर्गणा का
	आहार वर्गणा (औदारिक शरीर) का

निःसरण तैजस शरीर

शुभ अशुभ

- * करुणा के कारण निकलता है।
- * दाहिने कंधे से निकलता है।
- * श्वेत वर्ण व शुभ आकृति का होता है।
- * रोग, मारी आदि को दूर करता है।
- * क्रोध के कारण निकलता है।
- * बायें कंधे से निकलता है।
- * सिन्धूरी वर्ण व बिलाव के आकार का होता है।
- * मन में रही विरुद्ध वस्तु एवं स्वयं को भस्मीभूत करता है।

शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव॥49॥

सूत्रार्थ - आहारक शरीर शुभ, विशुद्ध और व्याघात रहित है और वह प्रमत्तसंयत के ही होता है॥49॥

आहारक शरीर

शुभ	विशुद्ध	व्याघात रहित	मुनिराज को
(अच्छे कार्य के लिए होता है)	(शुभ कर्म के कारण श्वेत वर्ण समचतुरस्संस्थान)	(ढाई द्वीप में न किसी से रुकता है, न किसी को रोकता है)	(छठे गुणस्थान-वर्ती किर्णी त्रिद्विधारी मुनिराज को ही होता है)

नारकसमूच्छिनो नपुंसकानि॥50॥

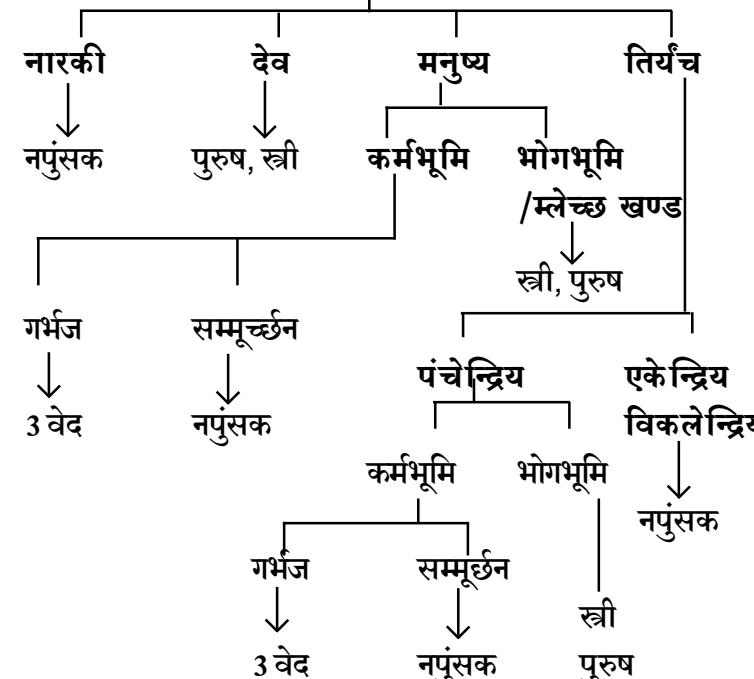
सूत्रार्थ - नारक और समूच्छिन नपुंसक होते हैं॥50॥
न देवाः॥51॥

सूत्रार्थ - देव नपुंसक नहीं होते॥51॥

शेषात्प्रवेदाः॥52॥

सूत्रार्थ - शेष के सब जीव तीन वेदवाले होते हैं॥52॥

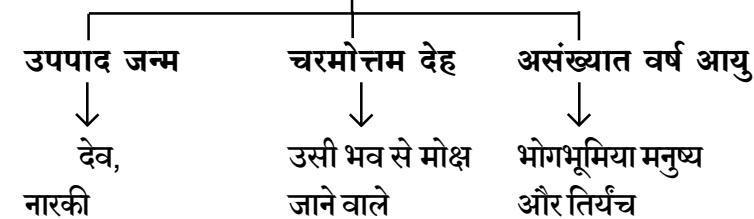
वेद



एकेन्द्रिय से चाँडेन्द्रिय तक सभी समूच्छिन जन्म वाले होने से नपुंसक ही हैं।
औपपादिक चरमोत्तमदेहाऽसंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः॥53॥

सूत्रार्थ - उपपाद जन्मवाले, चरमोत्तम देहवाले और असंख्यात वर्ष की आयुवाले जीव अनपवर्त्य आयुवाले होते हैं॥53॥

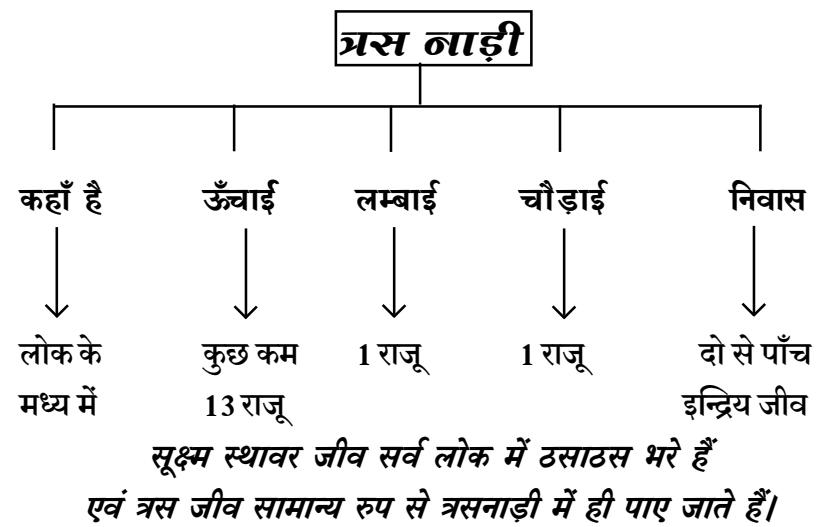
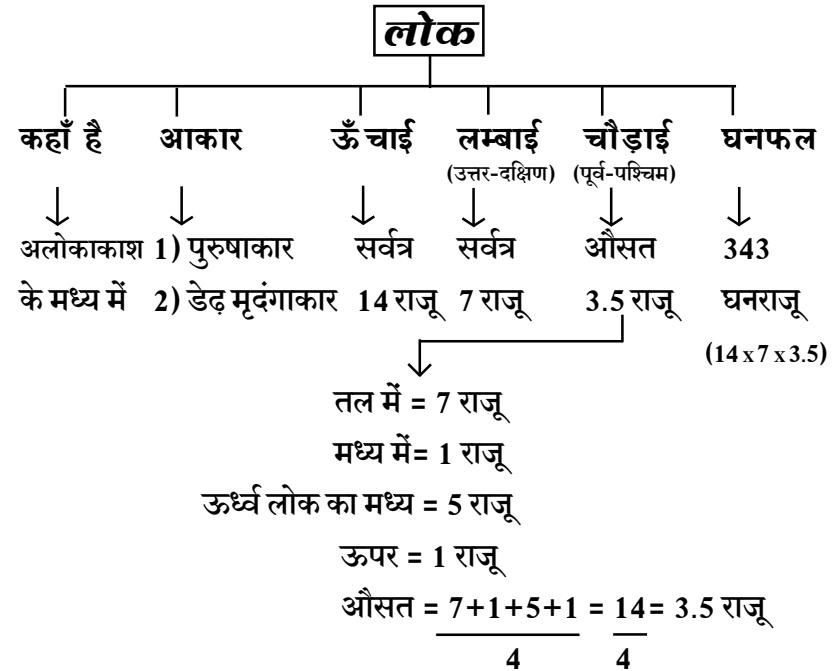
अनपवर्त्य आयु (परिपूर्ण आयु भोग कर मरण होना)



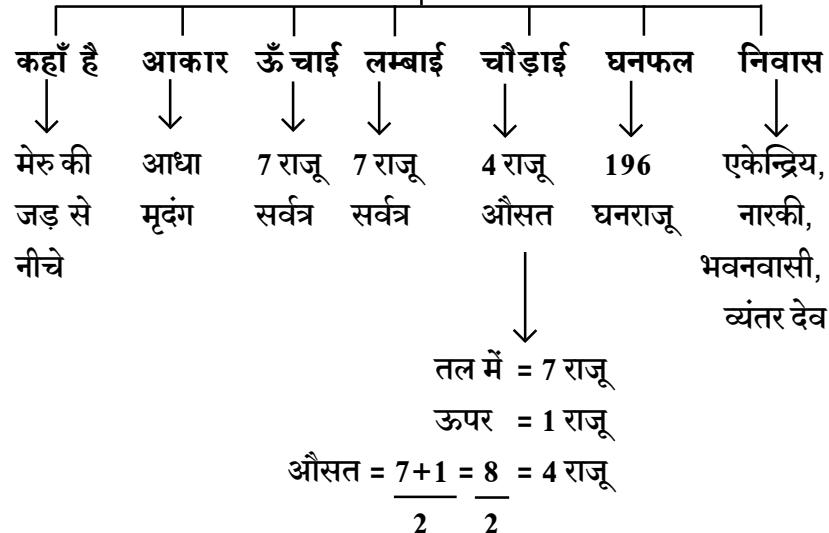
तृतीय अध्याय

विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
<u>अधोलोक का वर्णन</u>			
सात पृथिवियाँ व उनमें बिल	1-2	2	44-46
नरकों के दुख	3-5	3	49-50
नरकों में उत्कृष्ट आयु	6	1	46-48
<u>मध्यलोक का वर्णन</u>			
द्वीप व समुद्रों के नाम, आकार व विस्तार	7-8	2	51
जम्बूद्वीप	9-32	24	52-59
क्षेत्र	10		53
पर्वत	11-13		54
सरोवर	14-19		55-56
महा नदियाँ	20-23		56-57
क्षेत्रों का विस्तार	24-26, 32		57-58
काल चक्र परिवर्तन	27-28		59-61
आयु	29-31		59
अद्वाई द्वीप	33-35	3	62
मनुष्यों के भेद	36	1	62-63
कर्मभूमि	37	1	63
मनुष्य व तिर्यचों की आयु	38-39	2	64-65
	कुल	39	

नारकियों का वर्णन प्रसंग प्राप्त है। नारकियों का निवास स्थान बताने के लिए लोक, त्रस नाड़ी एवं अधोलोक का वर्णन यहाँ किया है।



आदो लोक



रत्नशर्कराबालुकापङ्कधूमतमोमहातमः प्रभाभूमयो
घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः॥1॥

सूत्रार्थ - रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा
और महातमःप्रभा - ये सात भूमियाँ घनाम्बु, वात और आकाश
के सहारे स्थित हैं तथा क्रम से नीचे-नीचे हैं॥1॥

तासु त्रिंशत्पञ्चविंशतिपञ्चदशदशत्रिपञ्चोनैकनरकशतसहस्राणि
पञ्च चैव यथाक्रमम्॥2॥

सूत्रार्थ - उन भूमियों में क्रम से तीस लाख, पच्चीस लाख, पन्द्रह लाख,
दस लाख, तीन लाख, पाँच कम एक लाख और पाँच नरक हैं॥2॥

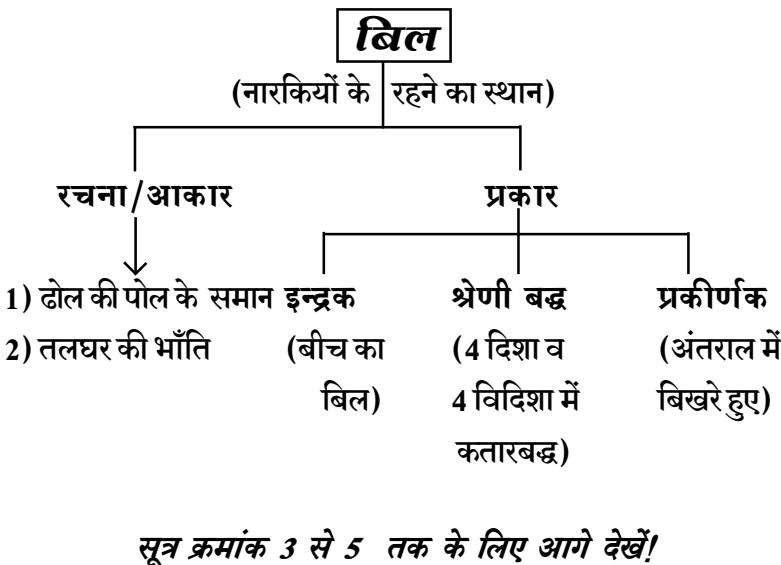
वात वलय

लोक

का आधार		
घनोदधि वातवलय	= ठोस वायु + जल का घेरा	= वाष्प
का आधार		
घन वातवलय	= ठोस वायु का घेरा	= मोटी हवा
का आधार		
तनु वातवलय	= पतली वायु का घेरा	= पतली हवा
का आधार		
आकाश		

नरकों का वर्णन

पृथिवियों के सार्थक नाम	रुढ़ी नाम	पृथिवियों की मोटाई (योजन में)	बिलों की संख्या	पाथड़े (पटल)	अवधिज्ञान	
					उत्कृष्ट क्षेत्र	उत्कृष्ट काल
रत्न प्रभा	धम्मा	1,80,000	30 लाख	13	1 योजन	मिन्न अन्तर्मुहूर्त
शर्करा प्रभा	वंशा	32,000	25 लाख	11	3 ¹ / ₂ कोस	यथा
बालुका प्रभा	मेघा	28,000	15 लाख	9	3 कोस	योग्य
पङ्क प्रभा	अंजना	24,000	10 लाख	7	2 ¹ / ₂ कोस	अन्तर्मुहूर्त
धूम प्रभा	अरिष्ठा	20,000	3 लाख	5	2 कोस	
तम प्रभा	मघवी	16,000	5 कम 1 लाख	3	1 ¹ / ₂ कोस	
महातम प्रभा	माघवी	8,000	5	1	1 कोस	अन्तर्मुहूर्त



तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सन्त्वानां
परास्थितिः ॥६॥

सूत्रार्थ - उन नरकों में जीवों की उत्कृष्ट स्थिति क्रम से एक, तीन, सात, दस,
सत्रह, बाईस और तैनीस सागरोपम है ॥६॥

सात नरक	भाव लेश्या	शरीर की ऊँचाई (उत्कृष्ट)	उत्कृष्ट आयु	लगातार उसी नरक से निकल में उत्पत्तिकर क्या नहीं होता है?	किस नरक से निकल	किस जीव को कौनसे नरक तक जाने की शक्ति है
प्रथम नरक	जघन्य कापोत	7 धनुष 3 हाथ 6 अंगुल	1	8 बार		असैनी पंचेन्द्रिय
द्वितीय नरक	मध्यम कापोत	15 धनुष 2 हाथ 12 अंगुल	3	7 बार		गोह, सरीसर्प
तृतीय नरक	उत्कृष्ट ¹ कापोत, जघन्य नील	31 धनुष 1 हाथ	7	6 बार		पक्षी
चतुर्थ नरक	मध्यम नील	62 धनुष 2 हाथ	10	5 बार	तीर्थकर	सर्प
पंचम नरक	उत्कृष्ट ² नील, जघन्य कृष्ण	125 धनुष	17	4 बार	चरम शरीरी	सिंह
षष्ठ	मध्यम कृष्ण	250 धनुष	22	3 बार	भावलिंगी मुनि	स्त्री
सप्तम नरक	उत्कृष्ट ³ कृष्ण	500 धनुष	33	2 बार	2-5 गुण- स्थानवर्ती मत्स्य	पुरुष, स्थानवर्ती मत्स्य

द्रव्य लेश्या

* सातों नरक के नारकियों के शरीर का रंग अति कृष्ण होता है।

आयु

* पहले नरक की जघन्य आयु 10,000 वर्ष है।

* पहले-पहले नरक की उत्कृष्ट आयु में 1 समय अधिक करने पर आगे-आगे के नरक की जघन्य आयु होती है।

नरक से निकला जीव कहाँ उत्पन्न होता है

मनुष्य गति

तिर्यच गति

कर्मभूमिज संज्ञी पर्याप्त गर्भज ही होता है।

सातवें नरक से निकला जीव नियम से तिर्यच ही होता है।

नरक से निकला जीव क्या नहीं होता है

नारकी

देव

एकेन्द्रिय

- नारायण

से

- प्रतिनारायण

असैनी

- बलभद्र

पञ्चेन्द्रिय

- चक्रवर्ती

नारका नित्याशुभतरलेश्यापरिणामदेहवेदनाविक्रियाः॥३॥

सूत्रार्थ - नारकी निरन्तर अशुभतर लेश्या, परिणाम, देह, वेदना, और विक्रियावाले हैं॥३॥

परस्परोदीरितदुःखाः॥४॥

सूत्रार्थ - तथा वे परस्पर उत्पन्न किये गये दुःखवाले होते हैं॥४॥

संक्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः॥५॥

सूत्रार्थ - और चौथी भूमि से पहले तक वे संक्लिष्ट असुरों के द्वारा उत्पन्न किये गये दुःखवाले भी होते हैं॥५॥

नारकियों के दुःख

लेश्या परिणाम	देह	वेदना	विक्रिया	परस्पर	देवकृत
(द्येत्र का अशुभ संस्थान, स्पर्श, रस गंध, वर्ण) सहित)	(हुंडक संस्थान, कुधातुओं रोग, भूख, प्यास आदि)	(शीत, अपृथक् की अपृथक् विक्रिया) भृति	(अशुभ अपृथक् की विक्रिया) भृति	(श्वान कुमार देव आपस में लड़ते हैं)	(असुर कुमार देव आपस में लड़ते हैं)

द्रव्य
(शरीर का रंग - अति कृष्ण)

भाव
(परिणाम - 3 अशुभ)

नारकियों द्वारा परस्पर दिए जाने वाले दुःख

1.	गर्म लोहमय रस पिलाना,
2.	अग्निरूप लाल तप्त लोहे के खम्भों से आलिंगन कराना,
3.	कूट - शात्मलि वृक्ष के ऊपर चढ़ाना - उतारना,
4.	लोहमय घनों से पीटना,
5.	वसूले से छीलना,
6.	चमड़ी उतारना,
7.	गर्म तेल से नहलाना,
8.	लोहे के गर्म कड़ाहों में पकाना,
9.	भाड़ में सेंकना,
10.	घानी में पेलना,
11.	शूली पर चढ़ाना,
12.	भाले से बींधना,
13.	करोंत से चीरना,
14.	अंगारों पर लिटाना,
15.	गर्म रेत पर चलाना,
16.	वैतरणी में स्नान कराना,
17.	तलवार जैसे पत्तों के बन में प्रवेश कराना,
18.	व्याघ्र, रीछ, सिंह, श्वान, सियार, सियारनी, बिलाव, नेवला, सर्प, कौवा, गीध, चमगादड, उल्लू, बाज, आदि बनकर एक - दूसरे को अनेक प्रकार के दुख देना,
19.	दूर से देख क्रोध करना,
20.	पास आने पर मारना,
21.	क्रोध से भरे वचन कहना,
22.	विक्रिया से शस्त्र बनकर मारना, काटना, छेदना, भेदना आदि।

जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥

सूत्रार्थ - जम्बूद्वीप आदि शुभ नाम वाले द्वीप और लवणोद आदि शुभ नाम वाले समुद्र हैं ॥७॥

द्विद्विर्विष्कम्भा: पूर्वपूर्वपरिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥८॥

सूत्रार्थ - वे सभी द्वीप और समुद्र दूने-दूने व्यासवाले, पूर्व-पूर्व द्वीप और समुद्र को वेष्ठित करनेवाले और चूड़ी के आकार वाले हैं ॥८॥

मृद्य (तिर्यक्) लोक

कहाँ है	ऊँ चाई	लम्बाई	चौड़ाई	निवास	रचना
(मेरु की	(1 लाख	(1 राजू)	(1 राजू)	* मनुष्य	
जड़ से	40 योजन)			* तिर्यच	
मेरु की				* देव	
चूलिका तक)				(भवनवासी	
				व्यंतर, ज्योतिषी)	

असंख्यात 4 कोने

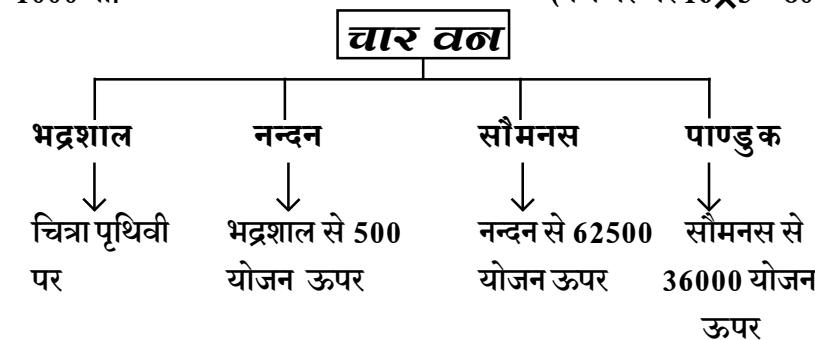
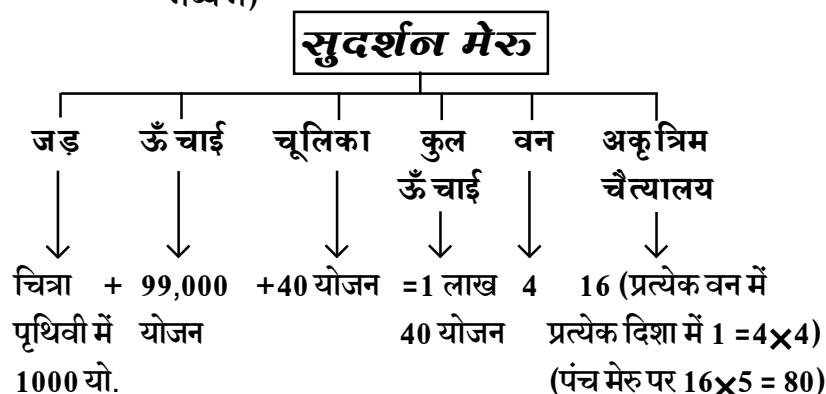
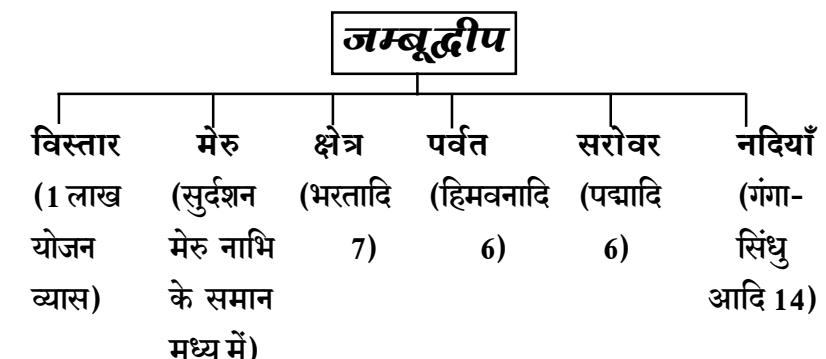
द्वीप - समुद्र

- एक - दूसरे को घेरे हुए हैं।

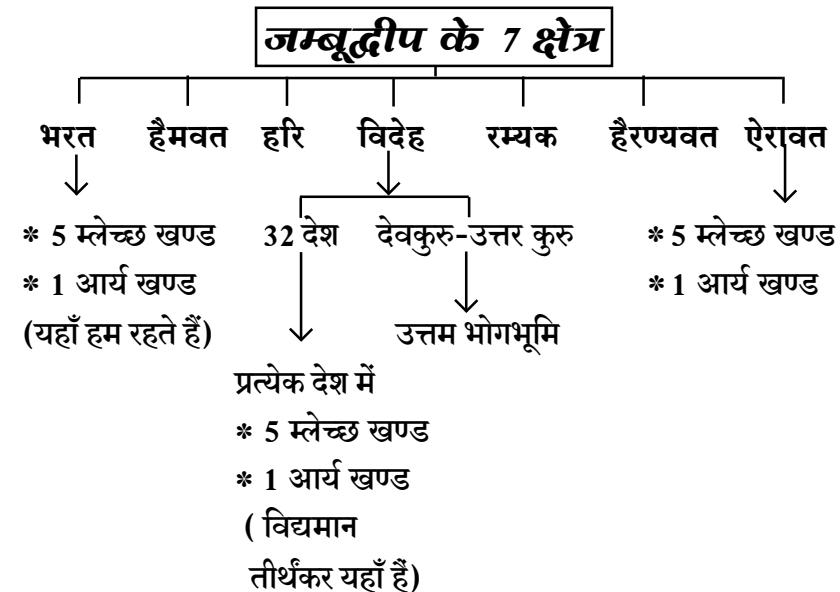
- उत्तरोत्तर दूने - दूने व्यास वाले हैं।

- सभी शुभ नाम वाले हैं।

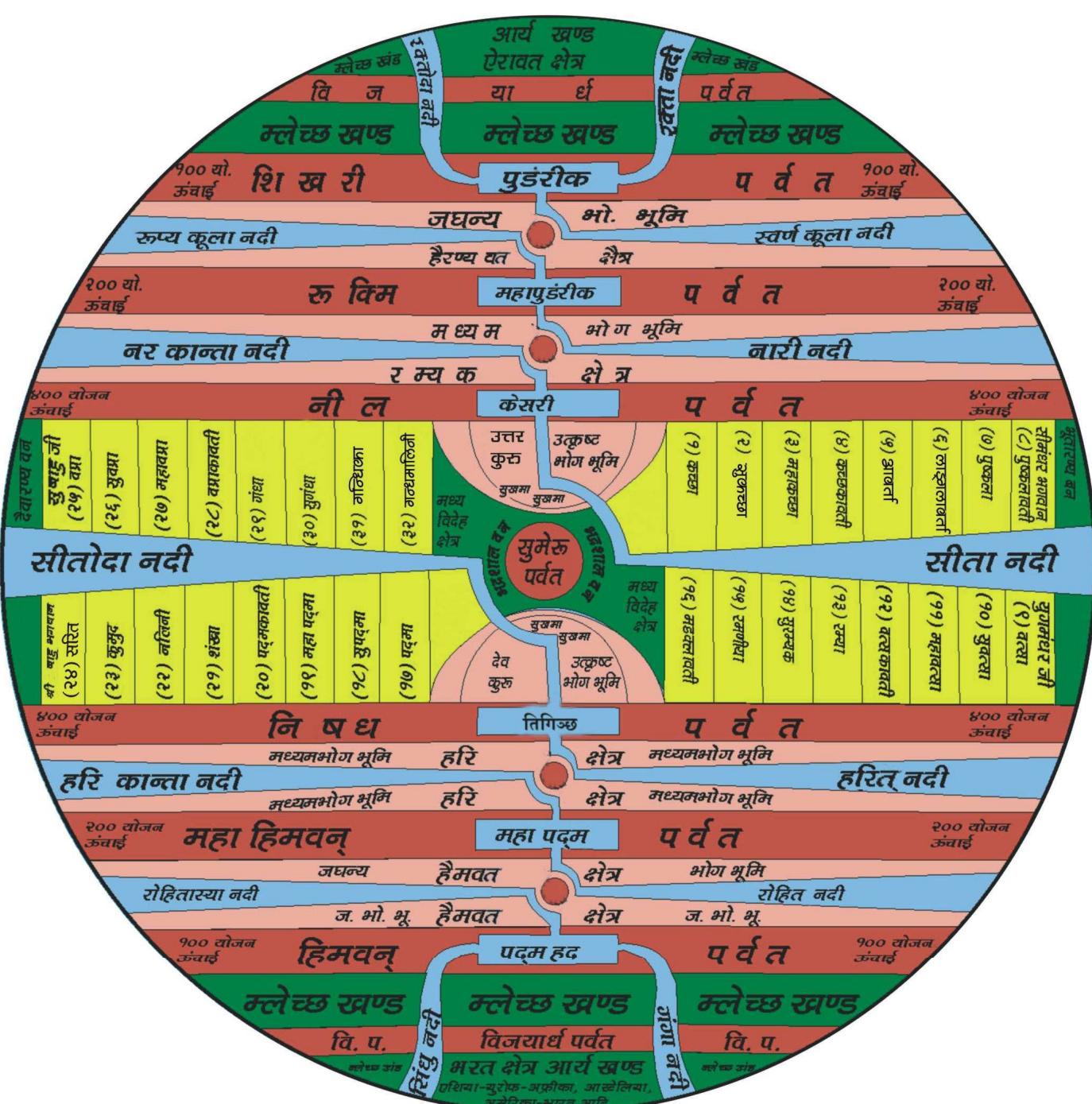
तन्मध्ये मेरुनाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः॥१९॥
सूत्रार्थ - उन सबके बीच में गोल और एक लाख योजन विष्कम्भवाला जम्बूद्वीप है। जिसके मध्य में नाभि के समान मेरु पर्वत है॥१९॥



भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि॥१०॥
सूत्रार्थ - भरतवर्ष, हैमवतवर्ष, हरिवर्ष, विदेहवर्ष, रम्यकवर्ष, हैरण्यवतवर्ष और ऐरावतवर्ष - ये सात क्षेत्र हैं॥१०॥



ଜମ୍ବୁଦ୍ଧିପ ମାନଚିତ୍ର



**तद्विभाजिनः पूर्वपरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनीलरुक्मि-
शिखरिणो वर्षधरपर्वताः॥11॥**

सूत्रार्थ - उन क्षेत्रों को विभाजित करने वाले और पूर्व-पश्चिम लम्बे ऐसे हिमवान, महाहिमवान, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी - ये छह वर्षधर पर्वत हैं॥11॥

हेमार्जुनतपनीयवैद्यूर्यरजतहेममयाः॥12॥

सूत्रार्थ - ये छहों पर्वत क्रम से सोना, चाँदी, तपाया हुआ सोना, वैद्यूर्यमणि, चाँदी और सोना इनके समान रंगवाले हैं॥12॥

मणिविचित्रपाश्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः॥13॥

सूत्रार्थ - इनके पार्श्व मणियों से चित्र-विचित्र हैं तथा वे ऊपर, मध्य और मूल में समान विस्तारवाले हैं॥13॥

पर्वत/ कुलाचल

नाम	रंग	लम्बाई	आकार	चौड़ाई	विशेष
हिमवन	सोना	पूर्व से पश्चिम समुद्र तक	दीवार की भाँति	ऊपर, नीचे व मूल में एक जैसा	आजू-बाजू में विचित्र मणियों से जड़ा हुआ
महा हिमवन	चाँदी				
निषध	तपाया हुआ सोना				
नील	वैद्यूर्य नील मणि				
रुक्मि	चाँदी				
शिखरी	सोना				

**पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेशरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका
हदास्तेषामुपरि॥14॥**

सूत्रार्थ - इन पर्वतों के ऊपर क्रम से पद्म, महापद्म, तिगिञ्छ, केसरी, महापुण्डरीक और पुण्डरीक - ये तालाब हैं॥14॥

प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्धविष्कभ्यो हृदः॥15॥

सूत्रार्थ - पहला तालाब एक हजार योजन लम्बा और इससे आधा चौड़ा है॥15॥

दशयोजनावगाहः॥16॥

सूत्रार्थ - तथा दस योजन गहरा है॥16॥

तन्मध्ये योजनं पुष्करम्॥17॥

सूत्रार्थ - इसके बीच में एक योजन का कमल है॥17॥

तदद्विगुणद्विगुणा हृदाः पुष्कराणि च॥18॥

सूत्रार्थ - आगे के तालाब और कमल दूने-दूने हैं॥18॥

**तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीहीधृतिकीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः
ससामानिकपरिषत्काः॥19॥**

सूत्रार्थ - इनमें श्री, ही, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी - ये देवियाँ सामानिक और परिषद् देवों के साथ निवास करती हैं तथा इनकी आयु एक पल्योपम है॥19॥

सरोवर

क्र.	नाम	लम्बाई (योजन में)	चौड़ाई (योजन में)	गहराई (योजन में)	कमल व्यास (योजन में)	देवी निवास
1	पद्म	1,000 (40 लाख मील)	500 (20 लाख मील)	10 (40,000 मील)	1 (4,000 मील)	श्री
2	महापद्म	2,000	1,000	20	2	ही
3	तिगिञ्छ	4,000	2,000	40	4	धृति
4	केशरी	4,000	2,000	40	4	कीर्ति
5	महा पुण्डरीक	2,000	1,000	20	2	बुद्धि
6	पुण्डरीक	1,000	500	10	1	लक्ष्मी

इन सरोवरों में रहने वाली देवियों की आयु एक पल्य की है। वे सामानिक एवं पारिषद जाति के देवों के साथ रहती हैं, जिनके छोटे कमल हैं।

गङ्गासिन्धुरोहिंद्रोहितास्याहरिंद्रिकान्तासीतासीतोदानारीनरकान्ता
सुवर्णरूप्यकूलारकतारकतोदा: सरितस्तन्मध्यगा:॥२०॥

सूत्रार्थ - इन भरत आदि क्षेत्रों में से गंगा, सिन्धु, रोहित, रोहितास्या, हरित,
हरिकान्ता, सीता, सीतोदा, नारी, नरकान्ता, सुवर्णकूला, रूप्यकूला,
रक्ता और रक्तोदा नदियाँ बहती हैं।॥२०॥

द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः॥२१॥

सूत्रार्थ - दो-दो नदियों में से पहली-पहली नदी पूर्व समुद्र को जाती है।॥२१॥

शेषास्त्वपरगा:॥२२॥

सूत्रार्थ - किन्तु शेष नदियाँ पश्चिम समुद्र को जाती हैं।॥२२॥

चतुर्दशनदीसहस्रपरिवृता गङ्गासिन्ध्वादयो नद्यः॥२३॥

सूत्रार्थ - गंगा और सिन्धु आदि नदियों की चौदह-चौदह हजार परिवार नदियाँ हैं।॥२३॥

14 नदियाँ

सरोवरजिससे नदियाँ निकलती हैं। नाम	नदियों के नाम	बहने का क्षेत्र	किस दिशा में जाती हैं	परिवार नदियाँ
पद्म	सिंधु गंगा रोहितास्या रोहित	भरत ” हैमवत ”	दो-दो नदियों के युगलों में से पहली-	14,000 ”
महापद्म	हरिकान्ता	हरि	पहली नदी	28,000
तिगिञ्छ	हरित् सीतोदा	”	(जैसे - गंगा)	”
केशरी	सीता नरकान्ता	विदेह रम्यक	पूर्व समुद्र में एवं बाद-बाद	1,12,000
महा पुण्डरीक	नारी रूप्यकूला	” हैरण्यवत	की नदी (जैसे - सिंधु)	”
पुण्डरीक	सुवर्णकूला रक्तोदा	” ऐरावत	पश्चिम समुद्र में मिलती है।	28,000 ”
	रक्ता	”		14,000 ”

भरतः षड्विंशतिपञ्चयोजनशतविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा
योजनस्य॥२४॥

सूत्रार्थ - भरत क्षेत्र का विस्तार पाँच सौ छब्बीस सही छह बटे उन्नीस ($526\frac{6}{19}$)
योजन है।॥२४॥

तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्तः॥२५॥

सूत्रार्थ - विदेह पर्यन्त पर्वत और क्षेत्रों का विस्तार भरत क्षेत्र के विस्तार से दूना-दूना है॥२५॥

उत्तरा दक्षिणतुल्या:॥२६॥

सूत्रार्थ - उत्तर के क्षेत्र और पर्वतों का विस्तार दक्षिण के क्षेत्र और पर्वतों के समान है॥२६॥

सूत्र क्रमांक 27 से 31 तक के लिए आगे देखें!

भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागः॥३२॥

सूत्रार्थ - भरतक्षेत्र का विस्तार जम्बूद्वीप का एक सौ नब्बेवाँ भाग है॥३२॥

क्षेत्रों का विस्तार

भरत क्षेत्र	526 $\frac{6}{19}$ योजन	जम्बूद्वीप का 190 वाँ भाग
हिमवन पर्वत		,, $\frac{2}{190}$,,
हैमवत क्षेत्र	आगे - आगे के	,, $\frac{4}{190}$,,
महा हिमवन पर्वत	पर्वत और क्षेत्र	,, $\frac{8}{190}$,,
हरि क्षेत्र	का दूना-२ विस्तार	,, $\frac{16}{190}$,,
निषध पर्वत	विदेह तक	,, $\frac{32}{190}$,,
विदेह क्षेत्र		,, $\frac{64}{190}$,,
नील पर्वत		
रम्यक क्षेत्र	विदेह से आगे-	उत्तर की रचना
रुक्मि पर्वत	आगे के पर्वत और	दक्षिण जैसी है।
हैरण्यवत क्षेत्र	क्षेत्रों का विस्तार	
शिखरी पर्वत	आधा-आधा है।	
ऐरावत क्षेत्र		

भरतैरावतयोर्वृद्धिहासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम्॥२७॥

सूत्रार्थ - भरत और ऐरावत क्षेत्रों में उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के छह समयों की अपेक्षा वृद्धि और हास होता रहता है॥२७॥

काल चक्र परिवर्तन

10 कोड़ा कोड़ी सागर	उत्सर्पिणी	जीवों के शरीर की ऊँचाई आयु आदि की क्रमशः वृद्धि
10 कोड़ा कोड़ी सागर	अवसर्पिणी	जीवों के शरीर की ऊँचाई आयु आदि की क्रमशः हानि
20 कोड़ा = 1 कल्प काल कोड़ी सागर		

एकद्वित्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहरिवर्षक दैवकुरवकाः॥२९॥

सूत्रार्थ - हैमवत, हरिवर्ष और दैवकुरु के मनुष्यों की स्थिति क्रम से एक, दो और तीन पल्योपम प्रमाण है॥२९॥

तथोत्तराः॥३०॥

सूत्रार्थ - दक्षिण के समान उत्तर में (स्थिति) है॥३०॥

विदेहेषु संख्येयकालाः॥३१॥

सूत्रार्थ - विदेहों में संख्यात वर्ष की आयु वाले मनुष्य हैं॥३१॥

ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थितः ॥२४॥
सूक्ष्मार्थ - भरत और ऐशवत के सिवा शेष भूमियाँ अवस्थित हैं ॥२४॥

क्र.	कालों के नाम	स्थिति प्रमाण	मनुष्यों की आयु	शरीर की ऊँचाई	वर्ण	आहार
भोग भूमि	1. सुषमा सुषमा	4 कोड़कोड़ी सागर	3 पल्य-2 पल्य	3 कोस-2 कोस	उदित सूर्य सदृश	3 दिन बाद बेर जितना
	2. सुषमा	3 कोड़कोड़ी सागर	2 पल्य- 1 पल्य	2 कोस-1 कोस	पूर्ण चन्द्र सदृश	2 दिन बाद बहेड़ा जितना
	3. सुषमा दुषमा	2 कोड़कोड़ी सागर	1 पल्य- 1 पूर्व कोटी	1 कोस- 500 धनुष	प्रियदृग् (हरा) सदृश	1 दिन बाद आँवले जितना
कर्म भूमि	4. दुषमा सुषमा	42,000 वर्ष कम 1 कोड़ा-कोड़ी सागर	1 पूर्व कोटी- 120 वर्ष	500 धनुष- 7 हाथ	पाँचों वर्ण	प्रतिदिन 1 बार
	5. दुषमा	21,000 वर्ष	120 वर्ष- 20 वर्ष	7 हाथ- 2 हाथ	पाँचों वर्ण कांतिहीन	बहुत बार
	6. दुषमा दुषमा	21,000 वर्ष	20 वर्ष- 15 वर्ष	2 हाथ- 1 हाथ	धूम्रवर्ण सदृश	बारम्बार, तीव्र गृद्धता के साथ

काल परिवर्तन भरत-ऐशवत क्षेत्रों में ही होता है। यह तालिका अवसर्पिणी काल की है, उत्सर्पिणी में इससे ठीक विपरीत होता है।

अवस्थित भूमियाँ के काल	
क्षेत्र का नाम	काल
देवकुल-उत्तर कुल	प्रथम काल-उत्तम भोगभूमि
हरि-स्यक	दूसरा काल-मध्यम भोगभूमि
हैमलत-हैरण्यलत	तीसरा काल-जघन्य भोगभूमि
विदेह	चौथे काल की आदि
कुम्भोग भूमि-अंतर्क्षिप्त	तीसरा काल तुल्य
मानुषोत्तर पवत से स्वयंग्रभ	तीसरा काल तुल्य
पर्वत तक असख्यात द्वीप एवं समुद्र	पंचम काल तुल्य
अंत का आधा स्वयंभूरमण द्वीप, स्वयंभूरमण समुद्र एवं चार कोने	पंचम काल तुल्य
देवगति	प्रथम काल तुल्य
नरकगति	छठा काल तुल्य

भरत एवं ऐशवत के पाँच स्तरों छह एवं विद्याधीरों की श्रेणियाँ उसी के अंत तक हानि-वृद्धि

द्विधातकीखण्डे॥३३॥

सूत्रार्थ - धातकीखण्ड में क्षेत्र तथा पर्वत आदि जम्बूद्वीप से दूने हैं॥३३॥

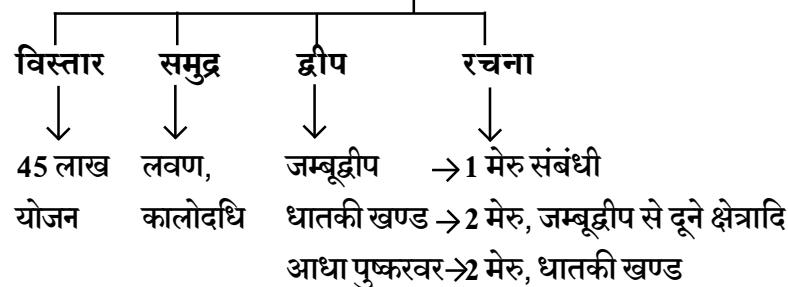
पुष्करार्थं च॥३४॥

सूत्रार्थ - पुष्करार्थ में उतने ही क्षेत्र और पर्वत हैं॥३४॥

प्राढ़मानुषोत्तरान्मनुष्याः॥३५॥

सूत्रार्थ - मानुषोत्तर पर्वत के पहले तक ही मनुष्य हैं॥३५॥

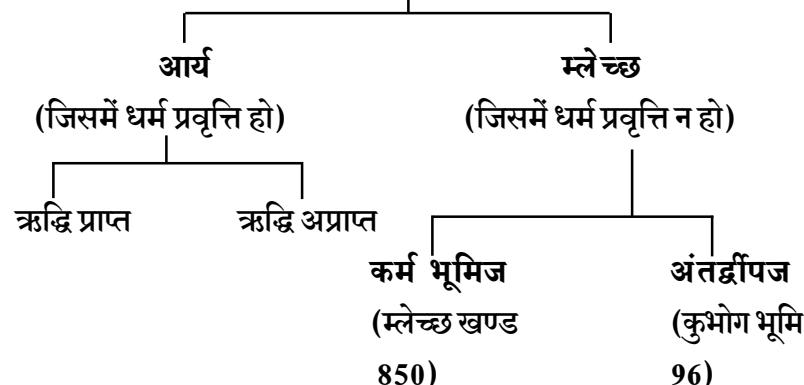
अढाई दीप (मनुष्य क्षेत्र/नर लोक)



मनुष्य मानुषोत्तर पर्वत तक ही होते हैं/
आर्यम्लेच्छाश्च॥३६॥

सूत्रार्थ - मनुष्य दो प्रकार के हैं- आर्य और म्लेच्छ॥३६॥

मनुष्यों के भेद



कुभोगभूमि मनुष्य

मनुष्य कैसे ?

1. एक जाँघ वाले, एक टाँग वाले, पूँछ वाले, गूँगे, सींग वाले मनुष्य
2. खरगोश के समान, साँकल के समान लम्बे कान वाले, एक कान वाले (जिसे ओढ़ व बिछा भी लें) मनुष्य
3. घोड़े, सिंह, कुत्ता, बकरा, हाथी, गाय, मेड़ा, मछली, भैंसा, सुअर, व्याघ्र, कौआ, बन्दर के समान मुख वाले मनुष्य
4. मेघ, बिजली, काल (मगर), दर्पण मुख वाले मनुष्य

अन्य विशेषता

1. गुफाओं में व पेड़ों पर रहते हैं।
2. मिट्टी का, फूलों का व फलों का आहार करते हैं।
3. सबकी आयु 1 पत्य है।

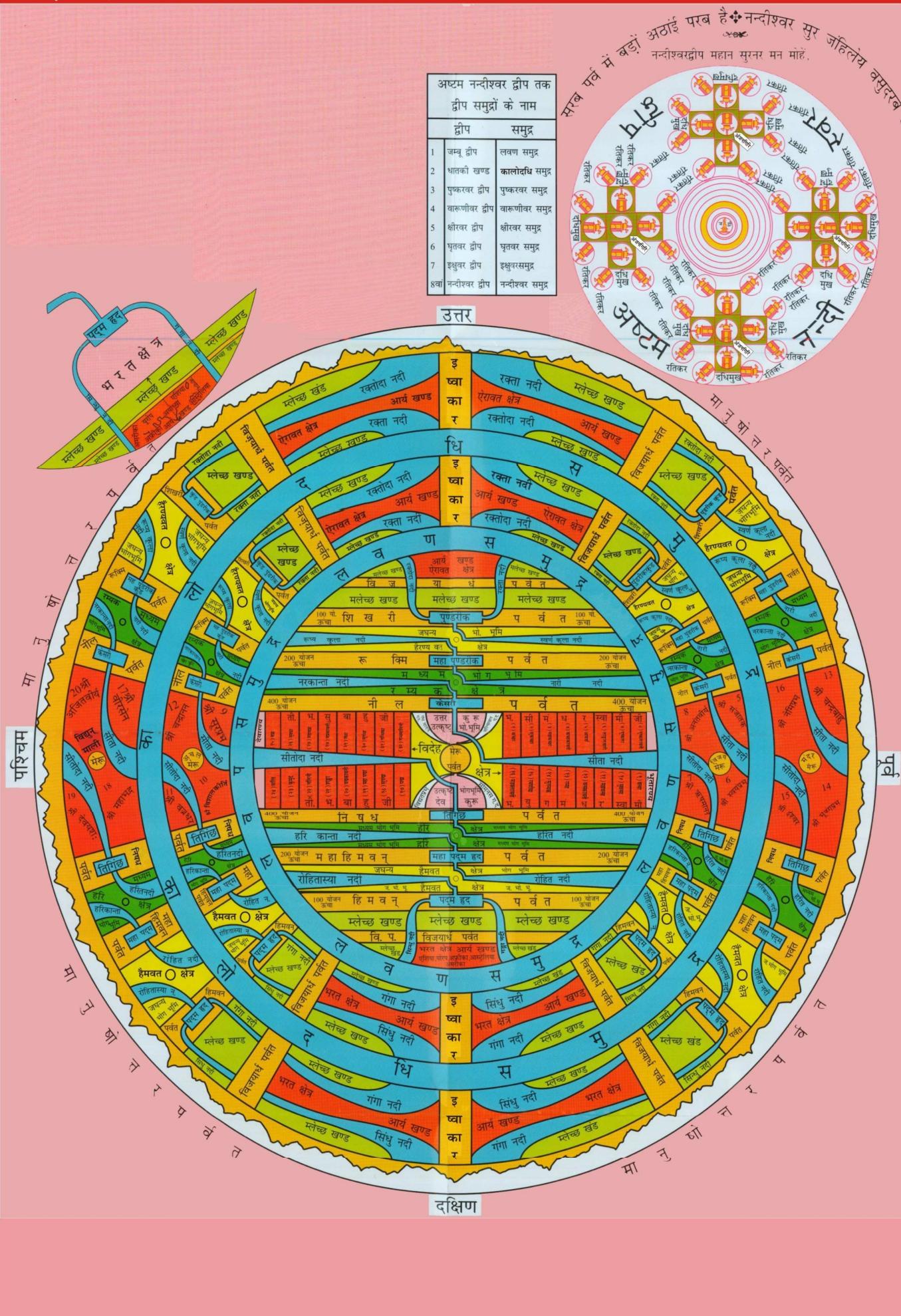
भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरुत्तरकुरुभ्यः॥३७॥

सूत्रार्थ - देवकुरु और उत्तरकुरु के सिवा भरत, ऐरावत और विदेह - ये सब कर्मभूमियाँ हैं॥३७॥

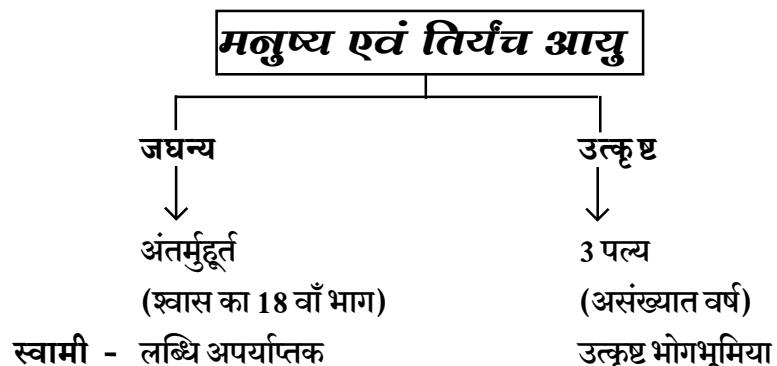
ढाईदीप में कर्मभूमि एवं भोग भूमि

15 कर्म- भूमियाँ	जहाँ असि, मसि, कृषि आदि कार्य हो पाँच भरत - 5 पाँच ऐरावत - 5 पाँच विदेह - 5 कुल - 15
30 भोग - भूमियाँ	जहाँ 10 प्रकार के कल्पवृक्षों से भोग सामग्री प्राप्त हो जघन्य भोगभूमि - हैमवत एवं हैरण्यवत - $2 \times 5 = 10$ मध्यम भोगभूमि - हरि एवं स्म्यक - $2 \times 5 = 10$ उत्कृष्ट भोगभूमि - देवकुरु एवं उत्तरकुरु - $2 \times 5 = 10$ कुल = 30

द्वाईद्वीप-नन्दीश्वरद्वीप मानचित्र



नृस्थिती परावरे त्रिपल्योपमान्तमुहूर्ते॥३८॥
 सूत्रार्थ-मनुष्यों की उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्योपम और जघन्य अन्तमुहूर्त है॥३८॥
 तिर्यग्योनिजानाभ्वा॥३९॥
 सूत्रार्थ - तिर्यचों की स्थिति भी उतनी ही है॥३९॥



तिर्यचों की आयु - विशेष

जीव	उत्कृष्ट आयु	जीव	उत्कृष्ट आयु
मूदु(शुद्ध)पृथ्वीकायिक	12000 वर्ष	तीन इन्द्रिय	49 दिन
कठोर पृथ्वीकायिक	22000 वर्ष	चार इन्द्रिय	6 मास
जलकायिक	7000 वर्ष	पंचेन्द्रिय जलचर	1 कोटि पूर्व
वायुकायिक	3000 वर्ष	सरीसर्प रंगने वाले पशु	9 पूर्वांग
अग्निकायिक	3 दिन	सर्प	42000 वर्ष
वनस्पतिकायिक	10000 वर्ष	पक्षी	72000 वर्ष
दो इन्द्रिय	12 वर्ष	चौपाये पशु	3 पल्य
सभी की जघन्य आयु अन्तमुहूर्त है।			

1 पूर्वांग = 84,00,000 वर्ष

1 पूर्व = 84,00,000 पूर्वांग = 70,56,000 करोड़ वर्ष

3 प्रकार के पल्य

नाम	व्यवहार पल्य	उद्धार पल्य	अद्वा पल्य
स्व-रूप	2000 कोस, गोल गहरे गहड़े में से प्रति 100 वर्ष में रोम निकालने जितने वर्ष	व्यवहार पल्य से असंख्यात कोटी गुणा	उद्धार पल्य से असंख्यात गुणा
कार्य	आगे के 2 पल्य निकालने आदि के लिए	द्वीप-समुद्रों की गणना के लिए	आयु, कर्म स्थिति शेष सभी स्थानों की गणना के लिए

सागर

अद्वा सागर = 10 कोड़ा कोड़ी × अद्वा पल्य

सूत्र से अन्य रचनाएँ	सूत्र से अन्य विषय
1. विजयार्द्ध पर्वत	1. तीर्थकरों की गणना
2. वृषभाचल पर्वत	2. त्रिकाल चौबीसी
3. गजदंत पर्वत	3. तीन लोक के अकृत्रिम चैत्यालय
4. जम्बूवृक्ष	4. मध्यलोक के अकृत्रिम चैत्यालय
5. विदेह क्षेत्र नगरियाँ अ) वक्षार गिरि ब) विभंगा नदी स) 6 खण्ड	
6. नाभिगिरि	
7. इष्वाकार पर्वत	

तीर्थकरों की गणना

क्षेत्र	कम से कम	ज्यादा से ज्यादा
पाँच विदेह	20 (8 नगरियों के बीच में 1)	160 (32 नगरियों में प्रत्येक में 1)
पाँच भरत	-	5
पाँच ऐरावत	-	5
कुल	20	170

त्रिकाल चौबीसी

5 भरत	5
5 ऐरावत	$+ 5 = 10$
भूत, भविष्य एवं वर्तमान सम्बन्धी	$\times 3 = 30$
चौबीस तीर्थकर	$\times 24$
अढ़ाई द्वीप की त्रिकाल चौबीसी	$= \underline{\underline{720}}$

तीन लोक के अकृत्रिम चैत्यालय

लोक का नाम	अकृत्रिम चैत्यालय
अधोलोक	7,72,00,000
उर्ध्वलोक	84,97,023
मध्यलोक	458
कुल	8,56,97,481

मध्यलोक के 458 अकृत्रिम चैत्यालय

एक मेरु सम्बन्धी चैत्यालय

मेरु पर	16
कुलाचल	6
गजदंत	4
विजयार्द्ध	34
वक्षारगिरि	16
जम्बूवृक्ष	1
शात्मली वृक्ष	1
कुल	78
पंच मेरु के	× 5

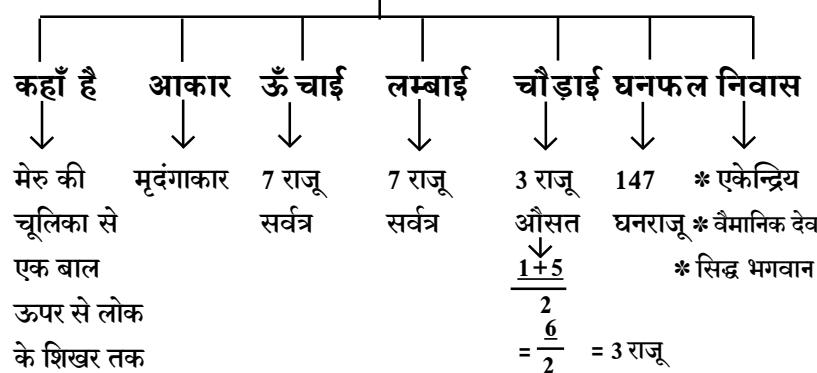
पंचमेरु सम्बन्धी	390
इष्वाकार पर्वत	4
मानुषोत्तर पर्वत	4
नन्दीश्वर द्वीप	52
कुण्डलवर द्वीप (11वाँ द्वीप)	4
रुचिकवर द्वीप (13 वाँ द्वीप)	4
कुल	458



चतुर्थ अध्याय

विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
ऊर्ध्व लोक (देवगति) का वर्णन			
देवों के प्रकार, लेश्या, सामान्य भेद	1-5	5	69-72
इन्द्रों की व्यवस्था	6	1	72
देवों का काम सेवन	7-9	3	73
देवों के भेदों के नाम	10-12	3	69-70
ज्योतिषी देवों का गमन एवं			
काल विभाग	13-15	3	74
वैमानिक देवों का वर्णन	16-26		74-82
सामान्य कथन एवं भेद	16-17, 23	3	74
रहने का स्थान एवं नाम	18-19	2	74-78
उत्तरोत्तर अधिकता एवं हीनता	20-21	2	80
लेश्या	22	1	75, 77
लौकान्तिक देव	24-25	2	81
द्विचरम भव कथन	26	1	82
तिर्यच कौन	27	1	82
देवों की आयु	28-42	15	75, 79, 85-87
कुल	42		

ऊर्ध्वलोक



देवाश्चतुर्णिकायाः ॥१॥

सूत्रार्थ - देव चार निकाय (समूह) वाले हैं ॥१॥

आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥२॥

सूत्रार्थ - आदि के तीन निकायों में पीत पर्यन्त चार लेश्याएँ हैं ॥२॥

दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥३॥

सूत्रार्थ - वे कल्पोपपन्न देव तक के चार निकाय के देव क्रम से दस, आठ, पाँच और बारह भेद वाले हैं ॥३॥

इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशपारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकाभियोग्य किल्विषिकाश्चैकशः ॥४॥

सूत्रार्थ - उक्त दस आदि भेदों में-से प्रत्येक इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश, पारिषद, आत्मरक्ष, लोकपाल, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोग्य और किल्विषिक रूप हैं ॥४॥

त्रायस्त्रिंशलोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्काः ॥५॥

सूत्रार्थ - किन्तु व्यन्तर और ज्योतिष्क देव त्रायस्त्रिंश और लोकपाल इन दो भेदों से रहित हैं ॥५॥

सूत्र क्रमांक ६ से ९ तक के लिए आगे देखें !

भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपण्डिनिवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥१०॥

सूत्रार्थ - भवनवासी देव दस प्रकार के हैं - असुरकुमार, नागकुमार, विद्युत्कुमार, सुपर्णकुमार, अग्निकुमार, वातकुमार, स्तनितकुमार, उदधिकुमार, द्वीपकुमार और दिक्कुमार ॥१०॥

व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोरगं धर्वर्यक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥११॥

सूत्रार्थ - व्यन्तर देव आठ प्रकार के हैं - किन्नर, किम्पुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत और पिशाच ॥११॥

ज्योतिष्काः सूर्याचिन्द्रमसौग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकितारकाश्च ॥१२॥

सूत्रार्थ - ज्योतिषी देव पाँच प्रकार के हैं - सूर्य, चन्द्रमा, ग्रह, नक्षत्र और प्रकीर्णक तारे ॥१२॥

देवों के प्रकार (निकाय)

नाम	भवनवासी	व्यंतर	ज्योतिषी	वैमानिक
स्वरूप	जो भवनों में निवास करते हैं	जिनका नाना प्रकार के देशों में निवास है	जो ज्योतिर्मय विमानों में निवास करते हैं	जो विमानों में निवास करते हैं
भेद	10	8	5	12 (कल्यापन तक)
भेदों के नाम		देखिए सूत्रार्थ		
	10	11	12	17
प्रत्येक के सामान्य भेद (इन्द्र, सामानिक आदि)	10	8 (त्रायस्त्रिंश व लोकपाल को छोड़कर शेष सभी)	8 (त्रायस्त्रिंश व लोकपाल को छोड़कर शेष सभी)	10

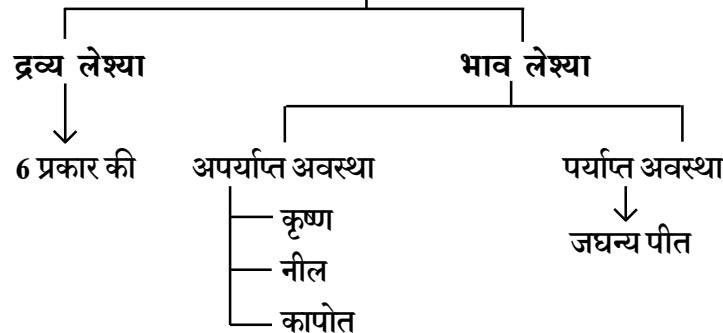
10 सामान्य भेद

भेद	दृष्टांत
इन्द्र	राजा
सामानिक	पिता, गुरु, उपाध्याय
त्रायस्त्रिंश	मंत्री, पुरोहित
पारिषद	सभा सदस्य (मित्र, परिजन)
आत्मरक्ष	अंगरक्षक
लोकपाल	कोतवाल
अनीक	सात प्रकार की सेना
प्रकीर्णक	नगरवासी
आभियोग्य	हाथी - घोड़ा आदि वाहन
किल्विषिक	चाण्डालादिक

चार निकाय के देवों का निवास

निकाय	भवनवासी	व्यंतर	ज्योतिषी	वैमानिक
लोक	* अधोलोक * मध्यलोक	* अधोलोक * मध्यलोक	* मध्यलोक	* ऊर्ध्व लोक
निवास स्थान	अधोलोक * असुरकुमार रत्नप्रभा पृथिवी के पंक भाग में * शेष 9 प्रकार - रत्नप्रभा पृथिवी के खर भाग में	अधोलोक * राक्षस-रत्नप्रभा पृथिवी के पंक भाग में * शेष 7 प्रकार रत्नप्रभा पृथिवी के खर भाग में	* चित्रा पृथिवी से 790 योजन ऊपर से 900 योजन तक है	* सौधर्म स्वर्ग के प्रथम पट्टल के विमान से प्रारम्भ कर सर्वार्थसिद्धि विमान तक
	पृथिवी के खरभाग में	मध्यलोक * भवन भवनपुर और आवास	* चित्रा पृथिवी पर द्वीप, पर्वत, समुद्र, देश, ग्राम, नगर, गृहों के आँगन, रास्ता, गली, बाग, बन आदि में	है

भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी (भवनत्रिक) देवों की लेश्याएँ



पूर्वयोद्धान्द्राः॥६॥

सूत्रार्थ - प्रथम दो निकायों में दो-दो इन्द्र हैं॥६॥

इन्द्रों की व्यवस्था

नाम	भेद	प्रत्येक में इन्द्र	प्रत्येक में प्रतीन्द्र (राजकुमार तुल्य)	कुल इन्द्र एवं प्रतीन्द्र
भवनवासी	10	2	2	= $10 \times 2 \times 2 = 40$
व्यंतर	8	2	2	= $8 \times 2 \times 2 = 32$
ज्योतिषी		(चन्द्रमा) + (सूर्य)		= 2
वैमानिक	शुरू के 4 स्वर्ग = 4 इन्द्र बीच के 8 स्वर्ग = 4 इन्द्र अंत के 4 स्वर्ग = 4 इन्द्र = $12 \times 2 = 24$ (इन्द्र + प्रतीन्द्र)			
मनुष्य	चक्रवर्ती		1	
तिर्यच	सिंह		1	
कुल इन्द्र			= <u>100</u>	

कायप्रवीचारा आ ऐशानात्॥७॥

सूत्रार्थ - ऐशान तक के देव कायप्रवीचार अर्थात् शरीर से विषय-सुख भोगने वाले होते हैं॥७॥

शेषा: स्पर्शरूपशब्दमनः प्रवीचाराः॥८॥

सूत्रार्थ-शेष देव स्पर्श, रूप, शब्द और मन से विषय-सुख भोगने वाले होते हैं॥८॥
परेऽप्रवीचाराः॥९॥

सूत्रार्थ - बाकी के सब देव विषय-सुख से रहित होते हैं॥९॥

प्रवीचार (मैथुन-काम सेवन)

कैसे प्रवीचार	काय	स्पर्श	रूप	शब्द	मन	प्रवीचार रहित
स्वरूप	मनुष्य के समान संकलेश पूर्वक शरीर के द्वारा	शरीर के स्पर्श करने मात्र से	सुन्दर शृंगार, आकार, विलास, चतुर, मनोज्ञ वेश रूप, लावण्य के देखने मात्र से	मधुर गीत, कोमल हास्य, कोमल वचन, आभूषणों की ध्वनि	एक-दूसरे का मन में संकल्प मात्र करने से	विषय वेदना का अभाव
कौन-कौन से स्वर्ग में	* भवनवासी * व्यंतर * ज्योतिषी * पहला, दूसरा स्वर्ग (1-2)	तीसरा, चौथा स्वर्ग (3-4)	पाँचवें से आठवाँ स्वर्ग (5-8)	नौवें से बारहवाँ स्वर्ग (9-12)	तेरहवें से सोलहवाँ स्वर्ग (13-16)	कल्पातीत

मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयो नूलोके ॥13॥

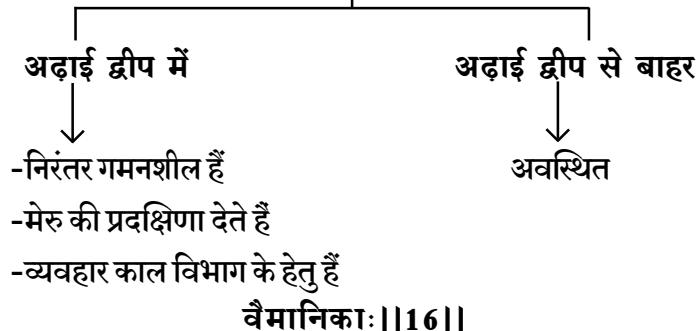
सूत्रार्थ - ज्योतिषी देव मनुष्यलोक में मेरु की प्रदक्षिणा करते हैं और निरन्तर गतिशील हैं ॥13॥

तत्कृतः कालविभागः ॥14॥

सूत्रार्थ - उन गमन करने वाले ज्योतिषियों के द्वारा किया हुआ काल विभाग है ॥14॥
बहिरवस्थिताः ॥15॥

सूत्रार्थ - मनुष्य-लोक के बाहर ज्योतिषी देव स्थिर रहते हैं ॥15॥

ज्योतिषी देव



सूत्रार्थ - चौथे निकाय के देव वैमानिक हैं ॥16॥

कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ॥17॥

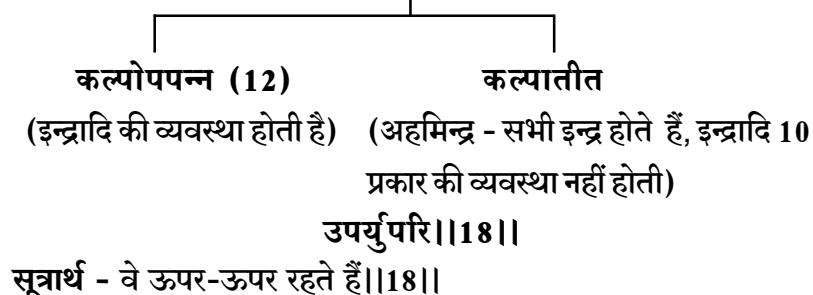
सूत्रार्थ - वे दो प्रकार के हैं - कल्पोपपन्न और कल्पातीत ॥17॥

सूत्र क्रमांक 18 से 22 तक के लिए आगे देखें!

प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥23॥

सूत्रार्थ - ग्रैवेयकों से पहले तक कल्प हैं ॥23॥

वैमानिक



सौधर्मेशानसानत्कुमारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलान्तवकापिष्ठशुक्रमहाशुक्रशतार सहस्रारेष्वानतप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्त- जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥19॥

सूत्रार्थ - सौधर्म, ऐशान, सानत्कुमार, माहेन्द्र, ब्रह्म, ब्रह्मोत्तर, लान्तव, कापिष्ठ, शुक्र, महाशुक्र, शतार और सहस्रार तथा आनत-प्राणत, आरण-अच्युत, नौ ग्रैवेयक और विजय, वैजयन्त, जयन्त, अपराजित तथा सर्वार्थसिद्धि में वे निवास करते हैं ॥19॥

पीतपद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु ॥22॥

सूत्रार्थ - दो, तीन, कल्प युगलों में और शेष में क्रम से पीत, पद्म और शुक्ल लेश्यावाले देव हैं ॥22॥

सौधर्मेशानयोः सागरोपमे अधिके ॥29॥

सूत्रार्थ - सौधर्म और ऐशान कल्प में दो सागरोपम से कुछ अधिक उत्कृष्ट स्थिति है ॥29॥
सानत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥30॥

सूत्रार्थ - सानत्कुमार और माहेन्द्र कल्प में सात सागरोपम से कुछ अधिक उत्कृष्ट स्थिति है ॥30॥

त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चदशभिरधिकानि तु ॥31॥

सूत्रार्थ - ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर युगल से लेकर प्रत्येक युगल में आरण-अच्युत तक क्रम से साधिक तीन से अधिक सात सागरोपम, साधिक सात से अधिक सात सागरोपम, साधिक नौ से अधिक सात सागरोपम, साधिक ग्यारह से अधिक सात सागरोपम, तेरह से अधिक सात सागरोपम और पन्द्रह से अधिक सात सागरोपम उत्कृष्ट स्थिति है ॥31॥

आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥32॥

सूत्रार्थ - आरण-अच्युत के ऊपर नौ ग्रैवेयक में से प्रत्येक में, नौ अनुदिश में, चार विजयादिक में एक-एक सागरोपम अधिक उत्कृष्ट स्थिति है तथा सर्वार्थसिद्धि में पूरी तीनीस सागरोपम स्थिति है ॥32॥

अपरा पल्योपममधिकम् ॥33॥

सूत्रार्थ - सौधर्म और ऐशान कल्प में जघन्य स्थिति साधिक एक पल्योपम है ॥33॥

परतः परतः पूर्वपूर्वाऽनन्तरा ॥34॥

सूत्रार्थ - आगे-आगे पूर्व-पूर्व की उत्कृष्ट स्थिति अनन्तर-अनन्तर की जघन्य स्थिति है ॥34॥

लौकान्तिकानामष्टै सागरोपमाणि सर्वेषाम्॥42॥

सूत्रार्थ - सब लौकान्तिकों की स्थिति आठ सागरोपम है॥42॥

तैमानिक देव

नाम	इन्द्र	क्षेत्र (राजू में)	पटल	विमान संख्या	विमान वर्ण
सौधर्म-ऐशान	2	1 1/2	31	60 लाख (32+28)	काला, नीला, लाल, पीला, शुक्ल
सानत्कुमार -महेन्द्र	2	1 1/2	7	20 लाख (12+8)	काले बिना शेष 4
ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर	1	1/2	4	4 लाख	लाल, पीला
लांतव-कापिष्ठ	1	1/2	2	50000	शुक्ल
शुक्र-महाशुक्र	1	1/2	1	40000	नीला एवं शुक्ल
शतार-सहस्रार	1	1/2	1	6000	
आनत-प्राणत	2	1/2	6	700	शुक्ल
आरण-अच्युत	2	1/2			
कल्पोपपन्न संबंधी जोड़	12	6	52	84,96,700	
कल्पातीत 9 ग्रैवेयक (3 अधो + 3 मध्य + 3 ऊर्ध्व ग्रैवेयक)	-	1	9	309 (111+ 107+91)	शुक्ल
9 अनुदिश	-		1	9	शुक्ल
5 अनुत्तर	-		1	5	शुक्ल
कुल (कल्पोपपन्न + कल्पातीत)		7	63	84,97,023	

तैमानिक देव

स्वर्ग	विमान आधार	अवधिज्ञान क्षेत्र	गमन क्षेत्र		भाव लेश्या
			स्व से	ऊपर के देव की सहायता से	
1-2	जल	कुछ अधिक 1 1/2 राजू (नीचे-1 नरक)	3 1/2 राजू (1 1/2+2)		मध्यम पीत
3-4	वायु	4 राजू (नीचे- (3+1) 2 नरक)	5 राजू		उत्कृष्ट पीत जघन्य पद्म
5-6	ज	5 1/2 राजू (3 1/2+2)	5 1/2 राजू		मध्यम पद्म
7-8	ल एवं	6 राजू (4+2)	6 राजू (नीचे- 3 नरक)	8 राजू (ऊपर-	मध्यम पद्म
9-10	वा	7 1/2 राजू (4 1/2+3)	6 1/2 राजू (नीचे-	16 स्वर्ग तक, नीचे-3 नरक तक)	उत्कृष्ट पद्म, जघन्य शुक्ल
11-12	यु	8 राजू (5+3)	7 राजू (4 नरक)		उत्कृष्ट पद्म, जघन्य शुक्ल
13-14	आ	9 1/2 राजू (5 1/2+4)	5 1/2 राजू (नीचे-	स्व व पर मिलाकर	मध्यम शुक्ल
15-16	का	10 राजू (6+4)	6 राजू (5 नरक)	6 राजू	मध्यम शुक्ल
कल्पा- तीत 9			कुछ अधिक 11 राजू (6+5) (नीचे-6 नरक)		मध्यम शुक्ल
ग्रैवेयक				अपने विमानों को	
9	श		कुछ अधिक 13 राजू	छोड़कर अन्यत्र गमन का अभाव	परम शुक्ल
अनुदिश				है।	
5			कुछ कम 14 राजू		परम शुक्ल
अनुत्तर					

तैमानिक देव

स्वर्ग हाथ में	शरीर की ऊँचाई (उत्कृष्ट)	इन्द्र की देवांगनाएँ		
		पट्ट	प्रत्येक पट्ट देवांगना	परिवार देवांगना
सौधर्म-ऐशान	7	8-8	16,000	1,28,000
सानकुमार-माहेन्द्र	6	8-8	32,000	64,000
ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर	5	8-8	64,000	32,000
लांतव-कापिष्ठ	5	8-8	1,28,000	16,000
शुक्र-महाशुक्र	4	8-8	2,56,000	8,000
शतार-सहस्रार	4	8-8	5,12,000	4,000
आनन्द-प्राणत	3.5	8-8	10,24,000	2,000
आरण-अच्युत	3	8-8	10,24,000	2,000
कल्पातीत				
9 ग्रैवेयक (3 अधो 3 मध्य 3 ऊर्ध्व)	2 ¹ / ₂ 2 1 ¹ / ₂		देवांगनाएँ	
9 अनुदिश	1		नहीं होती	
5 अनुन्तर	1		हैं	

तैमानिक देव

स्वर्ग	आयु		देवांगना	आहारेच्छा अंतराल (उत्कृष्ट) (वर्ष में)	श्वासोच्छ्वास अंतराल (उत्कृष्ट) (पक्ष में)
	जघन्य	उत्कृष्ट (सागर में)	उत्कृष्ट आयु (पल्य में)		
1-2	कुछ अधिक पल्य	2	5 व 7	2,000	2
3-4	पीछे- पीछे	7	9 व 11	7,000	7
5-6 \$	पीछे- पीछे	10	13 व 15	10,000	10
7-8	स्वर्ग की उत्कृष्ट	14	17 व 19	14,000	14
9-10	आयु में	16	21 व 23	16,000	16
11-12	एक समय अधिक	18	25 व 27	18,000	18
13-14	करने पर	20	34 व 41	20,000	20
15-16	कल्पातीत आगे- आगे के	22	48 व 55	22,000	22
नव	स्वर्ग की जघन्य	23-31		23,000- 31,000	23-31
नव	आयु होती है	32		32,000	32
अनुदिश		33		33,000	33
# पंच					
अनुन्तर					

\$ सभी लौकान्तिक देवों की आयु आठ सागर की होती है।

सर्वार्थसिद्धि के देवों की जघन्य व उत्कृष्ट आयु तैतीस सागर की ही होती है।

1. घातायुक्ष सम्यग्दृष्टि देवों की अपेक्षा पहले से बाहरवें स्वर्ग में उत्कृष्ट आयु अपनी-अपनी उपर्युक्त वर्णित उत्कृष्ट आयु से अंतर्मुहूर्त कम आधा सागर अधिक होती है।
2. घातायुक्ष मिथ्यादृष्टि देवों की अपेक्षा पल्य के असंख्यातर्वें भाग से अधिक होती है।

स्थितिप्रभावसुखद्युतिलेश्याविशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः॥२०॥
सूत्रार्थ - स्थिति, प्रभाव, सुख, द्युति, लेश्याविशुद्धि, इन्द्रियविषय और
अवधि विषय की अपेक्षा ऊपर-ऊपर के देव अधिक हैं॥२०॥

वैमानिक देवों में उत्तरोत्तर अधिकता

स्थिति	प्रभाव	सुख	द्युति	लेश्या	इन्द्रिय	अवधि
(आयु) (पर का भला (इन्द्रिय -बुरा करने की शक्ति) सामग्री)	(इन्द्रिय की शक्ति) सामग्री)	(शरीर, वस्त्र की शक्ति)	(भाव) ज्ञान	ज्ञान	ज्ञान	चमक)

गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः॥२१॥

सूत्रार्थ - गति, शरीर, परिग्रह और अभिमान की अपेक्षा ऊपर-ऊपर के देव
हीन हैं॥२१॥

वैमानिक देवों में उत्तरोत्तर हीनता

गति	शरीर	परिग्रह	अभिमान
(गमन की इच्छा)	(ऊँचाई)	(ममता का परिणाम)	(अहंकार)

ब्रह्मलोकालया लौकान्तिकाः॥२४॥

सूत्रार्थ - लौकान्तिक देवों का ब्रह्मलोक निवासस्थान है॥२४॥

सारस्वतादित्यवहन्यरुणगर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च॥२५॥

सूत्रार्थ - सारस्वत, आदित्य, वह्नि, अरुण, गर्दतोय, तुषित, अव्याबाध और
अरिष्ट - ये लौकान्तिक देव हैं॥२५॥

लौकान्तिक देव

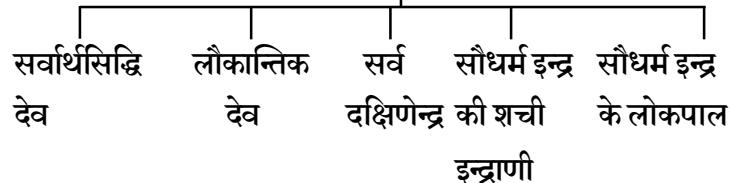
निवास	पाँचवें ब्रह्म स्वर्ग के अंत में, 8 दिशाओं में
नाम की सार्थकता	लोक + अंत = ब्रह्म स्वर्ग + अंत (में निवास जिनका) लोक (संसार) + अंत = संसार का अंत निकट जिनका
भेद	1. सारस्वत 2. आदित्य 3. वह्नि 4. अरुण 5. गर्दतोय 6. तुषित 7. अव्याबाध 8. अरिष्ट 8+(16 अन्य) = 24 भेद
कुल संख्या	4,07,820
विशेषता	1. स्वतन्त्र 2. परस्पर हीनाधिकता से रहित 3. ब्रह्मचारी 4. चौदह पूर्व के पाठी 5. सम्यग्दृष्टि 6. संसार से विरक्त 7. देवर्षि 8. तीर्थकरों के तप कल्याणक में ही आते हैं।

विजयादिषु द्विचरमा:॥२६॥

सूत्रार्थ - विजयादिक में दो चरमवाले देव होते हैं॥२६॥



१ अनुदिश



आैपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः॥२७॥

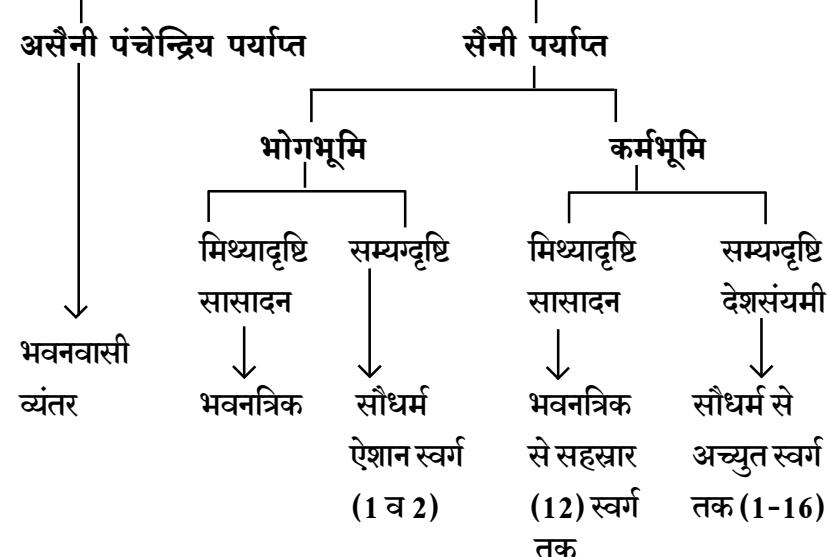
सूत्रार्थ - उपपाद जन्मवाले और मनुष्यों के सिवा शेष सब जीव तिर्यच योनि वाले हैं॥२७॥

तिर्यच कौन है

संसारी जीव

- उपपाद जन्म वाले देव व नारकी
- मनुष्य
- = तिर्यच

कौन तिर्यच किस स्वर्ण में उत्पन्न होता है



एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय तिर्यच देवों में उत्पन्न नहीं होते हैं।

कौन मनुष्य किस स्वर्ग में उत्पन्न होता है?

मनुष्य	उत्पत्ति स्वर्ग
1) भोगभूमिया - मिथ्यादृष्टि व सासादन गुणस्थानवर्ती	भवनत्रिक
सम्यग्दृष्टि	सौधर्म-ऐशान स्वर्ग (1 व 2)
2) कुभोगभूमिया मिथ्यादृष्टि व सासादन गुणस्थानवर्ती	भवनत्रिक
सम्यग्दृष्टि	सौधर्म-ऐशान स्वर्ग (1 व 2)
3) कर्मभूमिया - मिथ्यादृष्टि व सासादन गुणस्थानवर्ती	भवनवासी से अच्युत स्वर्ग (16) तक
सम्यग्दृष्टि व देशसंयमी	सौधर्म से अच्युत स्वर्ग (1-16)
द्रव्य जिनलिंगी	ग्रैवेयक तक
सकल संयमी-भावलिंगी मुनि	सौधर्म से सर्वार्थसिद्धि तक
अभव्य जिनलिंगी	ग्रैवेयक तक
परिव्राजक तपस्वी	ब्रह्म स्वर्ग तक (5 तक)
आजीवक, कांजी आहारी, अन्य लिंगी	सहस्रार स्वर्ग तक (12 तक)
देव और नारकी मरकर देवों में उत्पन्न नहीं होते।	

कौन देव मरकर कहाँ उत्पन्न होते हैं

सभी देव मरकर देवों में, नरकों में, भोगभूमिया में, विकलत्रय, असैनी पंचेन्द्रिय, सूक्ष्म एकेन्द्रिय, बादर अग्नि व वायु, सभी अपर्याप्तिकों में उत्पन्न नहीं होते हैं।

1) भवनवासी से ऐशान (2) तक	-बादर पर्याप्त एकेन्द्रिय, -पंचेन्द्रिय सैनी तिर्यच व मनुष्य
2) सानकुमार से सहस्रार (3-12) तक	पंचेन्द्रिय सैनी तिर्यच व मनुष्य (एकेन्द्रिय नहीं होते)
3) आनत (13) स्वर्ग से ऊपर के	मनुष्य ही होते हैं (तिर्यच नहीं होते)

63 शलाका पुरुषों सम्बन्धी विशेषता

-भवनत्रिक के देव	63 शलाका पुरुष नहीं होते हैं
-सौधर्म से ग्रैवेयक तक के देव	63 शलाका पुरुषों में उत्पन्न हो सकते हैं
-अनुदिश व अनुत्तर के देव	तीर्थकर, चक्रवर्ती, बलभद्र तो हो सकते हैं। नारायण, प्रतिनारायण नहीं हो सकते हैं।

स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणां सागरोपमत्रिपत्योपमाद्भ-
हीनमिताः ॥२८॥

सूत्रार्थ - असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार, द्वीपकुमार और शेष भवनवासियों की उत्कृष्ट स्थिति क्रम से एक सागरोपम, तीन पत्योपम, ढाई पत्योपम, दो पत्योपम और डेढ़ पत्योपम होती है ॥२८॥

सूत्र क्रमांक ३५ और ३६ के लिए आगे देखें!
भवनेषु च ॥३७॥

सूत्रार्थ - भवनवासियों में भी दस हजार वर्ष जघन्य स्थिति है ॥३७॥
व्यन्तराणाम् च ॥३८॥

सूत्रार्थ - व्यन्तरों की दस हजार वर्ष जघन्य स्थिति है ॥३८॥

परा पत्योपममधिकम् ॥३९॥

सूत्रार्थ - और उत्कृष्ट स्थिति साधिक एक पत्योपम है ॥३९॥

ज्योतिष्काणां च ॥४०॥

सूत्रार्थ - ज्योतिषियों की उत्कृष्ट स्थिति साधिक एक पल्योपम है ॥४०॥
तदष्टभागोऽपरा ॥४१॥

सूत्रार्थ - ज्योतिषियों की जग्न्य स्थिति उत्कृष्ट स्थिति का आठवाँ भाग है ॥४१॥

भवनग्रिक-आयु आदि

देवों के नाम	आयु		देवांगना आयु	आहारेच्छा अतराल
	जग्न्य	उत्कृष्ट		
भवनवासी				
असुरकुमार	10 हजार वर्ष	1 सागर	3 पल्य	1000 वर्ष
नागकुमार	10 हजार वर्ष	3 पल्य	पल्य/8	12 $\frac{1}{2}$ दिन
सुपर्णकुमार	10 हजार वर्ष	2 $\frac{1}{2}$ पल्य	3 पूर्व कोटी	12 $\frac{1}{2}$ दिन
द्वीपकुमार	10 हजार वर्ष	2 पल्य	3 करोड़ वर्ष	12 $\frac{1}{2}$ दिन
शेष 6 प्रकार	10 हजार वर्ष	1 $\frac{1}{2}$ पल्य	3 करोड़ वर्ष	प्रथम 3 प्रकार 12 दिन, शेष 3 प्रकार 7 $\frac{1}{2}$ दिन
व्यंतर	10 हजार वर्ष	1 पल्य	पल्य/2	कुछ अधिक 5 दिन
ज्योतिषी	पल्य /8	1 पल्य	सभी ज्योतिषी देवांगनाओं की अपने देवों की आयु के आधे प्रमाण	
चन्द्र		पल्य + 1 वर्ष		
सूर्य	पल्य/4	पल्य + 1000 वर्ष		
ग्रह		पल्य+ 100 वर्ष		
नक्षत्र	पल्य/8	पल्य/2		
तारे		पल्य/4		

भवनग्रिक-आयु आदि

देवों के नाम	उच्छ्वास अंतराल	शरीर की ऊँचाई	अविधि ज्ञान(क्षेत्र)		अवधि ज्ञान(काल)	
			जग्न्य	उत्कृष्ट	जग्न्य	उत्कृष्ट
भवनवासी						
असुरकुमार	1पक्ष बाद	25 धनुष (37.5 मीटर)			असंख्यात कोटी योजन	असंख्यात वर्ष
नागकुमार	12 $\frac{1}{2}$ मुहूर्त बाद					
सुपर्णकुमार	प्रथम 3 प्रकार	10 धनुष (15 मी.)	25	असंख्यात हजार योजन	कुछ कम 1 दिन	असुर- कुमार का संख्या- तवाँ भाग
द्वीपकुमार	12 मुहूर्त, शेष 3 प्रकार					
शेष 6 प्रकार	7 मुहूर्त					
व्यंतर	कुछ अधिक 5 मुहूर्त	"	"	"	"	"
ज्योतिषी		7 धनुष (लगभग 10 मीटर)	व्यंतर से संख्यात गुणा	"	व्यंतर से बहुत अधिक	"

जिन व्यंतर देवों की आयु मात्र 10 हजार वर्ष है, उनका आहार
दो दिन बाद और श्वासोच्छ्वास सात प्राणापान बाद होता है।

नारकियों की आयु का वर्णन तीसरे अध्याय से देखें।

नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥३५॥

सूत्रार्थ - दूसरी आदि भूमियों में नारकों की पूर्व-पूर्व की उत्कृष्ट स्थिति ही
अनन्तर-अनन्तर की जग्न्य स्थिति है ॥३५॥

दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥३६॥

सूत्रार्थ - प्रथम भूमि में दस हजार वर्ष जग्न्य स्थिति है ॥३६॥

पञ्चम अध्याय

विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
अजीवास्तिकाय के भेद	1	1	88-89
द्रव्य उनकी विशेषता व स्वरूप	2-7	6	88-90
द्रव्यों की प्रदेश संख्या	8-11	4	91
द्रव्यों के रहने का स्थान (अवगाह क्षेत्र)	12-16	5	92
द्रव्यों का उपकार	17-22	6	93-96
पुद्गल का लक्षण व उसकी पर्यायें	23-24	2	97-99
पुद्गल के भेद व उत्पत्ति के कारण	25-28	4	100-101
द्रव्य, सत् व नित्य का लक्षण	29-31,38	4	102-103,106-108
विरुद्ध धर्मों की एक वस्तु में सिद्धि	32	1	104
पुद्गल के बंध के हेतु व नियम	33-37	5	104-106
काल का वर्णन	39-40	2	109-110
गुण व पर्याय का स्वरूप	41-42	2	111
कुल	42		

अजीवकाया धर्मधर्माकाशपुद्गलाः॥1॥

सूत्रार्थ - धर्म, अधर्म, आकाश और पुद्गल - ये अजीवकाय हैं॥1॥

द्रव्याणि॥2॥

सूत्रार्थ - ये धर्म, अधर्म, आकाश और पुद्गल द्रव्य हैं॥2॥

जीवाश्च॥3॥

सूत्रार्थ - जीव भी द्रव्य हैं॥3॥

नित्यावस्थितान्यरूपाणि॥4॥

सूत्रार्थ - उक्त द्रव्य नित्य हैं, अवस्थित हैं और अरूपी हैं॥4॥

रूपिणः पुद्गलाः॥5॥

सूत्रार्थ - पुद्गल रूपी हैं॥5॥

आ आकाशादेकद्रव्याणि॥6॥

सूत्रार्थ - आकाश तक एक-एक द्रव्य हैं॥6॥

निष्क्रियाणि च॥7॥

सूत्रार्थ - तथा निष्क्रिय हैं॥7॥

छठ द्रव्य

नाम	जीव	पुद्गल	धर्म	अधर्म	आकाश	काल
स्वरूप	उपयोग	जिसमें स्पर्श, रस, गंध व वर्ण पाए जाएँ	जीव व पुद्गलों को गमन में सहकारी	जीव व पुद्गलों ठहरने में सहकारी	सभी को अवकाश में सहकारी	सभी को परिणमन में सहकारी
द्रव्य अर्थात् (गुणों का समूह)	✓	✓	✓	✓	✓	✓
अजीव द्रव्य (जिसमें चेतनान हो)		✓	✓	✓	✓	✓
काय (बहुप्रदेशी)	✓	✓	✓	✓	✓	
अजीव काय (दोनों)		✓	✓	✓	✓	
नित्य (कभी नष्ट न हो)	✓	✓	✓	✓	✓	✓
अवस्थित (संख्याक्रम ज्ञादा न हो)	✓	✓	✓	✓	✓	✓

नाम	जीव	पुद्गल	धर्म	अधर्म	आकाश	काल
अरूपी (वर्णादि रहित)	✓		✓	✓	✓	✓
रूपी (वर्णादि सहित)		✓				
निष्क्रिय (क्षेत्रान्तर और परिस्पन्दन क्रिया रहित)			✓	✓	✓	✓
द्रव्यों की संख्या	अनंत	अनंत	एक	एक	एक	असंख्यात
एक संख्या			✓	✓	✓	
अनंत संख्या	✓	✓				
असंख्यात संख्या						✓

असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम्॥८॥

सूत्रार्थ - धर्म, अधर्म और एक जीव के असंख्यात प्रदेश हैं॥८॥

आकाशस्यानन्ताः॥९॥

सूत्रार्थ - आकाश के अनन्त प्रदेश हैं॥९॥

संख्येयाऽसंख्येयाश्च पुद्गलानाम्॥१०॥

सूत्रार्थ - पुद्गलों के संख्यात, असंख्यात और अनन्त प्रदेश हैं॥१०॥

नाणोः॥११॥

सूत्रार्थ - परमाणु के प्रदेश नहीं होते॥११॥

द्रव्यों के प्रदेश

(उनका नाप)

जीव	पुद्गल	धर्म	अधर्म	आकाश	काल
असंख्यात (एक जीव)	* अणु अवस्था - एक	असंख्यात	असंख्यात	अनंत	एक
	* स्कंध अवस्था - संख्यात -असंख्यात - अनंत				

प्रदेश = आकाश के जितने हिस्से को एक पुद्गल परमाणु रोके।

लोकाकाशेऽवगाहः॥१२॥

सूत्रार्थ - इन धर्मादिक द्रव्यों का अवगाह लोकाकाश में है॥१२॥

धर्माधर्मयोः कृत्स्ने॥१३॥

सूत्रार्थ - धर्म और अधर्म द्रव्य का अवगाह समग्र लोकाकाश में है॥१३॥

एकप्रदेशादिषु भाज्याः पुद्गलानाम्॥१४॥

सूत्रार्थ - पुद्गलों का अवगाह लोकाकाश के एक प्रदेश आदि में विकल्प से होता है॥१४॥

असंख्येयभागादिषु जीवानाम्॥१५॥

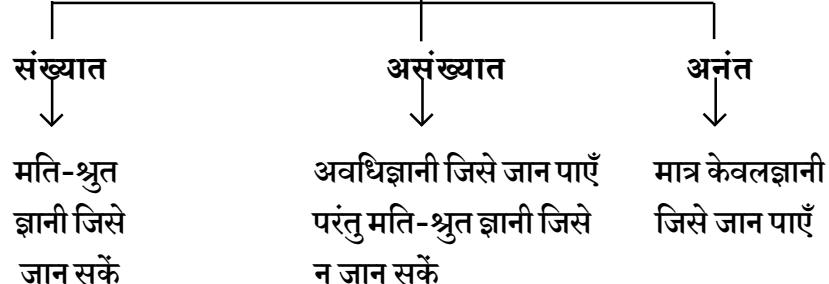
सूत्रार्थ - लोकाकाश के असंख्यात्में भाग आदि में जीवों का अवगाह है॥१५॥

लोक में अवगाह

(द्रव्यों के लोक में रहने का तरीका)

	जीव	पुद्गल	धर्म	अधर्म	आकाश	काल
एक द्रव्य	* लोक का असंख्यात्मां भाग	* एक प्रदेश (अणु और सूक्ष्म स्कंध)	समस्त लोक	समस्त लोक (तिल में तेल जैसे)	-	एक प्रदेश (रन्नों की राशि जैसे)
	* लोक का असंख्यात बहुभाग एवं सर्व लोक(सिर्फ केवली समुद्रधात में)	* संख्यात प्रदेश * असंख्यात प्रदेश				
सर्व द्रव्य	सर्व लोक (लोकाकाश)	सर्व लोक	सर्व लोक	सर्व लोक	-	सर्व लोक

संख्यामान



प्रदेशसंहारविसर्पिभ्यां प्रदीपवत्॥१६॥

सूत्रार्थ - क्योंकि प्रदीप के समान जीव के प्रदेशों का संकोच और विस्तार होने के कारण लोकाकाश के असंख्येय भागादिक में जीवों का अवगाह बन जाता है॥१६॥

जीव और पुद्गल के आकाश के अल्प प्रदेशों में रहने का हेतु

जीव

*प्रदेश संकोच-विस्तार शक्ति

(दीपक की तरह)

*शरीर नामकर्म का उदय

पुद्गल

*सूक्ष्म परिणमन

*एक-दूसरे को अवगाह

देने की शक्ति

गतिस्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरूपकारः॥१७॥

सूत्रार्थ - गति और स्थिति में निमित्त होना - यह क्रम से धर्म और अधर्म द्रव्य का उपकार है॥१७॥

धर्म और अधर्म द्रव्य का उपकार - मुख्य बिन्दु

जीव पुद्गल के गमन व स्थिति में -

1. उपादान	जीव पुद्गल स्वयं
2. अंतरंग निमित्त	क्रियावती शक्ति
3. बहिरंग निमित्त	1. साधारण कारण (उदासीन-अप्रेरक) धर्म और अधर्म द्रव्य 2. विशेष कारण - जल, पटरी, छाया आदि

अधर्म द्रव्य - गतिपूर्वक स्थिति रूप परिणमे द्रव्यों की स्थिति में सहायक, स्थित द्रव्यों को नहीं

आकाशस्यावगाहः॥१८॥

सूत्रार्थ - अवकाश देना आकाश का उपकार है॥१८॥

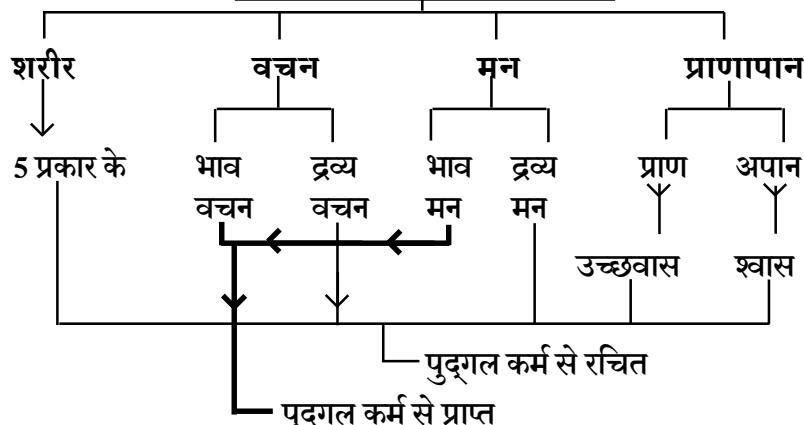
आकाश का उपकार - मुख्य बिन्दु

1. समस्त द्रव्यों को अवगाह में आकाश साधारण कारण है।
2. यद्यपि मूर्तिक का मूर्तिक से व्याघात होता है, पर इससे आकाश की अवगाह देने रूप सामर्थ्य नहीं नष्ट होती।
3. अलोकाकाश का भी अवगाह देने का स्वभाव है।

शरीरवाङ्मनः प्राणापानाः पुद्गलानाम्॥१९॥

सूत्रार्थ - शरीर, वचन, मन और प्राणापान - यह पुद्गलों का उपकार है॥१९॥

पुद्गल का उपकार



उपर्युक्त सभी पुद्गल का ही जीव पर निमित्तरूप उपकार है।

सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च॥२०॥

सूत्रार्थ - सुख, दुःख, जीवित और मरण - ये भी पुद्गलों के उपकार हैं॥२०॥

पुद्गल का उपकार

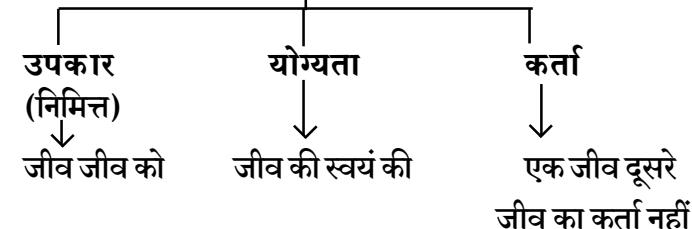
सुख	दुःख	जीवन	मरण
साता वेदनीय	असाता वेदनीय	आयु कर्म	आयु कर्म का
का उदय होने	का उदय होने	का बने रहना	उच्छेद-
पर जीव को	पर जीव को		समाप्त होना
प्रसन्नता	अप्रसन्नता		

उपर्युक्त सभी पुद्गल और अन्य जीव का जीव पर निमित्तरूप उपकार है।

परस्परोपग्रहो जीवानाम्॥२१॥

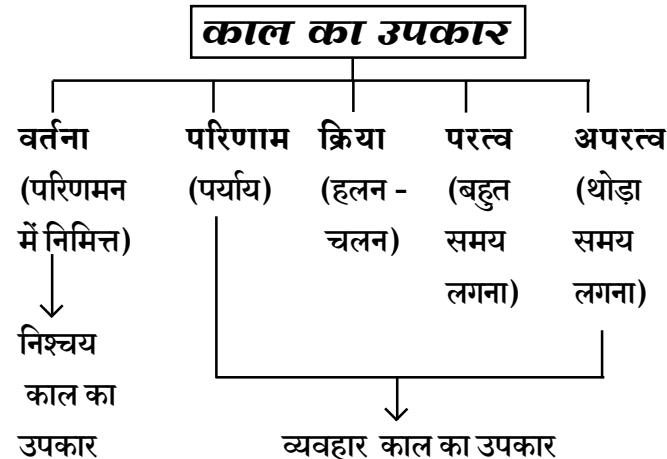
सूत्रार्थ - परस्पर निमित्त होना - यह जीवों का उपकार है॥२१॥

जीव का उपकार



वर्तनापरिणामक्रिया: परत्वापरत्वे च कालस्य॥२२॥

सूत्रार्थ-वर्तना, परिणाम, क्रिया, परत्व और अपरत्व -ये काल के उपकार हैं॥२२॥



सूत्र क्रमांक 17 से 22 तक का सार -

द्रव्यों का उपकार (निमित्त - सहायक)

	जीव	पुद्गल	धर्म	अधर्म	आकाश	काल
क्या	परस्पर	1. शरीर	गति	स्थिति	अवगाहन	1. वर्तना
उपकार	में एक	2. वचन				2. परिणाम
(कार्य)	दूसरे का	3. मन				3. क्रिया
	उपकार	4. श्वासो-				4. परत्व
		च्छवास				5. अपरत्व
		5. सुख				
		6. दुख				
		7. जीवन				
		8. मरण				
किस	जीव का	जीव पर	जीव और	जीव और	सभी	सभी पर
द्रव्य	जीव पर		पुद्गल पर	पुद्गल पर	पर	
पर						

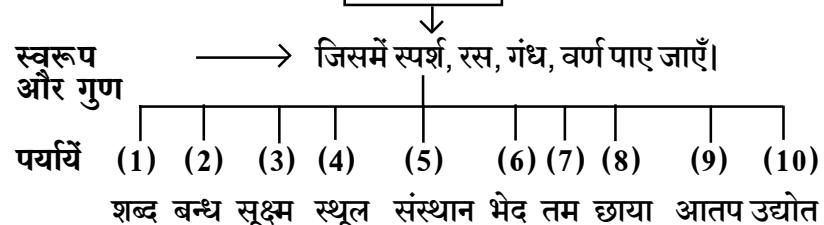
स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः॥२३॥

सूत्रार्थ - स्पर्श, रस, गन्ध और वर्णवाले पुद्गल होते हैं॥२३॥

शब्दबन्धसौक्ष्म्यस्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायातपोद्योतवन्तश्च॥२४॥

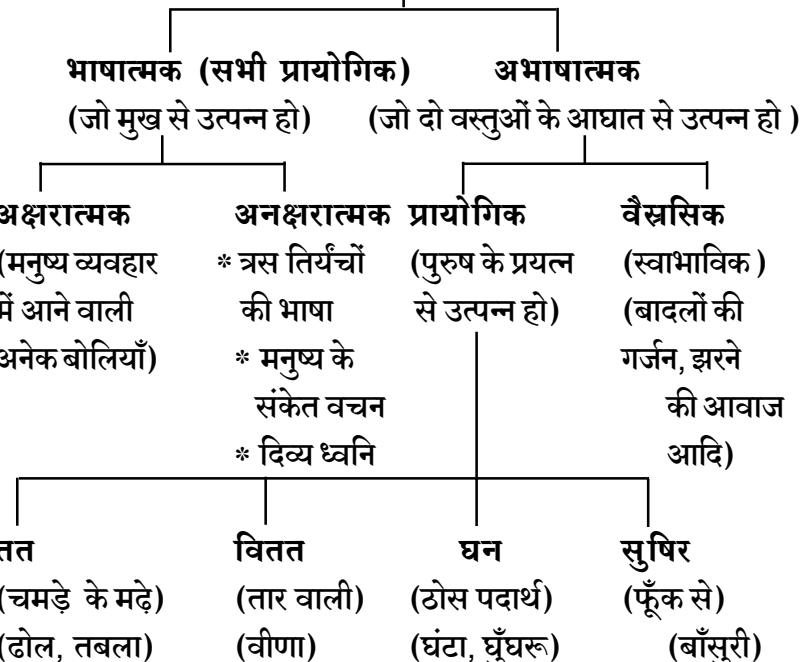
सूत्रार्थ - तथा वे शब्द, बन्ध, सूक्ष्मत्व, स्थूलत्व, संस्थान, भेद, अन्धकार, छाया, आतप और उद्योत वाले होते हैं॥२४॥

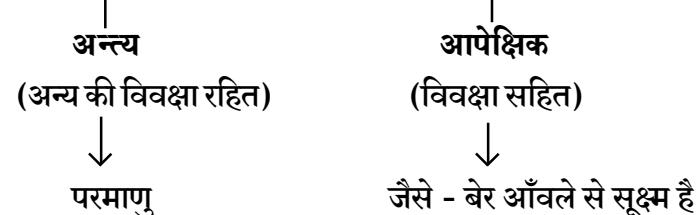
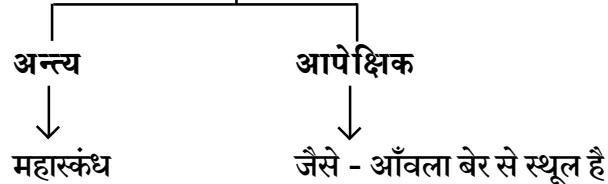
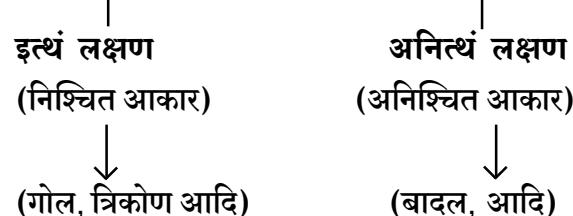
पुद्गल



(१) शब्द

(जो कान से सुना जाए)



(2) बंध**(3) सूक्ष्म****(4) स्थूल****(5) संस्थान (आकार)****(6) भेद (टुकड़े - भंग होना)**

उत्कर	चूर्ण	खण्ड	चूर्णिका	प्रतर	अनुचटन
(लकड़ी का बुरादा)	(गेहूँ का आटा)	(घड़े के टुकड़े)	(मूँग आदि की दाल)	(मेघ के पटल)	(गर्म लोहे की चिनगारी)

(7) तम (अंधकार)

प्रकाश का विरोधी

(8) छाया (प्रकाश को ढकने वाली)

तद्वर्ण परिणत (दर्पण में रूप)	प्रतिबिम्ब स्वरूप (परछाइ)
----------------------------------	------------------------------

(9) आतप

मूल ठंडा, आभा गर्म
(सूर्य का बिम्ब)

(10) उद्योत

मूल और आभा दोनों शीतल
(चन्द्रमा का बिम्ब, जुगनू आदि)

अणवः स्कन्धाश्च॥२५॥

सूत्रार्थ - पुद्गल के दो भेद हैं - अणु और स्कन्ध॥२५॥

पुद्गल के भेद (जाति अपेक्षा)

परमाणु(अणु)	स्कन्ध
(पुद्गल का सबसे	(दो या दो से अधिक
छोटा टुकड़ा)	परमाणुओं का समूह)

(आदि, मध्य, अंत
से रहत)
(स्वाभाविक दशा)

स्कंध	देश	प्रदेश
सर्वांश में पूर्ण	स्कंध का आधा	देश का आधा
लम्बाई, चौड़ाई मोटाई तीनों हो	लम्बाई, चौड़ाई हो	सिर्फ लम्बाई हो
कम से कम -	8 परमाणु	4 परमाणु
		2 परमाणु

परमाणु में एक साथ

2 स्पर्श	1 रस	1 गंध	1 वर्ण	कुल=5
----------	------	-------	--------	-------

* शीत-उष्ण और * 5 में से कोई 1 * 2 में से 1 * 5 में से 1

* स्निग्ध-रुक्ष

के युगल में

से एक-एक

स्कंध में एक साथ रूपादि की 20 पर्यायें हो सकती हैं।

पुद्गल के अन्य प्रकार से भेद

	सूक्ष्म-सूक्ष्म	सूक्ष्म	सूक्ष्म-स्थूल	स्थूल-सूक्ष्म	स्थूल	स्थूल-स्थूल
स्व-रूप	स्कंध अवस्था से रहित	इन्द्रियों से ग्रहण न हो	नेत्र के सिवाय शेष इन्द्रियों से ग्रहण हो	नेत्र से दिखे पर पकड़ में न आए	द्रव पदार्थ	ठोस पदार्थ
वृष्टांत	परमाणु	कार्मण वर्गणा	वायु, ध्वनि	छाया, प्रकाश	जल, तेल	लकड़ी, पत्थर

भेदसंघातेभ्यः उत्पद्यन्ते॥२६॥

सूत्रार्थ-भेद से, संघात से तथा भेद और संघात दोनों से स्कन्ध उत्पन्न होते हैं॥२६॥

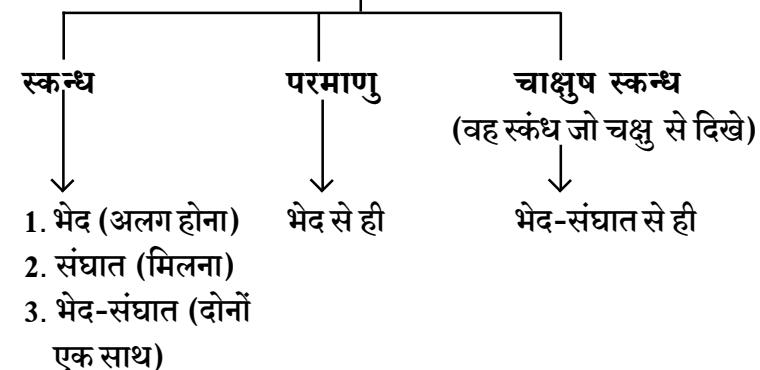
भेदादणुः॥२७॥

सूत्रार्थ - भेद से अणु उत्पन्न होता है॥२७॥

भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः॥२८॥

सूत्रार्थ - भेद और संघात से चाक्षुष स्कन्ध बनता है॥२८॥

स्कन्धादि की उत्पत्ति के कारण

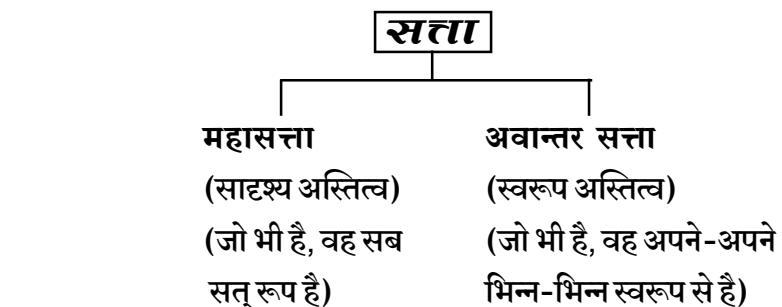
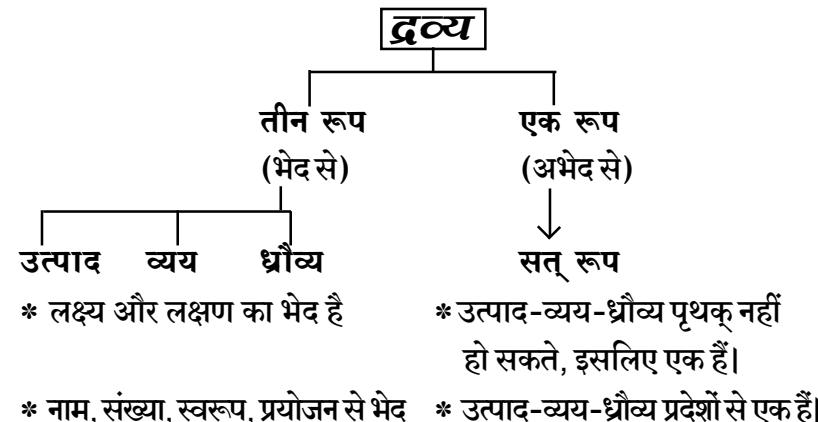
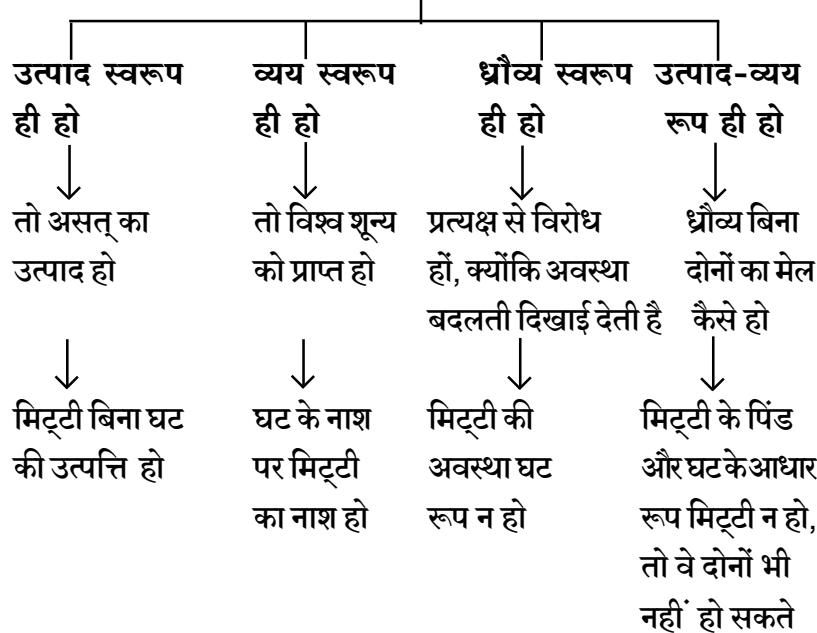
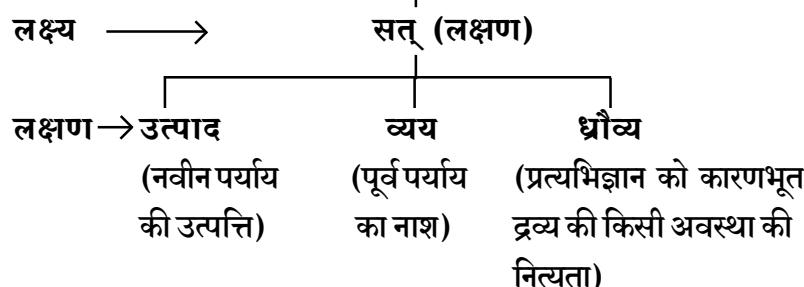


सद् द्रव्यलक्षणम्॥२९॥

सूत्रार्थ - द्रव्य का लक्षण सत् है॥२९॥

उत्पादव्ययधौव्ययुक्तं सत्॥३०॥

सूत्रार्थ - जो उत्पाद, व्यय और धौव्य - इन तीनों से युक्त अर्थात् इन तीनों रूप है, वह सत् है॥३०॥



तद्भावाव्ययं नित्यम्॥३१॥

सूत्रार्थ - उसके भाव से (अपनी जाति से) च्युत न होना नित्य है॥३१॥

अर्पितानर्पितसिद्धे:॥३२॥

सूत्रार्थ - मुख्यता और गौणता की अपेक्षा एक वस्तु में विरोधी मालूम पड़ने वाले दो धर्मों की सिद्धि होती है।।३२।।

स्याद्वाद् शैली

(जैनधर्म का आधार स्तम्भ सूत्र)

अर्पित	अनर्पित
(मुख्य)	(गौण)

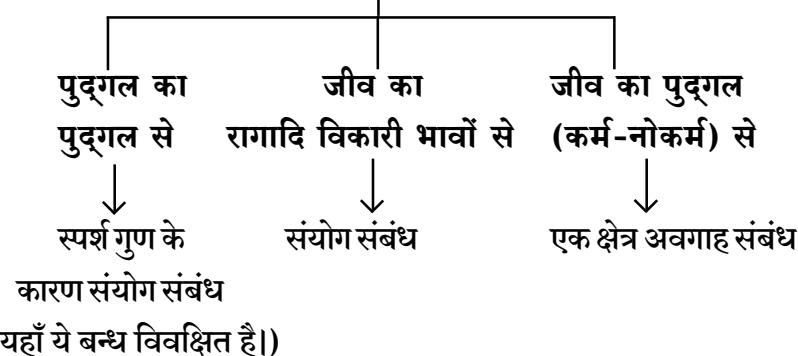
वस्तु अनेकान्तात्मक अर्थात् अनेक धर्मों वाली है। जैसे - वस्तु नित्यानित्यात्मक है। चूँकि वक्ता अनेक धर्मों को एक साथ कह नहीं सकता है। वह एक समय में एक ही धर्म को कह सकता है। अतः वह एक धर्म को अर्पित (मुख्य) एवं अन्य धर्मों को अनर्पित (गौण) करके कथन करता है।

स्निग्धरूक्षत्वाद् बन्धः॥३३॥

सूत्रार्थ - स्निग्धत्व और रूक्षत्व से बन्ध होता है।।३३।।

बंध

(अनेक पदार्थों में एकपने का ज्ञान कराने वाला संबंध विशेष)



न जघन्यगुणानाम्॥३४॥

सूत्रार्थ - जघन्य गुणवाले पुद्गलों का बन्ध नहीं होता।।३४।।

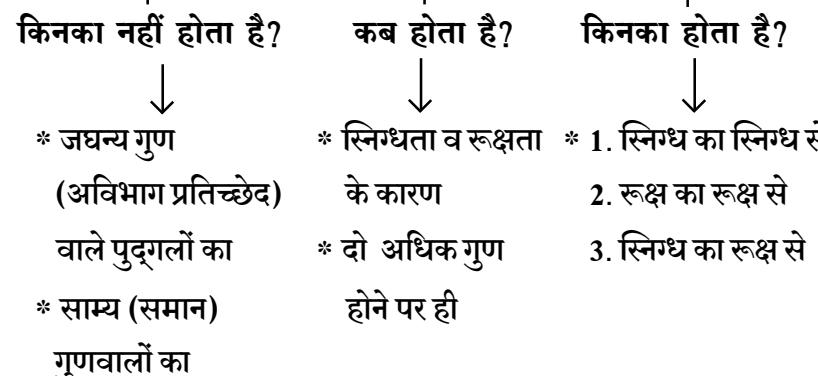
गुणसाम्ये सहशानाम्॥३५॥

सूत्रार्थ - गुणों की समानता होने पर तुल्य जाति वालों का बन्ध नहीं होता।।३५।।

द्वयधिकादिगुणानां तु॥३६॥

सूत्रार्थ - दो अधिक आदि शक्त्यंश वालों का तो बन्ध होता है।।३६।।

परमाणुओं का बंध



बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च॥३७॥

सूत्रार्थ - बन्ध होते समय दो अधिक गुणवाला परिणामन कराने वाला होता है।।३७।।

बंध होने पर

कम गुण वाले	—————>	अधिक गुण रूप
परमाणु		परिणत हो जाते हैं।

पुद्गल बंध से जीव बंध की तुलना

पुद्गल	जीव
स्निग्धता और रूक्षता के कारण	*राग(स्निग्ध) और द्रेष(रूक्ष) के कारण
जघन्य गुण रूप परमाणु का बंध नहीं होता	*जघन्य (एक) गुण - आत्मा का एकत्व होने पर बंध नहीं *सूक्ष्म लोभ (जघन्य राग) से मोहनीय का बंध नहीं
बंध होने पर अधिक गुण (शक्ति) रूप परिणमन	*लोक में भी अधिक गुणों वाले व्यक्ति के संयोग से ऊँचे (गुण) रूप परिणमन होता है और हीन गुण वाले व्यक्ति के संयोग से हीन परिणमन होता है।

गुणपर्यायवद्द्रव्यम्॥३८॥

सूत्रार्थ - गुण और पर्याय वाला द्रव्य है॥३८॥

द्रव्य का अन्य प्रकार से लक्षण

गुण-	पर्यायवान
गुण	पर्याय
* जो द्रव्य के सभी हिस्सों और सभी हालतों में पाया जाए	* जो उत्पन्न और नष्ट हो अथवा गुणों के विकार (विशेष कार्य)
* ध्रौव्य रूप	* उत्पाद-व्यय रूप
* अन्वयी- बने रहना (वही का वही)	* व्यतिरेकी - बदलना (भिन्न-भिन्न)
* सहभावी पर्याय	* क्रमवर्ती पर्याय

गुण

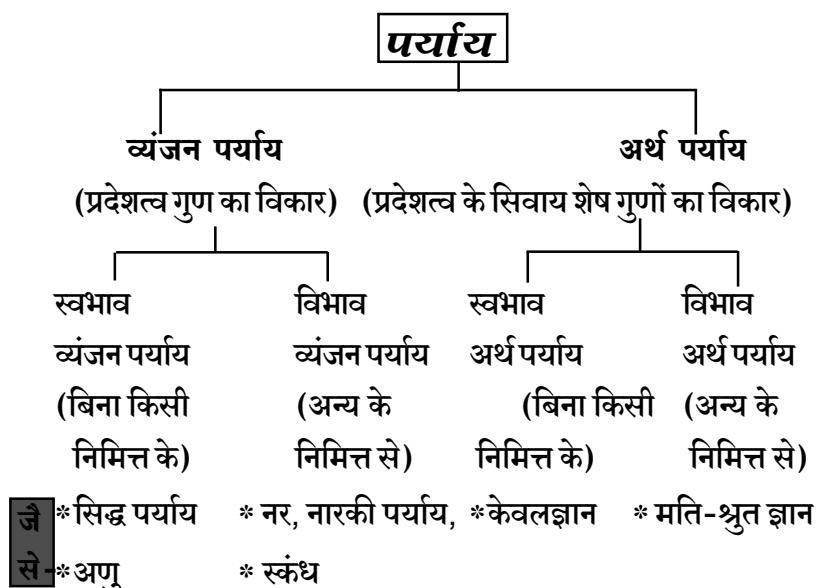
सामान्य गुण	विशेष गुण
(जो सभी द्रव्यों में पाए जाएँ)	(जो सभी द्रव्यों में न पाए जाएँ)
जैसे - अस्तित्व वस्तुत्व द्रव्यत्व प्रमेयत्व अगुरुलघुत्व प्रदेशत्व	जैसे- जीव का ज्ञान पुद्गल का रूपीपना धर्म का गतिहेतुत्व अधर्म का स्थितिहेतुत्व आकाश का अवगाहनहेतुत्व काल का परिणमनहेतुत्व

अन्य प्रकार से गुण

	साधारण	साधारण-असाधारण	असाधारण
परिभाषा	जो सभी द्रव्यों में पाए जाएँ	जो सभी में नहीं, पर में पाए जाएँ	जो अपने-अपने द्रव्य में ही पाए जाएँ
जैसे -	अस्तित्व वस्तुत्व	अमूर्तत्व अचेतनत्व	ज्ञान, दर्शन रस, गंध

सामान्य गुणों का स्वरूप

गुण का नाम		स्वरूप
1. अस्तित्व गुण	जिस शक्ति के कारण	द्रव्य का कभी नाश न हो।
2. वस्तुत्व गुण		द्रव्य में अर्थ क्रिया हो।
3. द्रव्यत्व गुण		द्रव्य सर्वदा एक-सा न रहे और जिसकी पर्यायें हमेशा बदलती रहें।
4. प्रमेयत्व गुण		द्रव्य किसी न किसी के ज्ञान का विषय हो।
5. अगुरुलघुत्व गुण		द्रव्य की द्रव्यता कायम रहे, एक द्रव्य दूसरे द्रव्य रूप न परिणामे, एक गुण दूसरे गुण रूप न परिणामे, एक द्रव्य के अनेक गुण विखरकर जुदे-जुदे न हो जावें।
6. प्रदेशत्व गुण		द्रव्य का कुछ न कुछ आकार अवश्य हो।



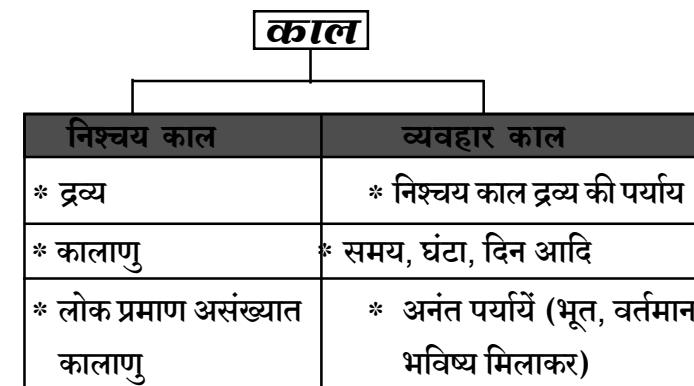
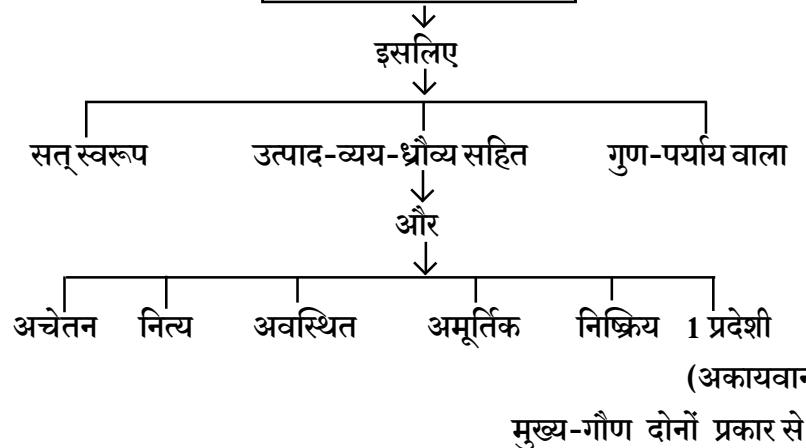
कालश्च ॥३९॥

सूत्रार्थ - काल भी द्रव्य है॥39॥

सोऽनन्तसमयः ॥४०॥

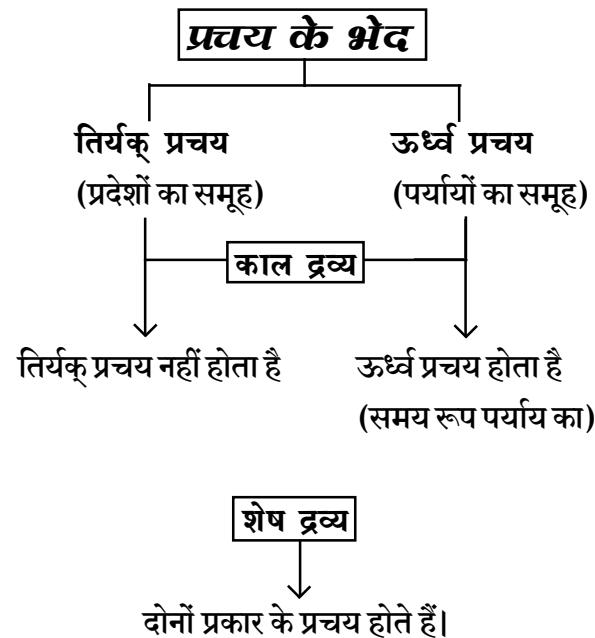
सूत्रार्थ - वह अनन्त समय वाला है॥40॥

काल भी द्रव्य है



काल की सिद्धि

1. काल है ?	1. क्योंकि सभी द्रव्यों के परिणमन में साधारण कारण की आवश्यकता अनिवार्य है।
2. कालाणु एक प्रदेशी ही क्यों ?	2. * जितनी बड़ी पर्याय होती है, उतना द्रव्य इसलिए काल की समय पर्याय जितना 1 प्रदेशी कालाणु है। * मंदगति से गमन करते पुद्गल परमाणु को एक आकाश प्रदेश ही सहायक होता है।
3. हर प्रदेश पर एक ही क्यों ?	3. वर्ना उस प्रदेश के द्रव्यों (विशेष रूप से 1 परमाणु) का परिणमन कैसे हो !



परमाणु के तिर्यक् प्रचय नहीं होता।

द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणः॥41॥

सूत्रार्थ - जो निरन्तर द्रव्य में रहते हैं और (अन्य) गुणरहित हैं, वे गुण हैं॥41॥

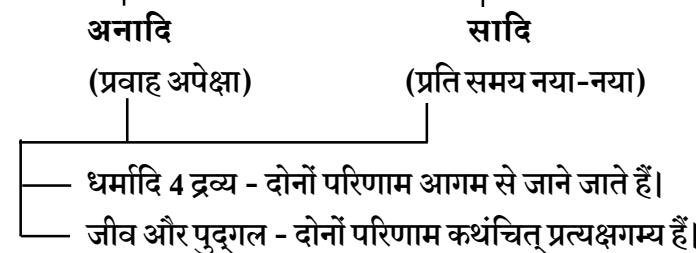
गुण का लक्षण

सदा द्रव्य के आश्रय से रहे
अन्य गुणों से रहित हो

तद्भावः परिणामः॥42॥

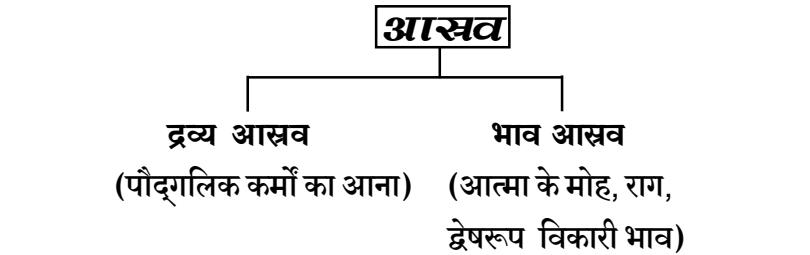
सूत्रार्थ - उसका होना अर्थात् प्रति समय बदलते रहना परिणाम है॥42॥

परिणाम (भाव)



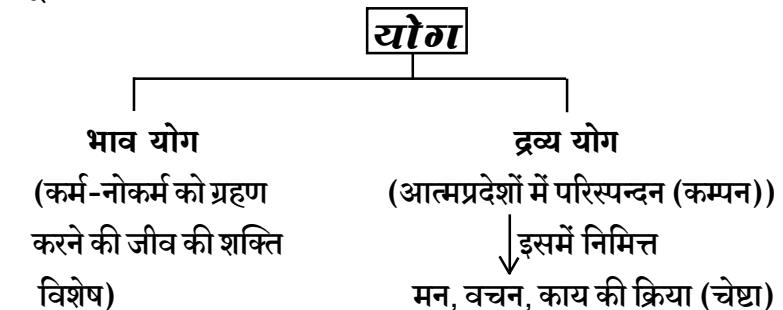
षष्ठ अध्याय

विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
<u>आस्त्रव</u>			
योग आस्त्रव है	1-2	2	113-114
<u>आस्त्रव के भेद</u>			
- योग अपेक्षा	3	1	114
- स्वामी अपेक्षा	4	1	115
- साम्परायिक आस्त्रव के 39 भेद	5	1	116-118
आस्त्रव में हीन-अधिकता के कारण	6	1	118
अधिकरण और उसके भेद	7-9	3	119-120
<u>8 कर्मों में प्रत्येक के आस्त्रव के कारण</u>			
- ज्ञानावरण और दर्शनावरण	10	1	121
- वेदनीय	11-12	2	121-122
- मोहनीय	13-14	2	123
- आयु	15-21	7	124-125
- नाम	22-24	3	126-127
- गोत्र	25-26	2	128
- अंतराय	27	1	129
	कुल	27	



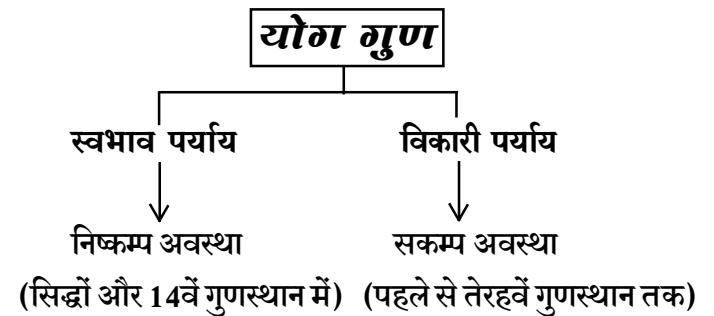
कायवाड्मनः कर्मयोगः ||1||

सूत्रार्थ - काय, वचन और मन की क्रिया योग है ||1||



निमित्त अपेक्षा योग के भेद

4 मनोयोग 4 वचन योग 7 काययोग = कुल 15

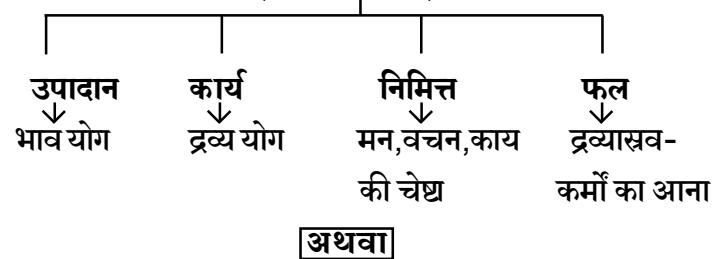


स आस्त्रवः॥२॥

सूत्रार्थ - वही आस्त्रव है॥२॥

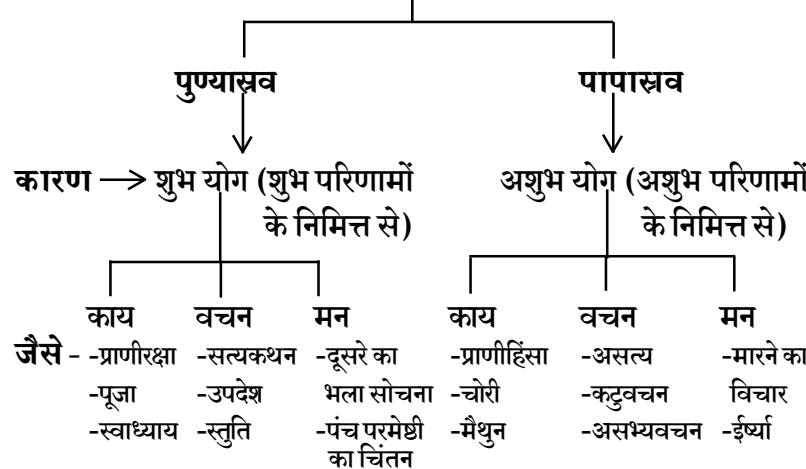
आस्त्रव का स्वरूप

(कर्मों का आना)



शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य॥३॥

सूत्रार्थ - शुभयोग पुण्य का और अशुभयोग पाप का आस्त्रव है॥३॥

योग के निमित्त से आस्त्रव में भेद

* पुण्यास्त्रव एवं पापास्त्रव भेद अधातिया कर्मों की अपेक्षा है।

* धातिया कर्म तो पापरूप ही हैं।

सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापिथयोः॥४॥

सूत्रार्थ - कषायसहित और कषायरहित आत्मा का योग क्रम से साम्परायिक और ईर्यापिथ कर्म के आस्त्रव रूप है॥४॥

स्वामी अपेक्षा आस्त्रव के भेद

स्वामी	सकषायी (कषाय सहित)	अकषायी (कषाय रहित)
हेतु	मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद कषाय के साथ योग	सिर्फ योग
किसका कारण	संसार का कारण	स्थिति रहित आस्त्रव का कारण
कितने प्रकार का बंध	प्रकृति, प्रदेश, स्थिति और अनुभाग बंध होता है	प्रकृति और प्रदेश बंध ही होता है
गुणस्थान जैसे	पहले से 10वें गुणस्थान तक (कषाय रूपी) तेल युक्त दीवार पर (कर्मरूपी) रज चिपक जाती है।	11वें, 12वें, 13वें गुणस्थान में कोरी दीवार पर रज आकर चली जाती है।

इन्द्रियकषायाब्रतक्रिया: पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशतिसंख्या: पूर्वस्य
भेदाः॥५॥

सूत्रार्थ - पूर्व के अर्थात् साम्परायिक कर्मसिव के इन्द्रिय, कषाय, अब्रत और
क्रिया रूप भेद हैं, जो क्रम से पाँच, चार, पाँच और पच्चीस हैं॥५॥

साम्परायिक आस्त्र - ३९ भेद

इन्द्रिय	कषाय	अब्रत	क्रिया
5	4	5	25
(पाँच इन्द्रियों के विषय में प्रवृत्ति का भाव)	(जो आत्मा को कसे अर्थात् दुःख दे)	(दुःख का कारण बुरा कार्य)	(भिन्न-भिन्न भावों सहित प्रवृत्ति)
स्पर्शन	क्रोध	हिंसा	5 विभिन्न क्रिया
रसना	मान	शूठ	5 हिंसा भाव की मुख्यतारूप
ग्राण	माया	चोरी	5 इन्द्रियों के भोग बढ़ाने सम्बन्धी
चक्षु	लोभ	कुशील	5 धर्मचिरण में दोष कारक
श्रोत्र		परिग्रह	5 धर्म धारण से विमुख करनेवाली

25 क्रियाएँ

5 विभिन्न क्रियाएँ

सम्यक्त्व (सम्यक्त्व बढ़ाने वाली)	मिथ्यात्व (मिथ्यात्व पुष्ट करने वाली)	प्रयोग (शरीरादि द्वारा गमनादि के सन्मुख प्रवृत्ति)	समादान (संयमी का असंयम के सन्मुख होना)	ईर्यपिथ (संयम बढ़ाने वाली)
---	---	---	--	----------------------------------

5 हिंसा भाव की मुख्यतारूप क्रियाएँ

प्रादोषिकी (क्रोध के आवेश में द्वेषबुद्धि करना)	कायिकी (क्रोध के आवेश में ग्रहण करना)	अधिकरणिकी (हिंसा के साधन में ग्रहण करना)	परितापकी (दूसरों को दुख उत्पत्ति काय चेष्टा करना)	प्राणातिपातिकी (दूसरे के 10 प्राणों का के कारणरूप वियोग करना) क्रिया)
--	--	--	---	--

5 इन्द्रियों के भोग बढ़ाने सम्बन्धी क्रियाएँ

दर्शन (सुन्दर रूप देखने का अभिप्राय)	स्पर्शन (स्पर्श करने का भाव)	प्रात्ययिकी (भोगों की नई-नई सामग्री जुटाना)	समन्तानुपात (जीवों के रहने के स्थान पर मल-मूत्र त्यागना)	अनाभोग (बिना देखे स्थान पर ^{उठना, बैठना आदि)}
---	------------------------------------	--	--	--

5 धर्माचरण में दोष कारक क्रियाएँ

स्वहस्त	निसर्ग	विदारण	आज्ञाव्यापादिकी	अनाकांक्षा
(हीन पुरुषों	(पाप साधनों (दूसरे के (शास्त्र की आज्ञा (शास्त्र उपदेशित			
योग्य कार्य	के लेन-देन दोष प्रकट को न पाल उनके विधि का			
स्वयं करना)	में सम्मति करना) विपरीत अर्थ करना) अनादर)			
				(देना)

5 धर्म-धारण से विमुख करने वाली क्रियाएँ

आरम्भ	परिग्रहिकी	माया	मिथ्यादर्शन	अप्रत्याख्यान
(छेदन, भेदन (परिग्रह की (ज्ञान-दर्शन (मिथ्यादृष्टि (त्याग परिणाम				
आदि में स्वयं रक्षा के उपाय आदि के विषय की क्रियाओं नहीं होना)	में छल करना) की प्रशंसा			
रत व हर्षित में लगे रहना)	होना)			

तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषभ्यस्तद्विशेषः॥६॥

सूत्रार्थ - तीव्रभाव, मन्दभाव, ज्ञातभाव, अज्ञातभाव, अधिकरण और वीर्यविशेष के भेद से उसकी (आस्त्र की) विशेषता होती है॥६॥

आस्त्र में हीनता-अधिकता के कारण

तीव्रभाव	मंदभाव	ज्ञातभाव	अज्ञातभाव	अधिकरण	वीर्य
(तीव्र कषाय (मंद कषाय (बुद्धिपूर्वक (प्रमाद (आधार) (स्व बल)					
रूप भाव)	रूप भाव)	जानकर)	अज्ञान		
			सहित)		

कारण के भेद से कार्य - आस्त्र में भेद होता ही है।

अधिकरणं जीवाजीवाः॥७॥

सूत्रार्थ - अधिकरण जीव और अजीव रूप हैं॥७॥

अधिकरण (आधार)

जीव अधिकरण
(जीव की पर्यायें)

अजीव अधिकरण
(अजीव की पर्यायें)

आद्यं संरभसमारम्भयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषै-
स्त्रिस्त्रिविश्वतुश्चैकशः॥८॥

सूत्रार्थ - पहला जीवाधिकरण संरभ, समारम्भ और आरम्भ के भेद से तीन प्रकार का, योगों के भेद से तीन प्रकार का, कृत, कारित और अनुमत के भेद से तीन प्रकार का तथा कषायों के भेद से चार प्रकार का होता हुआ परस्पर मिलाने से एक सौ आठ प्रकार का है॥८॥

जीव अधिकरण

* संरभ (विचार-संकल्प)	* मनयोग	* कृत (करना)	* क्रोध
* समारम्भ (साधन-समाग्री जुटाना)	* वचनयोग	* कारित (कराना)	* मान
* आरम्भ (कार्य शुरू करना)	* काय योग	* अनुमत (दूसरे के कार्य में सम्मति देना)	* माया
			* लोभ

कुल = 3 x 3 x 3 x 4 = 108

जीव अधिकरण

निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ॥१॥

सूत्रार्थ - पर अर्थात् अजीवाधिकरण क्रम से दो, चार, दो और तीन भेद वाले निर्वर्तना, निक्षेप, संयोग और निसर्ग रूप हैं ॥१॥

अजीव अधिकरण

निर्वर्तना (रचना करना)	निक्षेप (खेना)	संयोग (मिलाना)	निसर्ग (प्रवर्तना)
2	4	2	3
मूल उत्तर	अप्रत्यवेक्षित (बिना देखे)	भक्तपान (विरुद्ध अन्न, जल आदि)	काय (शरीर से कुञ्चेष्टा आदि)
गुण गुण (अंतरंग बहिरंग साधन) साधन	दुःप्रमृष्ट (बिना प्रमार्जित)	उपकरण (शीत का उष्णा, शुद्ध का अशुद्ध के कारण)	वचन (दुष्ट शब्दों का उच्चारण)
शरीर काष्ठ कर्म वचन चित्रकर्म मन पुस्तक कर्म प्राण आदि अपान	सहसा (भय, शीघ्रता के कारण)	मन (मन में दुष्ट विचार आदि)	
	अनाभोग (उपयोग रहित कर्ही भी)		

८ कर्मों में प्रत्येक के आस्त्र के कारण

(वे कारण जिनसे उस उस कर्म का अनुभाग अधिक बँधता है)

तत्प्रदोषनिहृनवमात्सर्यन्तरायासादनोपघाता

ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥१०॥

सूत्रार्थ - ज्ञान और दर्शन के विषय में प्रदोष, निहृव, मात्सर्य, अन्तराय, आसादन और उपघात - ये ज्ञानावरण और दर्शनावरण के आस्त्र हैं ॥१०॥

ज्ञानावरण - दर्शनावरण

प्रदोष	निहृव	मात्सर्य	अंतराय	आसादन	उपघात
(तत्त्व की बात के प्रति भी छुपाना) मन में ईर्ष्या-नहीं सुहाना)	(जानते हुए बदल जाएँ, जल आदि) (दूसरे आगे नहीं बढ़ जाएँ, इसलिए नहीं बताना)	(दूसरे आगे नहीं बढ़ जाएँ, के साधनों की प्रकाशित होने वाले ज्ञान को अज्ञान	(ज्ञान और ज्ञान के साधनों की प्राप्ति में बाधा डालना)	(पर के द्वारा ज्ञान को अज्ञान करना)	

दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्मपरोभयस्थानान्य-
सद्वेद्यस्य ॥११॥

सूत्रार्थ - अपने में, दूसरे में या दोनों में विद्यमान दुःख, शोक, ताप, आक्रन्दन, वध और परिदेवन - ये असाता वेदनीय कर्म के आस्त्र हैं ॥११॥

असाता वेदनीय

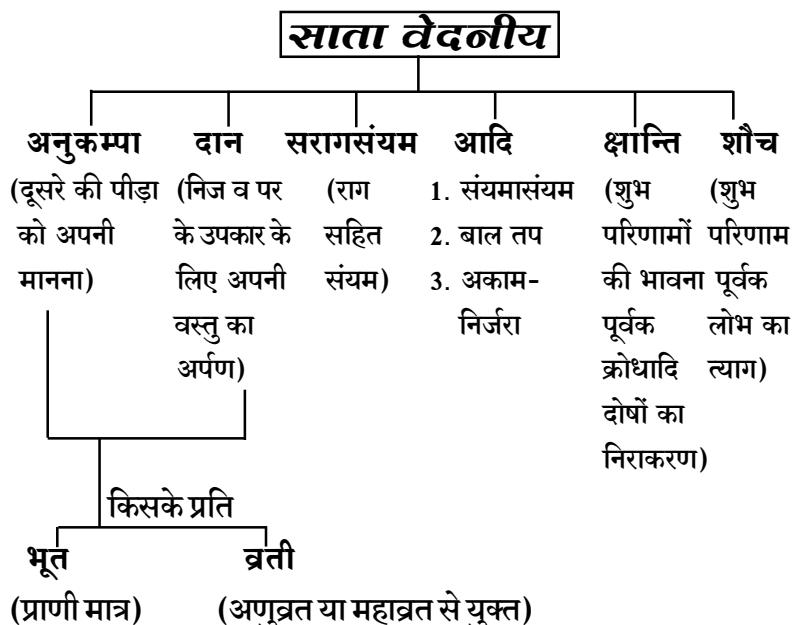
दुःख	शोक	ताप	आक्रन्दन	वध	परिदेवन
(पीड़ा रूप (इष्ट के संसार में संक्लेशता के 10 प्राणों (ऐसा रोना कि आत्म- वियोग में निन्दा होने का वियोग सुनने वाले को परिणाम) व्याकुलता) पर पश्चात्ताप) चिल्लाना)					

ये दुःखादि सभी - 1. आप स्वयं करें, 2. दूसरे को करावें, 3. आप व पर दोनों को करें - ये तीनों ही आस्त्र के कारण हैं।

भूतब्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति

सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥

सूत्रार्थ - भूत-अनुकम्पा, व्रती-अनुकम्पा, दान और सरागसंयम आदि का योग तथा क्षान्ति और शौच - ये सातावेदनीय कर्म के आस्त्र हैं।।12।।

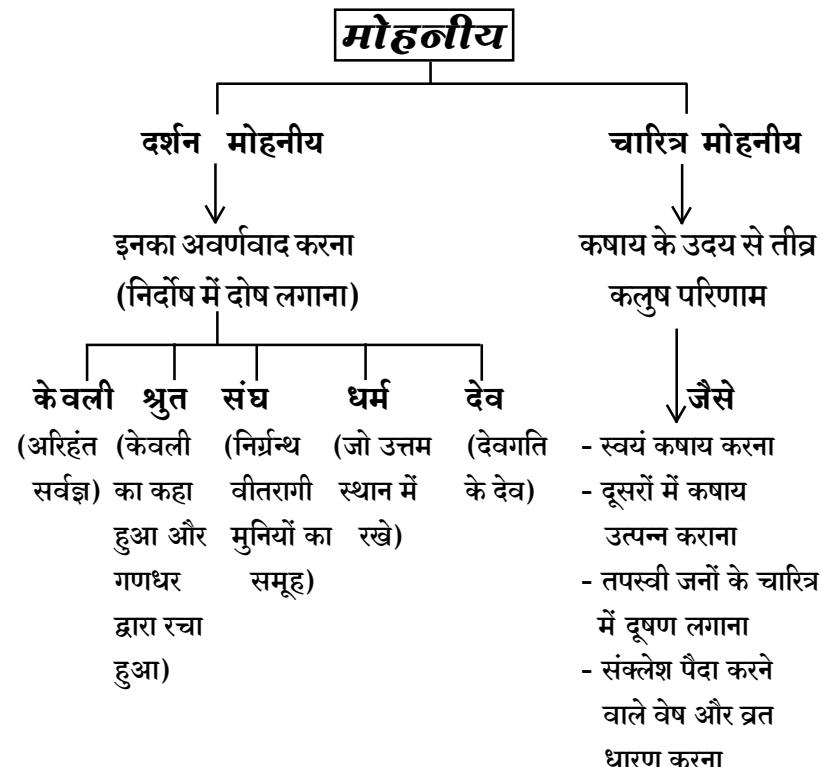


के वलि श्रुतसंघर्षमदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥१३॥

सूत्रार्थ - केवली, श्रुत, संघ, धर्म और देव - इनका अवर्णवाद दर्शनमोहनीय कर्म का आस्त्र है॥13॥

कषायोदयात्तीवपरिणामश्चारित्रमोहस्य ॥14॥

सूत्रार्थ - कषाय के उदय से होने वाला तीव्र आत्मपरिणाम चारित्र मोहनीय का आस्रव है॥14॥



बहुरभ्मपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥

सूत्रार्थ -बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रहपने का भाव नरकायु का आस्त्रव है॥१५॥

मायातैर्यग्योनस्य ॥१६॥

सूत्रार्थ -माया तिर्यचायु का आस्त्रव है॥१६॥

अत्यारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥१७॥

सूत्रार्थ -अत्य आरम्भ और अत्य परिग्रहपने का भाव मनुष्यायु का आस्त्रव है॥१७॥

स्वभावमार्दवं च ॥१८॥

सूत्रार्थ -स्वभाव की मूदुता भी मनुष्यायु का आस्त्रव है॥१८॥

निःशीलब्रतत्वं च सर्वेषाम् ॥१९॥

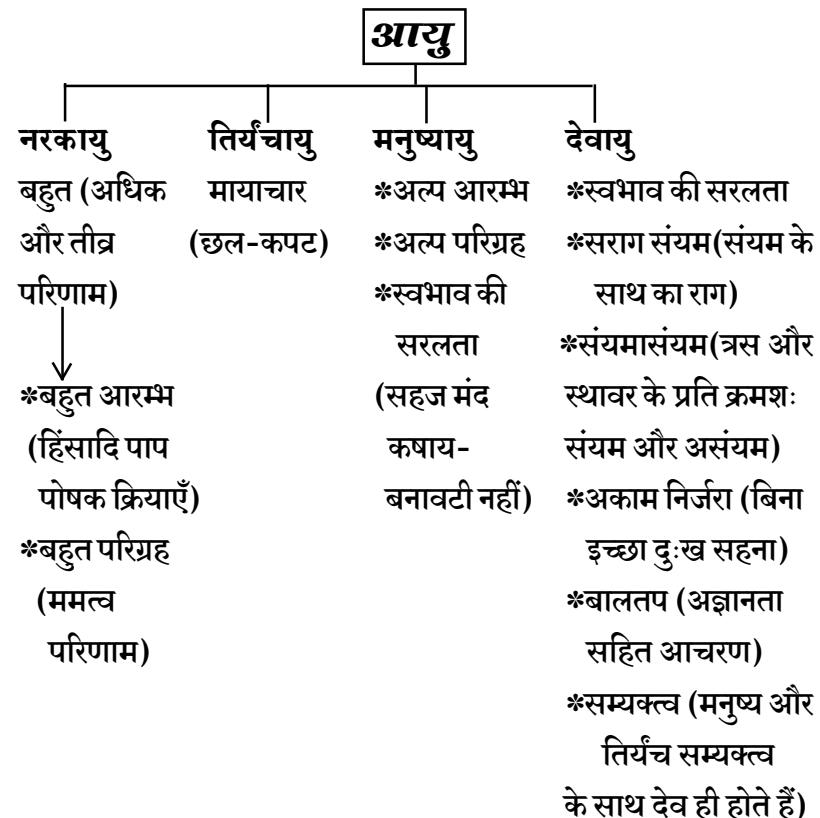
सूत्रार्थ -शीलरहित और ब्रतरहित होना सब आयुओं का आस्त्रव है॥१९॥

सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ॥२०॥

सूत्रार्थ -सरागसंयम, संयमासंयम, अकामनिर्जरा और बालतप - ये देवायु के आस्त्रव हैं॥२०॥

सम्यक्त्वं च ॥२१॥

सूत्रार्थ -सम्यक्त्व भी देवायु का आस्त्रव है॥२१॥



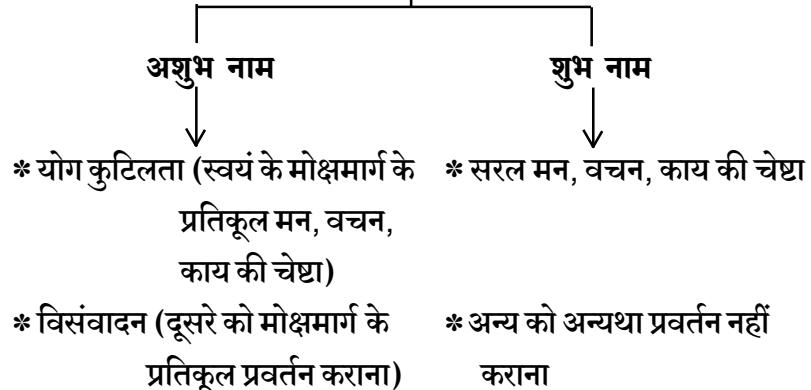
शील और ब्रत का अभाव सभी आयु के आस्त्रव का कारण है।

योगवक्रताविसंवादनं चाशुभस्य नामः॥२२॥

सूत्रार्थ - योगवक्रता और विसंवाद - ये अशुभ नाम कर्म के आस्त्र हैं॥२२॥
तद्विपरीतं शुभस्य॥२३॥

सूत्रार्थ - उससे विपरीत अर्थात् योग की सरलता और अविसंवाद - ये शुभ नामकर्म के आस्त्र हैं॥२३॥

नाम



योग वक्रता एवं विसंवादन में अन्तर

योग वक्रता	विसंवादन
* स्व अपेक्षा	* पर की अपेक्षा
* मन, वचन, काय की कुटिलता	* कुटिल योग सहित दूसरों को मिथ्यामार्ग के लिए प्रेरित करना
* कारण	* कार्य

दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलवतेष्वनतिचारोऽभीक्षण-
ज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्त्यकरण-
मर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना
प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य॥२४॥

सूत्रार्थ- दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शील और ब्रतों का अतिचार रहित पालन करना, ज्ञान में सतत उपयोग, सतत संवेग, शक्ति के अनुसार त्याग, शक्ति के अनुसार तप, साधु-समाधि, वैयावृत्त्य करना, अरिहन्तभक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचन-भक्ति, आवश्यक क्रियाओं को न छोड़ना, मोक्षमार्ग की प्रभावना और प्रवचन वात्सल्य - ये तीर्थकर नामकर्म के आस्त्र हैं॥२४॥

तीर्थकर नामकर्म के आस्त्र के कारणभूत सौलहकारण भावना

भावना	उसका स्वरूप
1. दर्शन विशुद्धि	अरहं द्वारा कहे गए मोक्षमार्ग में रुचि
2. विनय सम्पन्नता	रत्नत्रय और उनके धारकों की विनय
3. शीलब्रत में अनतिचार	शील और ब्रतों का अतिचार रहित पालन
4. अभीक्षण ज्ञानोपयोग	सम्यग्ज्ञान में निरंतर लगे रहना
5. संवेग	संसार के दुखों से भयभीत रहना
6. शक्ति अनुसार त्याग	शक्ति के अनुसार त्याग
7. शक्ति अनुसार तप	शक्ति के अनुसार तप
8. साधु समाधि	साधुओं के विघ्न दूर करना
9. वैयावृत्त्य करण	गुणी पुरुषों के दुख आने पर निर्दोष विधि से सेवा करना
10. अर्हद् भक्ति	अरहं में
11. आचार्य भक्ति	आचार्य में
12. बहुश्रुत भक्ति	उपाध्याय में
13. प्रवचन भक्ति	भावों की विशुद्धि के साथ अनुराग
14. आवश्यकापरिहाणि	शास्त्र में
15. मार्ग प्रभावना	6 आवश्यक क्रियाओं को यथासमय करना
16. प्रवचन वत्सलत्व	ज्ञान, तप, दान, पूजा द्वारा धर्म का प्रकाश करना गोवत्सवत् साधर्मियों पर स्नेह रखना

षष्ठ अध्याय
परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसदगुणोच्छादनोद्भावने च
नीचैर्गोत्रस्य॥२५॥

सूत्रार्थ - परनिन्दा, आत्मप्रशंसा, सदगुणों का उच्छादन और असदगुणों का उद्भावन - ये नीच गोत्र के आस्त्र हैं॥२५॥

तदविपर्ययौ नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य॥२६॥

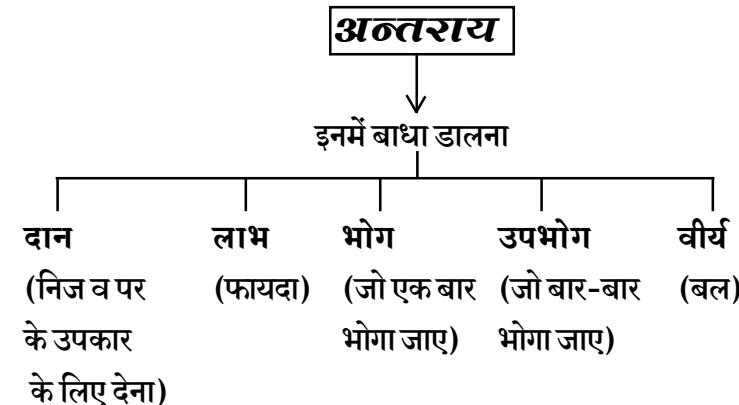
सूत्रार्थ - उनका विपर्यय अर्थात् परप्रशंसा, आत्मनिन्दा, सदगुणों का उद्भावन और असदगुणों का उच्छादन तथा नम्रवृत्ति और अनुत्सेक - ये उच्च गोत्र के आस्त्र हैं॥२६॥

गोत्र	
नीच गोत्र	उच्च गोत्र
* पर की निन्दा	* पर प्रशंसा
* स्व की प्रशंसा	* स्व निन्दा
* दूसरे के विद्यमान गुण ढँकना	* दूसरे के विद्यमान गुणों को प्रकट करना
* अपने द्वृढ़े गुणों को प्रकट करना	* अपने गुणों की चर्चा नहीं करना
* अपने द्वृढ़े गुणों को नम्रवृत्ति- अपने से गुणों में अधिक की विनय	* नम्रवृत्ति- अपने से गुणों में अधिक की विनय
	* अनुत्सेक - अभिमान न होना

किस जीव के कौन-से गोत्र का उदय होता है

नीच गोत्र	उच्च गोत्र	दोनों में से कोई भी एक
* सब नारकी	* देव	* पर्याप्त कर्मभूमिया
* सब तिर्यच	* भोगभूमिया मनुष्य	मनुष्य
* अपर्याप्त मनुष्य		

षष्ठ अध्याय
विघ्नकरणमन्तरायस्य॥२७॥
सूत्रार्थ - दानादिक में विघ्न डालना अन्तराय कर्म का आस्त्र है॥२७॥



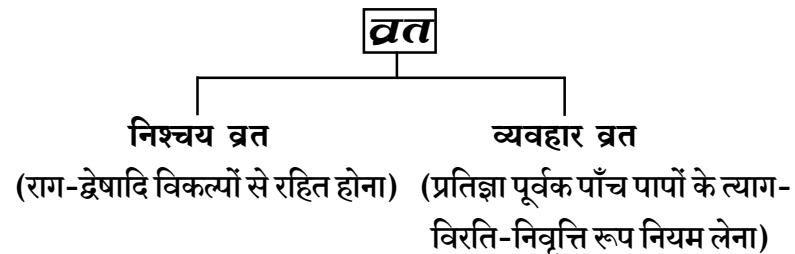
“इस अध्याय सम्बन्धी विशेष जानकारी के लिए परिशिष्ट देखें।”

सप्तम अध्याय

विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
ब्रत			
ब्रत का लक्षण व भेद	1-2	2	131
प्रत्येक ब्रत की रक्षा की 5-5 भावनाएँ	3-8	6	132-134
पाप दुःखदायी व दुःख रूप	9-10	2	135
मैत्री आदि 4 भावना	11	1	136
संवेग-वैराग्य भावनाएँ	12	1	136
पाँच पाप के लक्षण	13-17	5	137-140
ब्रती का स्वरूप व भेद	18-20	3	141
सात शील ब्रत	21	1	142-144
सल्लेखना का स्वरूप	22	1	144
अतिचार-			
सम्यग्दर्शन के	23	1	145
5 अणुब्रत और 7 शील ब्रतों के	24-36	13	146-152
सल्लेखना के	37	1	152
दान			
दान व उसके फल में विशेषता	38-39	2	153-154
	कुल	39	

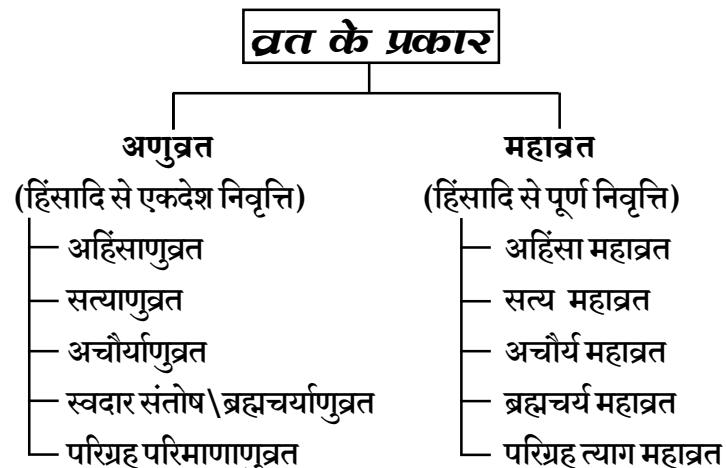
हिंसाऽनृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्वतम्॥1॥

सूत्रार्थ - हिंसा, असत्य, चोरी, अब्रह्म और परिग्रह से विरत होना ब्रत है॥1॥



देशसर्वतोऽणुमहती॥2॥

सूत्रार्थ - हिंसादिक से एकदेश निवृत्त होना अणुब्रत है और सब प्रकार से निवृत्त होना महाब्रत है॥2॥



तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च॥३॥

सूत्रार्थ - उन ब्रतों को स्थिर करने के लिए प्रत्येक ब्रत की पाँच-पाँच भावनाएँ हैं॥३॥

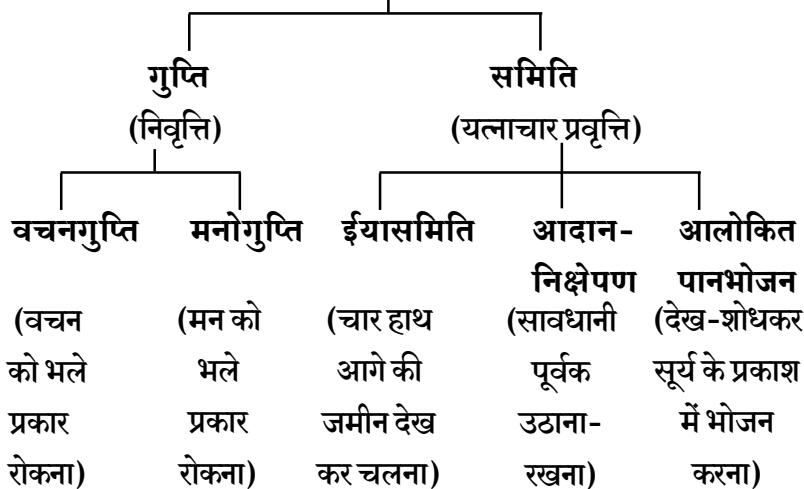
पाँच ब्रतों की पाँच-पाँच भावनाएँ

भावना - निरन्तर भाने योग्या

वाङ्मनोगुप्तीर्यदाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पञ्च॥४॥

सूत्रार्थ - वचनगुप्ति, मनोगुप्ति, ईर्यासमिति, आदान-निक्षेपणसमिति और आलोकितपान-भोजन - ये अहिंसाब्रत की पाँच भावनाएँ हैं॥४॥

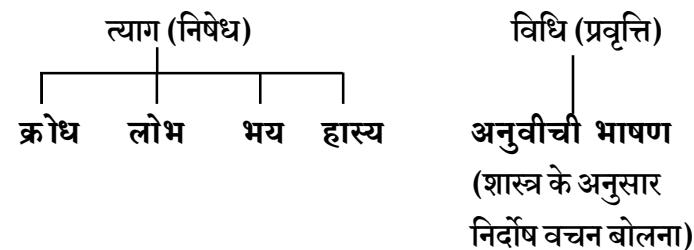
अहिंसा ब्रत की भावनाएँ



क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचीभाषणं च पञ्च॥५॥

सूत्रार्थ - क्रोधप्रत्याख्यान, लोभप्रत्याख्यान, भीरुत्व प्रत्याख्यान, हास्यप्रत्याख्यान और अनुवीचीभाषण - ये सत्य ब्रत की पाँच भावनाएँ हैं॥५॥

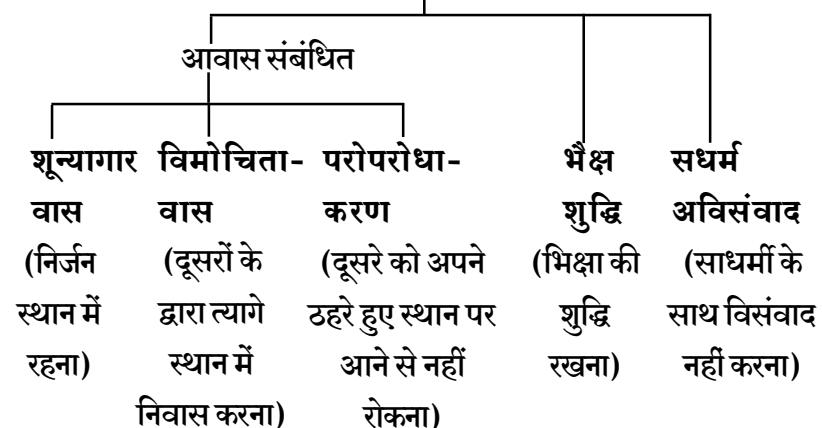
सत्य ब्रत की भावनाएँ



शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्षशुद्धिसधर्माविसंवादाः पञ्च॥६॥

सूत्रार्थ - शून्यागारवास, विमोचितावास, परोपरोधाकरण, भैक्षशुद्धि और सधर्माविसंवाद - ये अचौर्य ब्रत की पाँच भावनाएँ हैं॥६॥

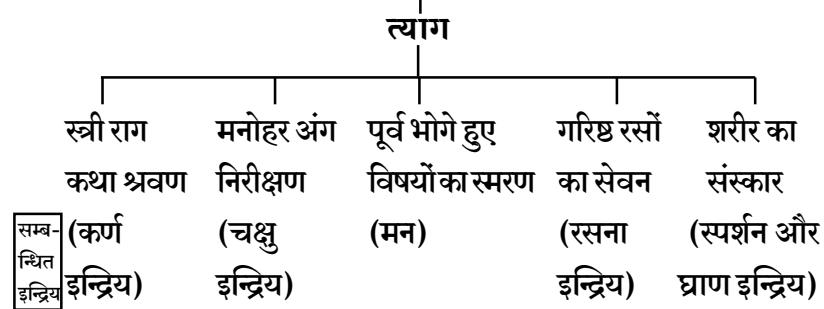
अचौर्य ब्रत की भावनाएँ



स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्गनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्टेष्टरसस्वशरीर-
संस्कारत्यागः पञ्च॥7॥

सूत्रार्थ - स्त्रियों में राग को पैदा करने वाली कथा के सुनने का त्याग, स्त्रियों के मनोहर अंगों को देखने का त्याग, पूर्व भोगों के स्मरण का त्याग, गरिष्ठ और इष्ट रस का त्याग तथा अपने शरीर के संस्कार का त्याग - ये ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनाएँ हैं॥7॥

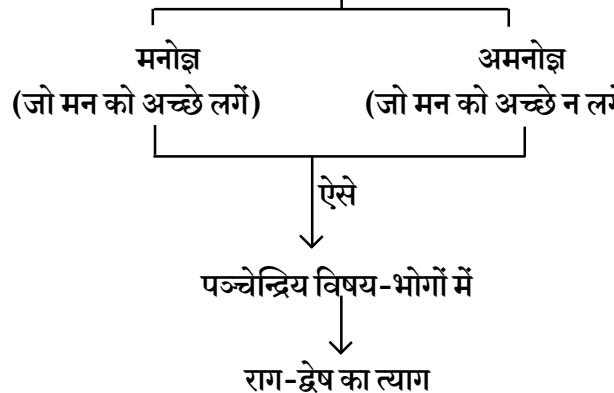
ब्रह्मचर्य व्रत की भावनाएँ



मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पञ्च॥8॥

सूत्रार्थ - मनोज्ञ और अमनोज्ञ इन्द्रियों के विषयों में क्रम से राग और द्वेष का त्याग करना - ये अपरिग्रहव्रत की पाँच भावनाएँ हैं॥8॥

परिग्रह त्याग व्रत की भावनाएँ



अन्य भी भावनाएँ

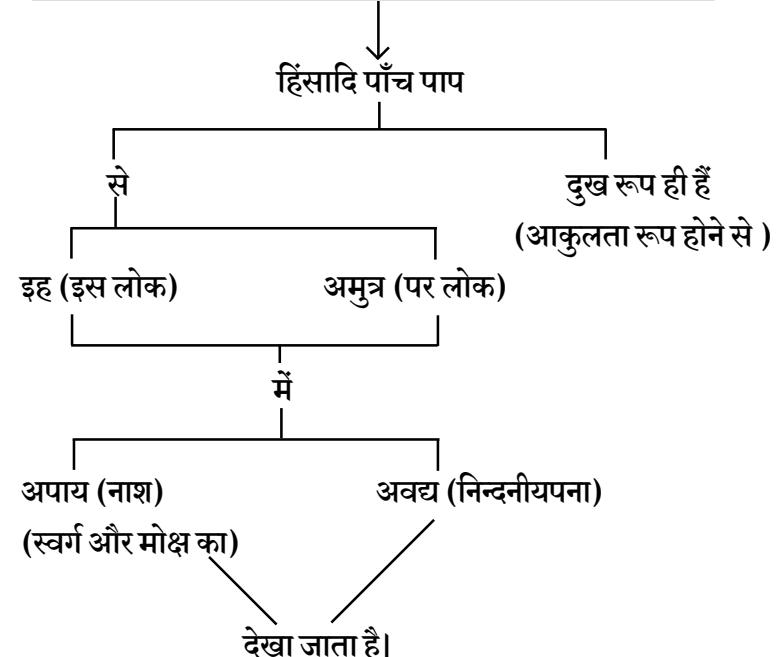
हिंसादिव्यहामुत्रापायावद्यदर्शनम्॥9॥

सूत्रार्थ - हिंसादिक पाँच दोषों में ऐहिक और पारलौकिक अपाय और अवद्य का दर्शन भावने योग्य है॥9॥

दुःखमेव वा॥10॥

सूत्रार्थ - अथवा हिंसादिक दुःख ही हैं - ऐसी भावना करनी चाहिए॥10॥

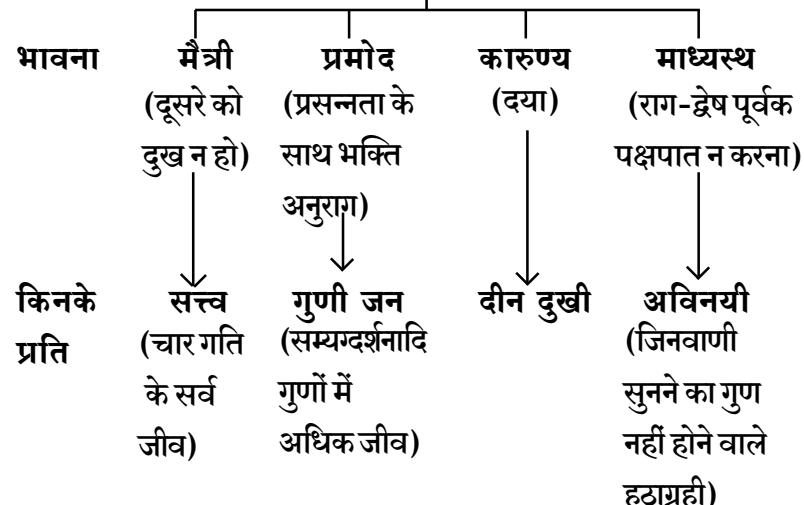
हिंसादि से विरक्त होने की भावना



मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि च सत्त्वगुणाधिकविलश्यमाना-
विनयेषु॥11॥

सूत्रार्थ- प्राणीमात्र में मैत्री, गुणाधिकों में प्रमोद, किलश्यमानों में करुणावृत्ति और अविनेयों में माध्यस्थ भावना करनी चाहिए॥11॥

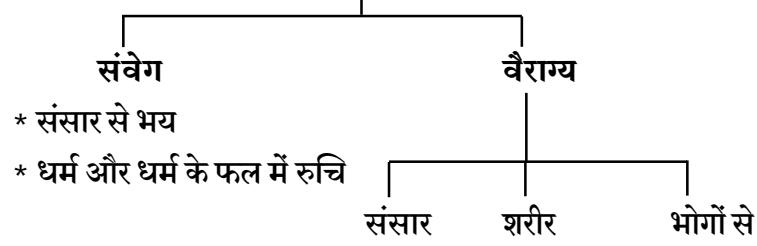
व्रती के चिन्तन योग्य अन्य भावनाएँ



जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम्॥12॥

सूत्रार्थ - संवेग और वैराग्य के लिए जगत के स्वभाव और शरीर के स्वभाव की भावना करनी चाहिए॥12॥

व्रती को वैराग्य बढ़ाने के लिए



पाँच पाप

हिंसा (असावधानी- प्रमाद पूर्वक प्राणों का वियोग - घात करना)	झूठ (अयन्त्राचार- अप्रशस्त[दुख- दायी, मिथ्या] वचन बोलना)	चोरी (बिना दी ग्रहण करना) पुरुष की जो भी चेष्टा)	अब्रहा (रति जन्य लिए स्त्री- पुरुष की जो भी चेष्टा)	परिग्रह (पर द्रव्य में ममत्व परिणाम)
--	--	---	--	---

प्रमत्तयोगात्माणव्यपरोपणं हिंसा॥13॥

सूत्रार्थ - प्रमत्तयोग से प्राणों का वध करना हिंसा है॥13॥

हिंसा

	भाव	द्रव्य
स्व की	* आत्मा में रागादि भावों की उत्पत्ति	* दीर्घश्वासादिक, हाथ-पैर से अपने अंगों को पीड़ा पहुँचाना, अपघात करना
पर की	* मर्म भेदी वचन, कार्य आदि जिससे दूसरे का अंतरंग पीड़ित हो	* अन्य के शरीर को पीड़ा पहुँचाना अथवा प्राण नाश करना

हिंसा के अन्य प्रकार से भ्रेद

संकल्पी (जान-बूझकर मारने का भाव) (शिकारादि)	आरम्भी (गृह संबंधित कार्यों में होने वाली)	औद्योगिक (व्यापारादि संबंधित कार्यों में होने वाली)	विरोधी (देव, शास्त्र, गुरु आदि की रक्षा संबंधित)
--	---	--	---

पर जीव के घात रूप हिंसा

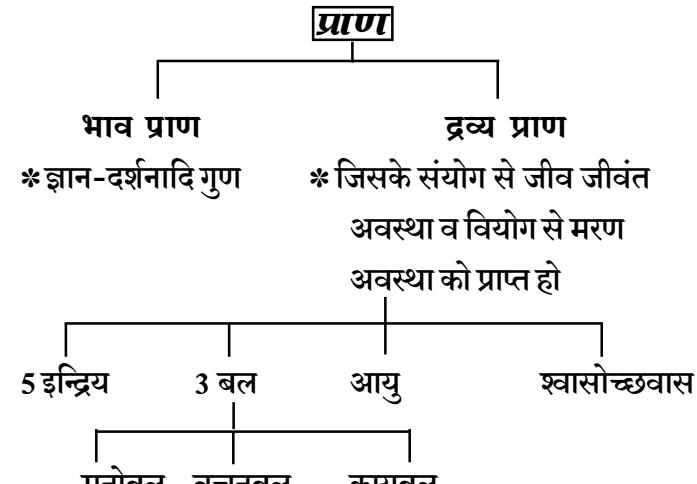
अविरमण रूप	परिणमन रूप
* पर जीव के घात में प्रवर्तन न होने पर भी हिंसा का त्याग नहीं करना	* पर जीव के घात में प्रवर्तन करना

हिंसा के त्याग के लिए जानें

हिंस्य	हिंसक	हिंसा	हिंसा फल
* जिसकी हिंसा हो	* हिंसा करने वाला	* हिंस्य का घात करना,	* इस लोक में निन्दा
		पीड़ा पहुँचाना नरकादि दुःख	घात व पर लोक में
* स्वयं उसका घात न करें	* स्वयं वैसे न बनें	* इसका त्याग	* इससे भयभीत रहें
			करें

15 प्रमाद

5 इन्द्रिय	4 कषाय	4 विकथा	निद्रा	स्नेह
-स्पर्शन	-क्रोध	-स्त्री कथा		
-रसना	-मान	-भोजन कथा		
-ग्राण	-माया	-राष्ट्र कथा		
-चक्षु	-लोभ	-चोर कथा		
-श्रोत्र				



असदभिधानमनृतम्॥14॥

सूत्रार्थ - असत् बोलना अनृत है॥14॥

असत्य

विद्यमान	अविद्यमान	विद्यमान
वस्तु का निषेध करना	वस्तु का सद्भाव प्रकट करना	वस्तु को अन्य स्वरूप से कहना

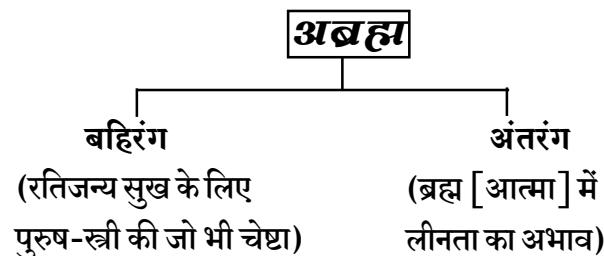
गर्हित (निन्द्य)	अवद्य (पाप संयुक्त)	अप्रिय
-दुष्टा व निन्दा	-छेदन	-अप्रीतिकारक
रूप हास्य	-भेदन	-भयकारक
-कठोर	-मारण	-खेदकारक
-मिथ्याश्रद्धान्	-शोषण	-बैर
-प्रलापरूप	-व्यापार	-शोक
शास्त्र विरुद्ध आदि	चोरी आदि के वचन	कलहकारक आदि

अदत्तादानं स्तेयम्॥15॥

सूत्रार्थ - बिना दी हुई वस्तु का लेना स्तेय है॥15॥

मैथुनमब्रह्म॥16॥

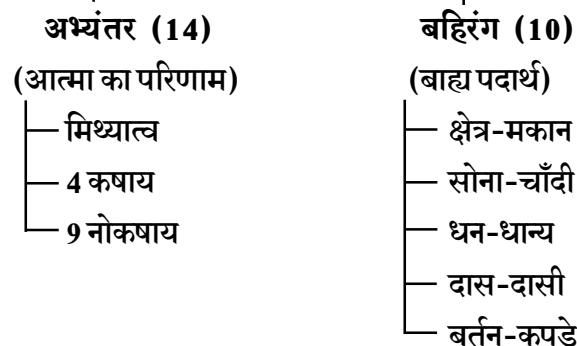
सूत्रार्थ - मैथुन अब्रह्म है॥16॥



मूच्छा परिग्रहः॥17॥

सूत्रार्थ - मूच्छा परिग्रह है॥17॥

परिग्रह

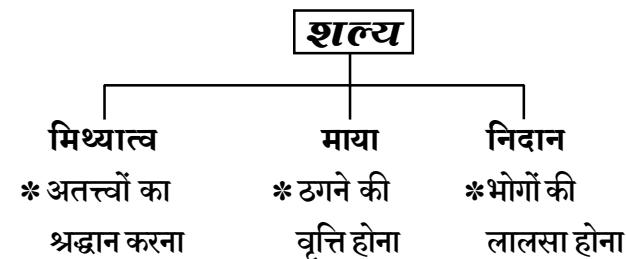


निशश्ल्यो व्रती॥18॥

सूत्रार्थ - जो शत्यरहित है, वह व्रती है॥18॥

व्रती की विशेषता

शत्य (निरंतर पीड़ा देने वाली वस्तु, जैसे शरीर में चुभा काँटा) से रहित होना



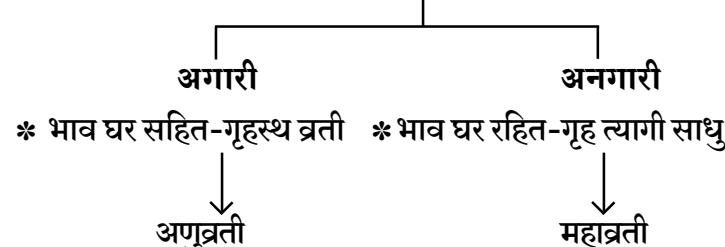
अगार्यनगारश्च॥19॥

सूत्रार्थ - उसके अगारी और अनागार - ये दो भेद हैं॥19॥

अणुव्रतोऽगारी॥20॥

सूत्रार्थ - अणुव्रतों का धारी अगारी है॥20॥

व्रती



गृहस्थ के व्रत

5 अणुव्रत	7 शील व्रत	सल्लेखना
* मूल व्रत	* उत्तर व्रत	* जीवन के अंत में स्वीकृत व्रत
* अत्य व्रत (समस्त पाप क्रिया का पूर्ण अभाव न होने से)	* मूल व्रतों की रक्षा के लिए हैं	

अणुव्रत

अहिंसाणुव्रत	सत्याणुव्रत	अचौर्य अणुव्रत	ब्रह्मचर्याणुव्रत	परिग्रह परिमाणाणुव्रत
संकल्पी त्रस हिंसा का त्याग व स्थावर हिंसा को यथासंभव कम करना	स्नेह, बैर, मोह, भय के वश असत्य कहने का त्याग	बिना दिया दूसरे के द्रव्य को ग्रहण करने का त्याग	स्वीकारी या बिना स्वीकारी परस्ती के संग का त्याग करना	स्वेच्छा से परिग्रह का परिमाण करना

दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोष्ठोपवासोपभोगपरिभोगपरिमाणातिथिसंविभागव्रतसंपन्नश्च ॥२१॥

सूत्रार्थ - वह दिग्विरति, देशविरति, अनर्थदण्डविरति, सामायिकव्रत, प्रोष्ठोपवासव्रत, उपभोगपरिभोगपरिमाणव्रत और अतिथिसंविभागव्रत - इन व्रतों से भी सम्पन्न होता है ॥२१॥

7 शीलव्रत

गुणव्रत (अणुव्रतों का उपकार करे)	शिक्षाव्रत (मुनिव्रत पालन की शिक्षा मिले)
दिग्विरति	देशविरति
* पूर्वादि 10 दिशाओं में प्रसिद्ध चिह्नों के द्वारा जीवनपर्यात की मर्यादा करना	* ग्रामादिक की निश्चित काल के लिए प्रवृत्ति केवल पाप का मर्यादा करना
	* उपकार न होकर जो कारण है, उसका त्याग करना

सामायिक व्रत	प्रोष्ठोपवास व्रत	उपभोगपरिभोग व्रत	अतिथि परिमाण व्रत	संविभाग व्रत
* समस्त पाप योग क्रिया व राग-द्वेष सकल आरम्भ, कात्याग, साम्यभाव विषय-कषाय को प्राप्त हो शुद्ध व आहार का आत्मस्वरूप में त्याग करना	* पर्व के दिनों में सकल आरम्भ, विषय-कषाय की मर्यादा लेकर त्याग करना	* न्यायरूप उपभोग परिभोग में काल लिए अपने भोजन, धनादि का विभाग करना	* मोक्ष उद्यमी के लिए अपने भोजन, धनादि का विभाग करना	

अनर्थदण्ड

अपध्यान	पापोपदेश	प्रमादचरित	हिंसाप्रदान	अशुभश्रुति
* दूसरे की जय-पराजय, मृत्यु हिंसा के कारण के पाप आदि कैसे हो, भूत वाणिज्य एसा मन में का प्रसार करने विचार करना वाले आरम्भ आदि के वचन	* प्राणियों के बिना प्रयोजन * हिंसा के उपकरणों आदि को कार्य करना को प्रदान करना (देना) कथा का सुनना व शिक्षा देना	* हिंसा व राग पराजय, मृत्यु हिंसा के कारण के पाप उपकरणों आदि को कार्य करना को प्रदान बढ़ाने वाली कथा का सुनना व शिक्षा देना	* हिंसा व राग पराजय, मृत्यु हिंसा के कारण के पाप उपकरणों आदि को कार्य करना को प्रदान बढ़ाने वाली कथा का सुनना व शिक्षा देना	

उपभोग-परिभोग

उपभोग

* जो वस्तु एक बार ही भोगने में आती है

जैसे - * भोजन, पानी, इत्र, पुष्टि, * गृह, वाहन, वस्त्र, आभूषण आदि
माला आदि

परिभोग

* जो वस्तु अनेक बार भोगने में आती है

अतिचार

शङ्काकाङ्क्षाविचिकित्साऽन्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवा:

सम्यग्वृष्टे रतिचाराः ॥२३॥

सूत्रार्थ - शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, अन्यदृष्टिप्रशंसा और अन्यदृष्टिसंस्तव
-ये सम्यग्वृष्टि के पाँच अतिचार हैं ॥२३॥

सम्यग्वृदर्शन के अतिचार

शंका	कांक्षा	विचिकित्सा	अन्यदृष्टि
*आत्मा को अखण्ड आहार में सहायक शास्त्र आदि मारणान्तिकीं खल्लेखनां जोषिता ॥२२॥	*इस लोक परलोक में भोगादिक जानकर भी ७ प्रकार के भय को प्राप्त होना	*दुःखी, रोगी दरिद्री इत्यादि मनुष्य, तिर्यच और मुनिराज के शरीर को देख ग्लानि	*मिथ्यादृष्टि का ज्ञान, चारित्र आदि को देख प्रशंसा संस्तव *मन में देख ग्लानि भला जानना प्रशंसा करना
*निर्दोष शुद्ध रत्नत्रय बढ़ाने आहार में सहायक शास्त्र आदि मारणान्तिकीं खल्लेखनां जोषिता ॥२२॥	*योग्य औषधि के लिए	*ध्यान-अध्ययन	
		(रहने का स्थान)	

सम्यग्वृष्टि को इन दोषों का खेद हो और ये यदा-कदा हों तो ये अतिचार हैं, अन्यथा अनाचार होते हैं।

व्रतभंग के लिए सहायक परिणाम

अतिक्रम	व्यतिक्रम	अतिचार	अनाचार
* मन में व्रतभंग	* व्रत का उल्लंघन	* विषयों का विचार उठना	* विषयों में प्रवृत्ति

अतिथि संविभाग के योग्य सामग्री

भिक्षा	उपकरण	औषध	प्रतिश्रय
*निर्दोष शुद्ध रत्नत्रय बढ़ाने आहार में सहायक शास्त्र आदि मारणान्तिकीं खल्लेखनां जोषिता ॥२२॥	*रत्नत्रय बढ़ाने	*योग्य	(रहने का स्थान)

सूत्रार्थ - तथा वह मारणान्तिक सल्लेखना का प्रीतिपूर्वक सेवन करने वाला होता है ॥२२॥

सल्लेखना (अच्छे प्रकार से कृश करना)

भेद	काय		कषाय
	(बाहरी शरीर)	(भीतरी परिणाम)	
कैसे करें	अनशन, रस परित्यागादि के क्रम से	शुभ ध्यान, स्वाध्यायादि पूर्वक निज परमात्म स्वरूप के सेवन से	
प्रकार कृश करें	इतना ही कृश करें कि परिणाम आकुलित होकर, आराधना से चलायमान न हों	इस प्रकार कि मोह, राग, द्वेषादि से अपना ज्ञान-दर्शन रूप परिणाम मलिन न हो	

ब्रती मरण के अंत में इसे प्रीतिपूर्वक स्वीकार करता है।

अतिचार	अनाचार
*व्रत का एकदेश भंग	*व्रत का पूर्ण भंग
*अज्ञान, असावधानी, मोहवश होते हैं	*जान-बूझकर करना
*संस्कारवश - क्षणिक	*अभिप्राय पूर्वक
*आत्मगलानि सहित हो जाने वाला	*अच्छा समझकर किया जाने वाला
*'यह गलत किया' ऐसा भाव होता है	*'किया तो किया, क्या गलत है'
*पर्वत जितना होने पर भी हल्का	*तुच्छ होने पर भी बड़ा अपराध

ब्रतशीलेषु पञ्च पञ्च यथाक्रम् ॥24॥

सूत्रार्थ - ब्रतों और शीलों में पाँच-पाँच अतिचार हैं, जो क्रम से इस प्रकार हैं ॥24॥

क्रतों के पाँच-पाँच अतिचार

बन्धवधच्छेदातिभारारोपणान्पाननिरोधाः ॥25॥

सूत्रार्थ - बन्ध, वध, छेद, अतिभार का आरोपण और अन्पान का निरोध - ये अहिंसा अणुव्रत के पाँच अतिचार हैं ॥25॥

अहिंसाणुव्रत

बन्ध	वध	छेद	अतिभारारो	अन्पाननिरोध
किसी को अपने इष्ट स्थान में जाने से रोकना	डंडा, चाबुक, आदि से प्राणियों को मारना	कान, नाक, आदि अवयवों को भेदना	उचित भार से अधिक भार का लादना	भूख-प्यास में बाधा कर अन्न-पान का रोकना

मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेखक्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रभेदाः ॥26॥

सूत्रार्थ - मिथ्योपदेश, रहोभ्याख्यान, कूटलेखक्रिया, न्यासापहार और साकार-मन्त्रभेद - ये सत्याणुव्रत के पाँच अतिचार हैं ॥26॥

सत्याणुव्रत

मिथ्योपदेश	रहोभ्याख्यान	कूटलेखक्रिया	न्यासापहार	साकार मंत्र भेद
मोक्षमार्ग से विपरीत उपदेश देना	स्त्री-पुरुष के एकांत आचरण को प्रकट कर देना	अन्य के बारे में झूठा लेख लिखना	धरोहर रखने वाला आकर कम वापस माँगे तो कम ही दे देना	किसी कारण दूसरे के मन की बात जान उसे अन्य को प्रकट कर देना

स्तेनप्रयोगतदाहृतादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकव्यवहाराः ॥27॥

सूत्रार्थ - स्तेनप्रयोग, स्तेन आहृतादान, विरुद्धराज्यातिक्रम, हीनाधिक मानोन्मान और प्रतिरूपकव्यवहार-ये अचौर्य अणुव्रत के पाँच अतिचार हैं ॥27॥

अचौर्याणुव्रत

स्तेन प्रयोग	स्तेन आहृतादान	विरुद्ध राज्यातिक्रम	हीनाधिक मानोन्मान	प्रतिरूपकव्यवहार
किसी को चोरी के लिए प्रेरित करना, कराना व अनुमोदना करना	चोरी की वस्तु का ग्रहण	राज्य आज्ञा के विरुद्ध चलना	लेने के बदेने के माप कम-ज्यादा रखना	उत्तम वस्तु में खोटी मिला कर अच्छी कहकर बेचना

परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीड़ाकाम-
तीव्राभिनिवेशः॥२८॥

सूत्रार्थ- परविवाहकरण, इत्वरिकापरिगृहीतागमन, इत्वरिकाअपरिगृहीतागमन, अनङ्गक्रीड़ा और कामतीव्राभिनिवेश - ये स्वदारसन्तोष अणुव्रत के पाँच अतिचार हैं॥२८॥

ब्रह्मचर्याणुव्रत

परविवाह करण	इत्वरिका		अनङ्गक्रीड़ा	काम तीव्रा-भिनिवेश
	परिगृहीता गमन	अपरिगृहीता गमन		
दूसरों का विवाह करना	जिसका कोई स्वामी हो ↓ ऐसी व्यभिचारिणी स्त्री के यहाँ जाना-आना आदि करना	जिसका कोई स्वामी न हो ↓ सेवन करना	काम सेवन के निश्चित अंगों को छोड़ शेष अंगों द्वारा काम	काम सेवन की तीव्र अभिलाषा रखना

क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्णधनधान्यदासीदासकुप्यप्रमाणातिक्रमाः॥२९॥

सूत्रार्थ - क्षेत्र और वास्तु के प्रमाण का अतिक्रम, हिरण्य और सुवर्ण के प्रमाण का अतिक्रम, धन और धान्य के प्रमाण का अतिक्रम, दासी और दास के प्रमाण का अतिक्रम तथा कुप्य के प्रमाण का अतिक्रम ये परिग्रहपरिमाण अणुव्रत के पाँच अतिचार हैं॥२९॥

परिग्रह परिमाणाणुव्रत

बहिरंग परिग्रह

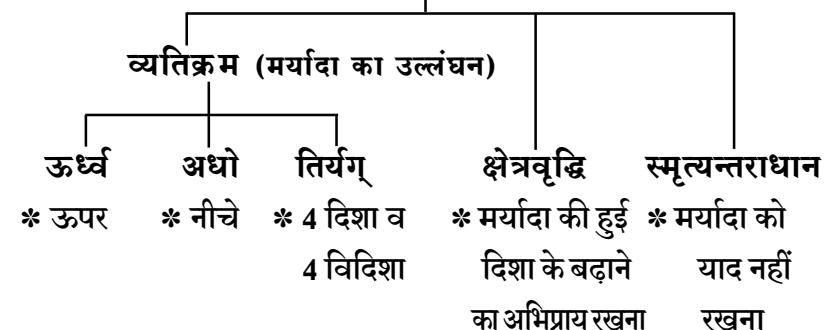
क्षेत्र-वास्तु (जमीन-घर)	हिरण्य-स्वर्ण (चाँदी-सोना)	धन-धान्य (गोधनादि-अनाज आदि)	दासी-दास	कुप्य (वस्त्रादि)
इनके प्रमाण का उल्लंघन करना				

गुणव्रतों के अतिचार

ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्रवृद्धिस्मृत्यन्तराधानानि॥३०॥

सूत्रार्थ - ऊर्ध्वव्यतिक्रम, अधोव्यतिक्रम, तिर्यग्व्यतिक्रम, क्षेत्रवृद्धि और स्मृत्यन्तराधान - ये दिविरतिव्रत के पाँच अतिचार हैं॥३०॥

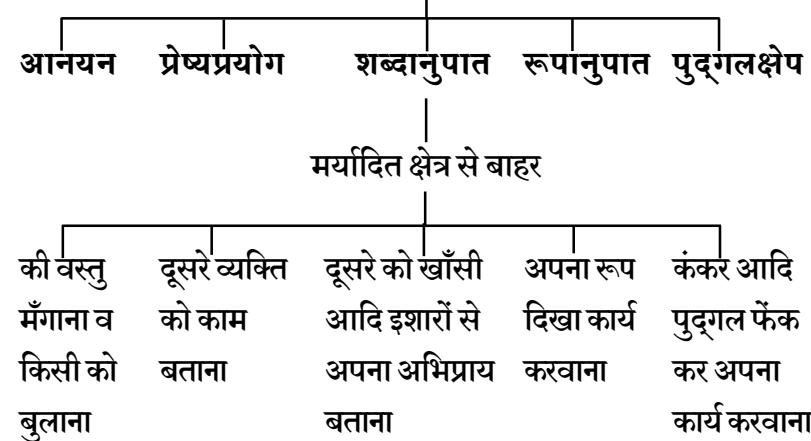
दिविरति



आनयनप्रेष्यप्रयोगशब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपाः॥३१॥

सूत्रार्थ - आनयन, प्रेष्यप्रयोग, शब्दानुपात, रूपानुपात और पुद्गलक्षेप - ये देशविरति व्रत के पाँच अतिचार हैं॥३१॥

देशविरति



कन्दर्पकौल्कुच्यमौख्यासिमीक्ष्याधिकरणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि॥३२॥
सूत्रार्थ - कन्दर्प, कौल्कुच्य, मौख्य, असमीक्ष्याधिकरण और उपभोगपरिभोगा-
 नर्थक्य - ये अनर्थदण्डविरति व्रत के पाँच अतिचार हैं॥३२॥

अनर्थदण्डविरति

कन्दर्प	कौल्कुच्य	मौख्य	असमीक्ष्या- धिकरण	उपभोगपरिभोग अनर्थक्य
रागभाव की तीव्रतावश	कन्दर्प के साथ शारीरिक	धीठता पूर्वक कुछ भी बक- वास करना	प्रयोजन विचारे बिना अधिक प्रवृत्ति करना	आवश्यकता से अधिक वस्तु का संग्रह करना
हास्य मिश्रित असभ्य वचन बोलना	कुचेष्टा करना			

शिक्षाव्रत के अतिचार

योगदुष्प्रणिधानानादरस्मृत्यनुपस्थानानि॥३३॥

सूत्रार्थ - काययोगदुष्प्रणिधान, वचनयोगदुष्प्रणिधान, मनयोगदुष्प्रणिधान, अनादर
और स्मृति का अनुपस्थान -ये सामायिक व्रत के पाँच अतिचार हैं॥३३॥

सामायिक व्रत

दुष्प्रणिधान (सामायिक काल में अन्यथा प्रवर्तन)				
काय	वचन	मन	अनादर	स्मृति अनुपस्थान
* शरीर के	* अशुद्ध	* अर्थ में मन	* उत्साह रहित	* एकाग्रता के
अंगोपांगादि उच्चारण,	नहीं लगाना	सामायिक	अभाव में पाठ	
को निश्च-	सही अर्थ	करना	आदि भूल जाना	
लता रहित	का ज्ञान			
रखना	न होना			

सप्तम अध्याय
 अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तरोपक्रमणानादर-
 स्मृत्यनुपस्थानानि॥३४॥

सूत्रार्थ - अप्रत्यवेक्षित-अप्रमार्जित भूमि में उत्सर्ग, अप्रत्यवेक्षित-अप्रमार्जित
वस्तु का आदान, अप्रत्यवेक्षित-अप्रमार्जित संस्तर का उपक्रमण, अनादर
और स्मृति का अनुपस्थान -ये प्रोष्ठोपवास व्रत के पाँच अतिचार हैं॥३४॥

प्रोष्ठोपवास व्रत

अप्रत्यवेक्षित अप्रमार्जित (बिना देखे - बिना शोधे)				
उत्सर्ग	आदान	संस्तर	अनादर	स्मृति अनुपस्थान
*जमीन पर	*पूजा के उप-	*भूमि पर	* उत्साह रहित	* आवश्यक धर्म
मल-मूत्र	करण आदि	आसनादि	आवश्यक	कार्य करना
का त्याग	व स्वयं के	बिछाना	कार्य करना	भूल जाना
करना		वस्त्रादि ले लेना		

सचित्तसम्बन्धसम्मिश्रिष्वदुप्पक्वाहाराः॥३५॥

सूत्रार्थ - सचित्ताहार, संबन्धाहार, संमिश्राहार, अभिषवाहार और दुःपक्वाहार
- ये उपभोगपरिभोगपरिमाण व्रत के पाँच अतिचार हैं॥३५॥

उपभोग परिभोग परिमाण व्रत

सचित्त (चेतना सहित पदार्थ)		
आहार	संबंधाहार	सम्मिश्राहार अभिषवाहार दुःपक्वाहार
*जैसे-कच्चे	* से सम्बन्ध	* से मिश्रित *गरिष्ठ आहार * अध्यपका,
फल, फूलादि	प्राप्त हुआ	हुआ आहार अधिक पका
		आहार

सचित्तनिक्षेपापिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमः॥३६॥

सूत्रार्थ - सचित्तनिक्षेप, सचित्तापिधान, परव्यपदेश, मात्सर्य और कालातिक्रम
- ये अतिथिसंविभाग व्रत के पाँच अतिचार हैं॥३६॥

अतिथि संविभाग व्रत

(सभी आहार दान से सम्बन्धित)

सचित्त			
निक्षेप	अपिधान	परव्यपदेश	मात्सर्य
*सचित्त	*सचित्त द्वारा	*'अन्य की वस्तु	*अनादर से
आहार	आहार को	है' - यह कह	देना और
रखना	ढाँकना	कर दान देना	अन्य दातार करके दान
			से ईर्ष्या करना
			देना

जीवितमरणाशंसामित्रानुरागसुखानुबन्धनिदानानि॥३७॥

सूत्रार्थ - जीविताशंसा, मरणाशंसा, मित्रानुराग, सुखानुबन्ध और निदान - ये सत्त्वेखना के पाँच अतिचार हैं॥३७॥

सत्त्वेखना अतिचार

आशंसा (चाह)			
जीवित	मरण	मित्रानुराग	सुखानुबन्ध
*जीने की	*मरने की	*मित्रों को	*पूर्व में भोगे भोगों
याद करना	का स्मरण करना	की वांछा करना	*आगामी भोगों

अनुग्रहार्थ स्वस्यातिसर्गो दानम्॥३८॥

सूत्रार्थ - अनुग्रह (निज व पर के कल्याण) के लिए अपनी वस्तु का त्याग करना दान है॥३८॥

दान

(उपकार के लिए स्व की वस्तु का त्याग)

स्व का उपकार

* लोभ वृत्ति कम होती है

* आत्मा त्याग की तरफ झुकता है

* पुण्यबंध होता है

पर का उपकार

* जीवन यात्रा में मदद

* धर्म साधना में सहायता

विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषान्तद्विशेषः॥३९॥

सूत्रार्थ - विधि, देय वस्तु, दाता और पात्र की विशेषता से उसकी विशेषता है॥३९॥

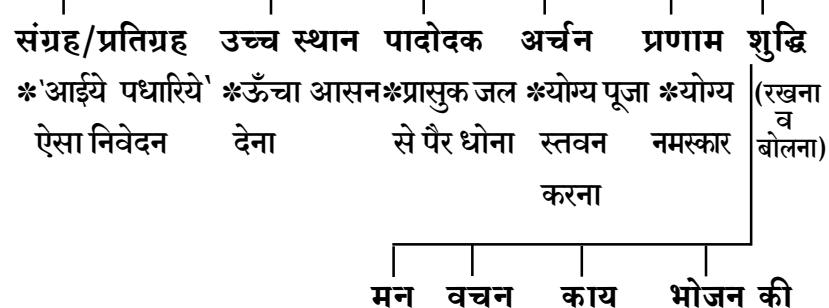
दान के फल में विशेषता के कारण

विधि विशेष	द्रव्य विशेष	दाता विशेष	पात्रविशेष
* नवधा भक्ति में विशेषता	* देय वस्तु जिससे तप स्वाध्याय आदि की वृद्धि हो	*दान देने वाला जो ईर्ष्या खेद रहित सात गुणों से युक्त हो	* दान लेने वाला मोक्ष के कारणभूत सम्पर्क द्वारा दानिगुणों से युक्त हो

उत्तम मध्यम जघन्य

*मुनिराज *ब्रती श्रावक *अव्रती सम्यग्दृष्टि

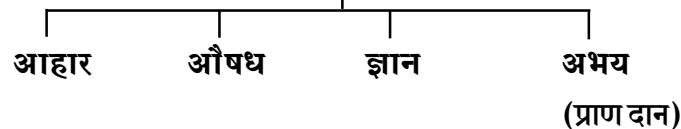
विद्यि विशेष



दाता के सात गुण

भक्ति	तुष्टि	श्रद्धा	विज्ञान	अलोलुप	सात्त्विक	क्षमा
प्रमाद रहित, ज्ञान सहित	पात्र प्राप्ति पर अत्यंत खुशी	दान कल्याण -कारी है ऐसा विश्वास	योग्य भक्ष्य पदार्थ का दान देना	सांसारिक लाभ की इच्छा रहित होना	धन थोड़ा होने पर भी दान के प्रति उत्साह	किसी पर भी रोष नहीं करना

दान के प्रकार



विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
बंध के कारण	1	1	155-156
बंध और बंध के भेद	2-3	2	157-158
द्रव्य बंध			
प्रकृति बंध	4-13	10	159-173
स्थिति बंध			
-उत्कृष्ट	14-17	4	174-177
-जघन्य	18-20	3	174-175
अनुभाग बंध	21-23	3	177-179
प्रदेश बंध	24	1	179-180
पुण्य व पाप प्रकृतियाँ	25-26	2	180-181
कुल	26		

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥1॥

सूत्रार्थ - मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग ये बन्ध के हेतु हैं ॥1॥

बंध के कारण

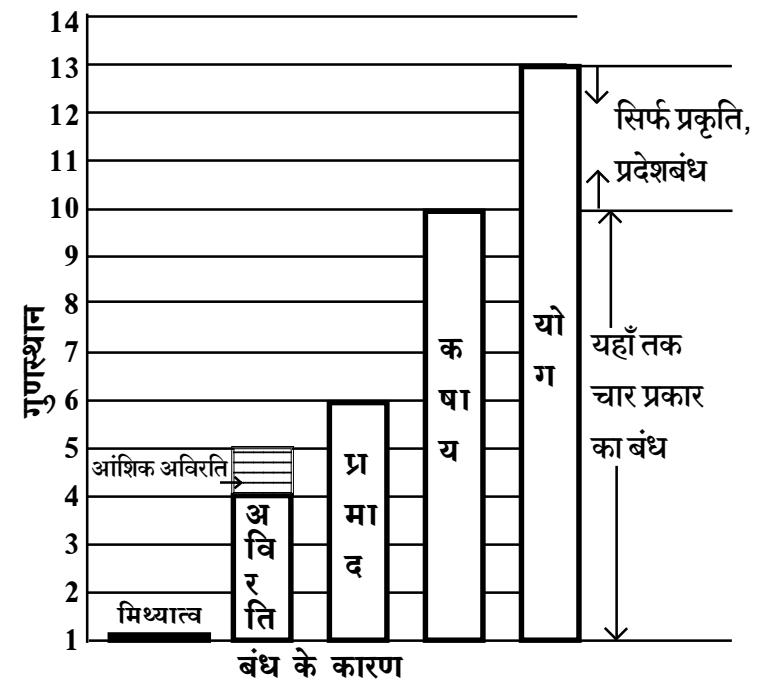
मिथ्यादर्शन(2) अविरति(12) प्रमाद(15) कषाय(25) योग(15)
 (अतत्त्वश्रद्धान) (इन्द्रिय विषयों (अच्छे कार्यों (आत्मा (आत्मा के
 व प्राणी हिंसा में अनुत्साह) को क्से) प्रदेशों का
 का त्याग न होना) परिस्पन्दन)

अगृहीत (नैसर्गिक)	गृहीत (परोपदेश पूर्वक)	6 इन्द्रिय अविरति	6 प्राणी अविरति	एकान्त विपरीत संशय विनय अज्ञान
----------------------	---------------------------	----------------------	--------------------	--

योग (15)

मनोयोग(4)	वचनयोग(4)	काययोग(7)
सत्य मनोयोग	सत्य वचन योग	औदारिक काय योग
असत्य मनोयोग	असत्य वचन योग	औदारिक मिश्र काय योग
उभय मनोयोग	उभय वचन योग	वैक्रियिक काय योग
अनुभय मनोयोग	अनुभय वचन योग	वैक्रियिक मिश्र काययोग
		आहारक काय योग
		आहारक मिश्र काय योग
		कार्मण काय योग

किस गुणस्थान तक बंध के कौन-से कारण होते हैं

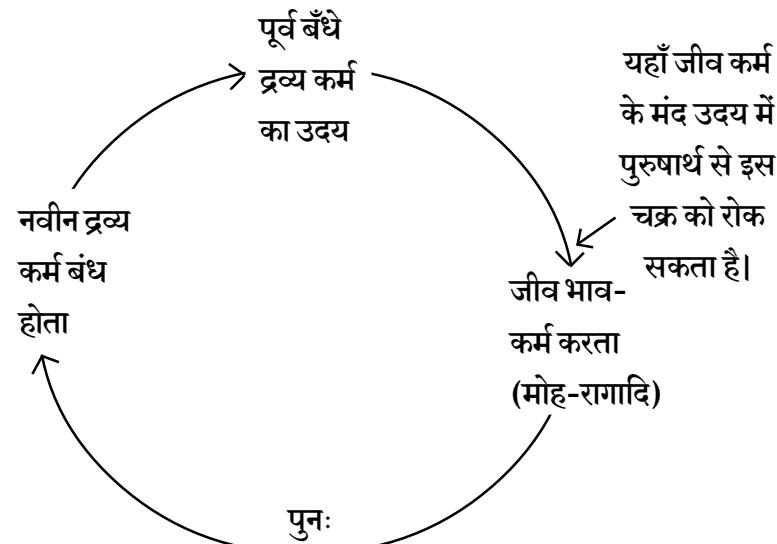


सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यानुद्गलानादत्ते स बन्धः॥१२॥
सूत्रार्थ - कषाय सहित होने से जीव कर्म के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करता है,
वह बंध है॥१२॥

बंध क्या है

- * क्या हो रहा है? → बंध
- * किसका? → योग्य कार्मण वर्गणा का (पुद्गल का)
- * किसे? → कषाय सहित जीव को (संसारी मूर्तिक जीव)
- * कब से? → अनादि से

कर्म बंध चक्र



द्रव्यकर्म-भावकर्म निमित्त-उपादान

कार्य	उपादान कारण(कर्ता)	निमित्त कारण
	(स्वयं कार्य रूप परिणमे)	(स्वयं कार्य रूप न परिणमे, पर कार्य की उत्पत्ति में सहायक हो)
द्रव्य बंध (द्रव्य कर्म)	कार्मण वर्गणा	जीव के योग व कषाय
भाव बंध (भाव कर्म)	जीव के योग कषाय की पूर्व पर्याय	उदय/उदीरणा को प्राप्त कर्म
हृषांत- घड़ा	मिट्टी	कुम्भकार

प्रकृतिस्थित्यनुभवप्रदेशास्तद्विधयः॥३॥

सूत्रार्थ - उसके प्रकृति, स्थिति, अनुभव और प्रदेश - ये चार भेद हैं॥३॥

बंध

नाम	प्रकृति	प्रदेश	स्थिति	अनुभाग
स्वरूप (कर्म का..)	स्वभाव	परमाणुओं की संख्या	आत्मा के साथ रहने की मियाद	फल दान देने की हीनाधिक शक्ति
कर्म का	द्रव्य	क्षेत्र	काल	भाव
कारण	योग से		कषाय से	

आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामिगोत्रान्तरायाः ॥४॥
सूत्रार्थ - पहला अर्थात् प्रकृतिबन्ध ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र और अन्तराय रूप है ॥४॥

पञ्चनवद्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपञ्चभेदा यथाक्रमम् ॥५॥
सूत्रार्थ - आठ मूल प्रकृतियों के अनुक्रम से पाँच, नौ, दो, अट्ठाईस, चार, ब्यालीस, दो और पाँच भेद हैं ॥५॥

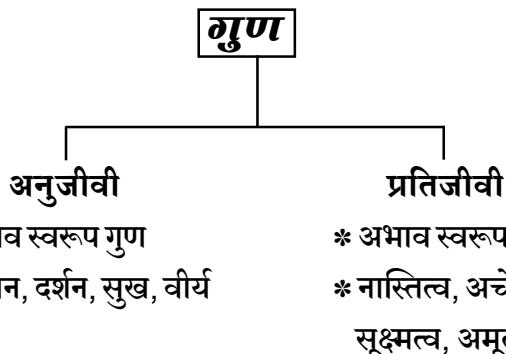
कर्म के भेद

सामान्य से	1-कर्म 2-घातिया कर्म-अघातिया कर्म 3-द्रव्यकर्म, भाव कर्म, नो कर्म
मूल प्रकृति	8
उत्तर प्रकृति	148 (संख्यात)
भावों की अपेक्षा	असंख्यात
परमाणुओं की अपेक्षा	अनंत
अविभाग प्रतिच्छेद अपेक्षा	अनंतानंत

द्रव्य कर्म क्या? → जीव के रागादि परिणामों के निमित्त से जो कार्मण वर्गणा जीव के साथ संबंध को प्राप्त होती है।

घातिया कर्म (आत्मा के अनुजीवी गुणों को घाते) अघातिया कर्म (प्रतिजीवी गुणों को घाते)

नाम	ज्ञानावरण दर्शनावरण	अंतराय	मोहनीय	आयु	नाम	गोत्र	वेदनीय
भेद	5	9	5	28	4	42	2
स्वरूप (प्रकृति)	जीव के	ज्ञान को दर्शन को वीर्य को आवृत्त करें (ढकें)	सम्यक्लव व चारित्र को रोके रखें	-शरीर में शरीर में रोके रखें	-गत्यादि रूप परिणामावै शरीरादि बनवावे	-उच्च-नीच पना प्राप्त करवाये	-आकुलता ही
दृष्टांत	मूर्ति पर पड़ा पर्दा	द्वारपाल खजांची	मदिरा बेड़ी	चित्रकार कुम्भकार	शहद लपेटी तलवार की धार		
इसके	अभाव में अनंत दर्शन ज्ञान	अनंत वीर्य	अवगाहनत्व सूक्ष्मत्व	अवगाहनत्व सूक्ष्मत्व	अगुलधुल अव्याधत्व		

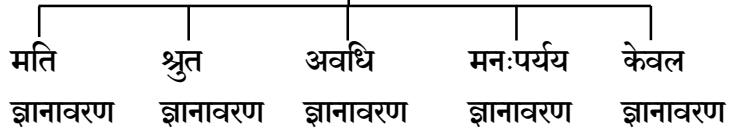


मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानाम्॥६॥

सूत्रार्थ - मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान और केवलज्ञान - इनको आवरण करनेवाले कर्म पाँच ज्ञानावरण हैं॥६॥

ज्ञानावरण

5 ज्ञान को आवरण करने वाले 5 भेद

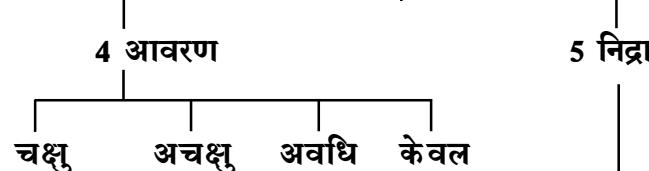


चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां
निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृद्ध्यश्च॥७॥

सूत्रार्थ - चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन - इन चारों के चार आवरण तथा निद्रा, निद्रा-निद्रा, प्रचला, प्रचला-प्रचला और स्त्यानगृद्धि - ये पाँच निद्रादिक ऐसे नौ दर्शनावरण हैं॥७॥

दर्शनावरण

(प्रत्येक भेद के साथ 'दर्शनावरण' लगावें)



निद्रा	निद्रा-2	प्रचला	प्रचला-2	स्त्यानगृद्धि
*थकावट को दूर करने के लिए	* नींद पर नींद	* शोक, श्रम, मद से उत्पन्न नींद आए	*खड़े-2, बैठे-2 पुनः-2 नींद आए	* वीर्य शक्ति विशेष होने से नींद में कठिन कार्य करना
*गमन करते हुए रुकना, बैठना, गिरना	*नेत्रों को न उधाड़ न पाना	* नेत्र कुछ उधाड़े हुए सोना, ऊँधना	* मुख से लार आना, हाथ पैर चलाना	* उठा हुआ भी सोना

ଦର୍ଶନ

चक्षु	अचक्षु	अवधि	के वल
*नेत्रजन्य मति	*नेत्र के सिवाय	*अवधिज्ञान	*केवलज्ञान
ज्ञान से पहले	शेष इन्द्रियों व मन संबंधी मति	से पहले	के साथ
	ज्ञान से पहले		

यहाँ 4 दर्शन बताए हैं, ऊपर इनको आवरण करने वाले
4 दर्शनावरण कर्म जानना।

दर्शन-ज्ञान का व्यापार

अल्पज्ञ (छद्मस्थ)	सर्वज्ञ (केवली)
*दर्शन पहले फिर ज्ञान	*दर्शन और ज्ञान साथ में
*क्रमशः	*युगपद्
*क्षायोपशमिक	*क्षायिक

મનઃપર્યાઙ્ગાન ઉત્પત્તિ ક્રમ

अचक्षु दर्शन → ईहा मतिज्ञान → मनःपर्यय ज्ञान
 मनःपर्यय दर्शन न होने से उसे आवरण करने वाला कम्
 भी नहीं होता है।

सदसद्वेद्ये ॥४॥

सूत्रार्थ - सद्वेद्य और असद्वेद्य - ये दो वेदनीय हैं। १४।

वेदनीय

साता	असाता
* सुख रूप अनुभव	* दुःख रूप अनुभव
उपचार से * अनुकूल सामग्री की प्राप्ति	* प्रतिकूल सामग्री की प्राप्ति
चारों गतियों में दोनों का उदय होता है।	

आत्मा का सुख मृण

```

graph TD
    A[विभाव परिणमन] --> B[आकुलता]
    B --> C[इन्द्रिय सुख]
    B --> D[इन्द्रिय दुःख]
    C --> E[अतीन्द्रिय सुख]
    D --> F[अतीन्द्रिय दुःख]

```

दर्शनचारित्रमोहनीयाकषायवेदनीयाख्यान्निद्विनवशोऽशभेदा-
सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ हास्यरत्यरतिशोक-
भयजुगुप्सास्त्रीपुन्पुंसकवेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान-
प्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पाश्चैकशः क्रोधमानमायालोभाः ॥१९॥
सूत्रार्थ-दर्शनमोहनीय, चारित्रमोहनीय, अकषायवेदनीय और कषाय वेदनीय-
इनके क्रम से तीन, दो, नौ और सोलह भेद हैं। सम्यक्त्व, मिथ्यात्व और
तदुभय -ये तीन दर्शनमोहनीय हैं। अकषायवेदनीय और कषायवेदनीय
ये दो चारित्र-मोहनीय हैं। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद,
पुंवेद और नपुंसकवेद- ये नौ अकषायवेदनीय हैं तथा अनंतानुबन्धी,
अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान और संज्वलन- ये प्रत्येक क्रोध, मान, माया,
लोभ के भेद से सोलह कषायवेदनीय हैं॥१९॥

मोहनीय (28)

नोट - सभी में
“जिसके उदय से” शुरू
में लगाएँ

दर्शन मोहनीय (3)	चरित्र मोहनीय (2)
* सम्यकत्व गुण का घात हो	* चारित्र गुण का घात हो
सम्यकत्व मिथ्यात्व सम्यकत्व मिथ्यात्व	अकषाय वेदनीय(9) वेदनीय(16)
* सम्यकत्व का मूल घात न हो पर दोष लगे	* मिश्र परिणाम, तत्त्व अतत्त्व (नोकषाय) दोनों श्रद्धान हो किंचित् कषाय हो

हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा वेद
* हँसी * देशादि में * देशादि में * इष्ट का * उद्गेग (चित्त * अपने दोष आए उत्सुकता उत्सुकता वियोग में घबराहट) छुपाने व दूसरे के हो न हो होने पर हो प्रकट करने एवं दुःख हो ग्लानि का भाव हो

स्त्री	पुरुष	नपुसंक
पुरुष से रमने का भाव इत्यादि	स्त्री से रमने का भाव इत्यादि	स्त्री-पुरुष दोनों से रमने का भाव इत्यादि

अनंतानुबंधी	अप्रत्याख्यानावरण	प्रत्याख्यानावरण	संज्वलन
क्रोध * स्वरूपाचरण/ सम्यकत्वाचरण	मान * देश चारित्र	माया * सकल चारित्र	लोभ * यथाख्यात चारित्र
* अनंत संसार (मिथ्यात्व) के साथ बँधे	* किंचित् त्याग न होने दे	* पूर्ण त्याग न होने दे	* जो संयम के साथ प्रज्वलित रहे

कषायों के उत्कृष्ट-जघन्य स्थान के द्वारा

	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट	अजघन्य	जघन्य
क्रोध	शिला भेद	पृथिवी भेद	धूलि रेखा	जल रेखा
मान	शैल	अस्थि	काष्ठ	बँत
माया	बाँस की जड़	मेढ़े का सींग	गोमूत्र	खुरपा
लोभ	किरमिची रंग	चक्रमल	शरीर का मैल	हल्दी का रंग

* क्रोध, मान, माया व लोभ में से एक समय में एक का ही उदय होता है।

* अंतर्मुद्दर्त में उदय नियम से बदल जाता है।

* बंध चारों का प्रति समय होता है।

नारकतैर्यग्योनमानुषदैवानि॥10॥

सूत्रार्थ - नरकायु, तिर्यचायु, मनुष्यायु और देवायु - ये चार आयु हैं॥10॥

आयु

नरकायु	तिर्यचायु	मनुष्यायु	देवायु
नारकी	तिर्यच	मनुष	देव

के शरीर में रोके रखे

गतिजातिशरीराङ्गोपाङ्गनिर्मणबंधनसंघातसंस्थानसंहननस्पर्शरसगंध-
वर्णनुपूर्व्यागुरुलघूपघातपरघातातपोद्योतोच्छवासविहायोगतयः
प्रत्येकशरीरत्रससुभगसुस्वरशुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्ति -
सेतराणि तीर्थकरत्वं च॥11॥

सूत्रार्थ - गति, जाति, शरीर, अंगोपांग, निर्माण, बन्धन, संघात, संस्थान, संहनन, स्पर्श, रस, गन्ध, वर्ण, आनुपूर्व्य, अगुरुलघु, उपघात, परघात, आतप, उद्योत, उच्छवास और विहायोगति तथा प्रतिपक्षभूत प्रकृतियों के साथ अर्थात् साधारण शरीर और प्रत्येक शरीर, स्थावर और त्रस, दुर्भग और सुभग, दुःस्वर और सुस्वर, अशुभ और शुभ, बादर और सूक्ष्म, अपर्याप्त और पर्याप्ति, अस्थिर और स्थिर, अनादेय और आदेय, अयशःकीर्ति और यशःकीर्ति एवं तीर्थकरत्व - ये व्यालीस नामकर्म के भेद हैं।।11।।

નામ કર્મ

	14 पिण्ड प्रकृति	8 प्रत्येक प्रकृति	10 जोड़े	कुल
अभेद विवक्षा	14	8	20	42
भेद विवक्षा	65	8	20	93

14 Aug 2008

नाम	गति	जाति	शरीर	अंगोपांग	बंधन	संघात	संस्थान	संहनन	स्पर्श	रस गंध	वर्ण	आनुपूर्वी	विहारी गति	
स्वरूप									शरीर में					
जीव भवान्तर से इकट्ठे होने के जाति के लिए जाति हैं	समानता	शरीर की रचना हो	हाथ-पैर आदि अंग	शरीर के परमाणु प्रमाण छिद्र	शरीर की आकृति बने	हड्डियाँ के बंधन में	स्पर्श के बंधन में	स्पर्श हड्डियाँ	में पूर्व (द्रव्य) में	रस गंध हो हो हो	वर्ण शरीर का आकार बना रहे हो	आनुपूर्वी विहारी गति आकाश गमन हो		
भ्रेद	4	5	5	3	5	5	6	6	8	5	2	5	2	
भ्रेदों के नाम	नरक तिर्यच मनुष्य देव	एकेन्द्रिय त्रीन्द्रिय चौड़ीन्द्रिय पंचेन्द्रिय	औदारिक वैक्रियिक आहारक तैजस कार्मण	औदारिक वैक्रियिक आहारक तैजस कार्मण	5	5	5	5	आगे देखें	आगे देखें	आगे देखें	नरकगति तिर्यचगति मनुष्यगति देवगति	प्रस्तुति अप्रशस्त देव, गृहीत करना देव, गृहीत होता	
विशेष														एकेन्द्रिय, त्रीन्द्रिय के नहीं होते

शरीर, बंधन, संघात में अन्तर

दृष्टांत-जैसे दीवार बनाने के लिए

शरीर	बंधन	संघात
ईंट जमाना	ईंट को गारे से जोड़ना	सीमेंट से मजबूत करना

संस्थान

समचतुर्स	न्यग्रोध परिमण्डल	स्वाति	कुञ्जक	वामन	हुण्डक
शरीर ऊपर नीचे व मध्य में सम भाग हो	वट वृक्षवत् नाभि के नीचे के अंग छोटे एवं ऊपर के बड़े हों	सर्प की बाँबीवत् ऊपर के अंग छोटे एवं नीचे के बड़े हों	कुबड़ा शरीर हो	बौना शरीर हो	अनेक विरूप आकार हों

संहनन

वज्रवृषभ नाराच	व्रजनाराच	नाराच	अर्द्धनाराच	कीलक	असंप्राप्ता सूपाटिका
वज्र के हाड़ बेठन व कीलियाँ हो	वज्र के हाड़ व कीली हो	वज्र रहित कीलित हैं	हड्डियों की सन्धि अर्द्ध -कीलित हो	हड्डियाँ परस्पर कीलित हो	जुदे-2 हाड़ नसों से बँधे हों

किस संहनन सहित मरा जीव कहाँ जन्म ले सकता है

संहनन	स्वर्ग में	नरक में	श्रेणी चढ़े तो
6 संहनन	आठवें (8)स्वर्ग तक	पहले तीन (3)	
प्रथम 5	बारहवें (12)स्वर्ग तक	पाँचवें (5) तक	
प्रथम 4	सोलहवें (16)स्वर्ग तक	छठे(6) तक	
प्रथम 3	नवमें ग्रैवेयक तक	"	उपशम श्रेणी
प्रथम 2	नवमें अनुदिश तक	"	"
केवल प्रथम	पांचवे अनुत्तर तक	सातवें (7) तक	क्षपक श्रेणी

किस जीव के कौन-सा संहनन होता है

जीव	संहनन
* दो से चार इन्द्रिय	अंतिम संहनन
* भोगभूमि मनुष्य-तिर्यच	प्रथम संहनन
* कर्मभूमि द्रव्य स्त्रियाँ	अंतिम तीन
* कर्मभूमि मनुष्य व तिर्यच	6 संहनन

8 प्रत्येक प्रकृति

	निर्माण	अगुरुलघु	उपधात	परधात	आतप	उद्योत	उच्छ्वास	तीर्थकर
स्वरूप	अंगोपांग	शरीर भारी व हल्का	अपना ही घात करने वाले अंग हो	दूसरे का घात करने वाले अंग हो	शरीर आभा अभा	शरीर की शीत हो	श्वासो-च्छ्वास हो	अर्हन्त पद के साथ धर्मतीर्थ प्रवर्तन हो
उदय किन्हें होता है	सभी को	सभी को	सभी को विग्रहगति के बाद	सभी को शरीर पर्याप्ति के बाद	पर्याप्त बादर पृथ्वी को (किन्हीं-2को)	पर्याप्त तिर्यचों को	श्वासो-च्छ्वास पर्याप्ति पूरी होने पर	केवली को

आतप, उद्योत, उष्ण नामकर्म

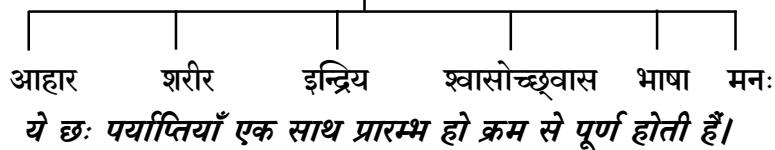
	आतप	उद्योत	उष्ण
आभा	गर्म	ठंडा	गर्म
मूल (शरीर)	ठंडा	ठंडा	गर्म
जैसे	सूर्य का विमान	चन्द्रमा का विमान	अग्निकायिक का शरीर

10 जोड़े

प्रशस्त		अप्रशस्त	
प्रत्येक शरीर	एक शरीर, एक स्वामी	साधारण शरीर	एक शरीर, अनेक स्वामी (इनका उदय निगोदिया जीव को ही होता है)
त्रस	द्वीन्द्रियादि में जन्म हो	स्थावर	एकेन्द्रियों में उत्पत्ति हो
सुभग	दूसरे जीव अपने से प्रीति करें	दुर्भग	दूसरे जीव अपने से प्रीति न करें
सुस्वर	अच्छा स्वर हो	दुस्वर	अच्छा स्वर न हो
शुभ	शरीर के अवयव सुन्दर हों	अशुभ	शरीर के अवयव सुन्दर न हों
बादर	दूसरों को रोके व दूसरों के द्वारा रुके, ऐसा शरीर हो	सूक्ष्म	न किसी को रोके, न रुके ऐसा शरीर हो
पर्याप्ति	अपने-2 योग्य पर्याप्तियाँ पूर्ण हों	अपर्याप्ति	एक भी पर्याप्ति पूर्ण न हो
स्थिर	शरीर की धातु-उपधातु अपने ठिकाने रहे	अस्थिर	शरीर की धातु-उपधातु अपने ठिकाने न रहे
आदेय	प्रभा सहित शरीर उपजे	अनादेय	प्रभा रहित शरीर उपजे
यशः-कीर्ति	संसार में यश हो रहा है ऐसा जीव के द्वारा माना जाना	अयशः-कीर्ति	अपयश हो रहा है, ऐसा जीव के द्वारा माना जाना

पर्याप्ति

(आहारादि वर्गणा के परमाणुओं को शरीरादि रूप परिणमाने की जीव की शक्ति की पूर्णता)



अपर्याप्ति

निर्वृत्ति	लब्धि
* पर्याप्ति नामकर्म का उदय	* अपर्याप्ति नाम कर्म का उदय
* शरीर पर्याप्ति जब तक	* एक भी पर्याप्ति पूर्ण न हो
पूर्ण न हो, पर नियम से पूर्ण होगी	और न होने वाली हो

उच्चैर्नीचैश्च ॥12॥

सूत्रार्थ - उच्चगोत्र और नीचगोत्र - ये दो गोत्रकर्म हैं ॥12॥

गोत्र

उच्च	नीच
* लोक पूजित कुल में जन्म हो	* निन्दित कुल में जन्म हो

दानलाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥13॥

सूत्रार्थ - दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य - इनके पाँच अन्तराय हैं ॥13॥

अंतराय

दानान्तराय	लाभान्तराय	भोगान्तराय	उपभोगान्तराय	वीर्यान्तराय
* देने की इच्छा	* प्राप्ति की	* भोगने की	* उपभोगने की	* शक्ति प्रकट

करता हुआ	इच्छा रखता	इच्छा करता	इच्छा करता	करने की इच्छा
भी नहीं देता	हुआ भी नहीं	हुआ भी नहीं	हुआ भी नहीं	हो, पर शक्ति

प्राप्त करता	भोग सकता	उपभोग सकता	प्रकट न हो	
--------------	----------	------------	------------	--

आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥14॥

सूत्रार्थ - आदि की तीन प्रकृतियाँ अर्थात् ज्ञानावरण, दर्शनावरण और वेदनीय तथा अन्तराय इन चार की उत्कृष्ट स्थिति तीस कोटाकोटि सागरोपम है ॥14॥

सप्ततिर्मोहनीयस्य ॥15॥

सूत्रार्थ - मोहनीय की उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोटाकोटि सागरोपम है ॥15॥

विंशतिर्मगोत्रयोः ॥16॥

सूत्रार्थ - नाम और गोत्र की उत्कृष्ट स्थिति बीस कोटाकोटि सागरोपम है ॥16॥

त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥17॥

सूत्रार्थ - आयु की उत्कृष्ट स्थिति तीनीस सागरोपम है ॥17॥

अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥18॥

सूत्रार्थ - वेदनीय की जघन्य स्थिति बारह मुहूर्त है ॥18॥

नामगोत्रयोरष्टौ ॥19॥

सूत्रार्थ - नाम और गोत्र की जघन्य स्थिति आठ मुहूर्त है ॥19॥

शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥20॥

सूत्रार्थ - बाकी के पाँच कर्मों की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त है ॥20॥

मूल कर्म जघन्य-उत्कृष्ट स्थिति बंध व आबाधा

कर्म	स्थिति बंध		आबाधा	
	उत्कृष्ट (सागर में)	जघन्य	उत्कृष्ट	जघन्य (उदीरणा अपेक्षा)
ज्ञानावरण	30 कोड़ाकोड़ी	अंतर्मुहूर्त	3000 वर्ष	
दर्शनावरण				
अंतराय				
मोहनीय	70 कोड़ाकोड़ी		7000 वर्ष	1 आवली
वेदनीय	30 कोड़ाकोड़ी	12 मुहूर्त	3000 वर्ष	
नाम	20 कोड़ाकोड़ी	8 मुहूर्त	2000 वर्ष	
गोत्र				
आयु	33 मात्र	अंतर्मुहूर्त	1 कोटि पूर्व/3	आवली/ असंख्यात
स्वामी	*संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त मिथ्याहृषि *उत्कृष्ट देवायु को सकल संयमी ही बाँध सकता है।	*आयु बिना शेष 7 क्षपक श्रेणी में *आयु मिथ्याहृषि मनुष्य व तिर्यच		

1. आबाधा - जितने काल तक कर्म फल नहीं देता।
2. आवली = असंख्यात समय
3. एक श्वास में संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी आवलियाँ होती हैं।

शेष जीवों का उत्कृष्ट कर्म स्थिति बंध

	मोहनीय	ज्ञानावरणादि 5	नाम गोत्र	आयु
एकेन्द्रिय	1 सागर	3/7 सागर	2/7 सागर	1 कोटी पूर्व
द्वीन्द्रिय	25 सागर	25X3/7 सागर	25X2/7 सागर	
त्रीन्द्रिय	50 सागर	50X3/7 सागर	50X2/7 सागर	
चौइन्द्रिय	100 सागर	100X3/7 सागर	100X2/7 सागर	
असैनी	1000 सागर	1000X3/7 सागर	1000X2/7 सागर	पत्य/असंख्यात
पंचेन्द्रिय				

उत्तर प्रकृति उत्कृष्ट स्थिति बंध

उत्तर प्रकृति	उत्कृष्ट स्थिति (कोड़ाकोड़ी सागर में)	उत्तर प्रकृति	उत्कृष्ट स्थिति (कोड़ाकोड़ी सागर में)
ज्ञानावरण-5	30	वेदनीय-	
दर्शनावरण-9	30	-असाता	30
अंतराय-5	30	-साता	15
मोहनीय-		आयु -	
-दर्शन मोहनीय	70	देवायु, नरकायु	33 सागर मात्र
(मिथ्यात्व ही बँधती)		मनुष्यायु, तिर्यचायु	3 पत्य
चारित्र मोहनीय			
1. 16 कषाय	40	गोत्र -	
2. अरति, शोक,		-नीच गोत्र	20
भय, जुगुप्ता,	20		
नपुसंक वेद			
3. स्त्री वेद	15	-उच्च गोत्र	10
4. हास्य, रति,			
पुरुष वेद	10		

उत्तर प्रकृति	उत्कृष्ट स्थिति (कोड़ाकोड़ी सागर में)
नाम - - संस्थान और संहनन - हुण्डक संस्थान, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन - आगे-2 एक-2 संस्थान व संहनन की 2 कोड़ाकोड़ी सागर कम-2 होती जाती है	20
- आहारक शरीर, आहारक अंगोपांग, तीर्थकर - देवगति व आनुपूर्वी, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर आदेय, यशःकीर्ति, प्रशस्त विहायोगति	अंतः:
- मनुष्य गति व आनुपूर्वी	10
- द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय व चौड़ीन्द्रिय जाति, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण	15
- शेष 35 प्रकृतियाँ	18
	20

विपाकोऽनुभवः॥२१॥

सूत्रार्थ - विपाक अर्थात् विविध प्रकार के फल देने की शक्ति का पड़ना ही
अनुभव है॥२१॥

स यथानाम॥२२॥

सूत्रार्थ - वह जिस कर्म का जैसा नाम है, उसके अनुरूप होता है॥२२॥

ततश्च निर्जरा॥२३॥

सूत्रार्थ - इसके बाद निर्जरा होती है॥२३॥

अनुभाग बंधा	
*अनुभाग क्या ?	अनुभव-विविध प्रकार की फल देने की शक्ति का पड़ना
*किस रूप	अपने अपने नाम रूप
*फल (उदय)देकर क्या होता है ?	निर्जरा(आत्मा से कर्मपने के संबंध का अभाव)

कैसे परिणामों से कैसा रस (अनुभाग)

* शुभ परिणाम ↑	पुण्य में अधिक ↑ पाप में कम ↓
* अशुभ परिणाम ↑	पुण्य में कम ↓ पाप में अधिक ↑

अनुभाग की प्रकृति

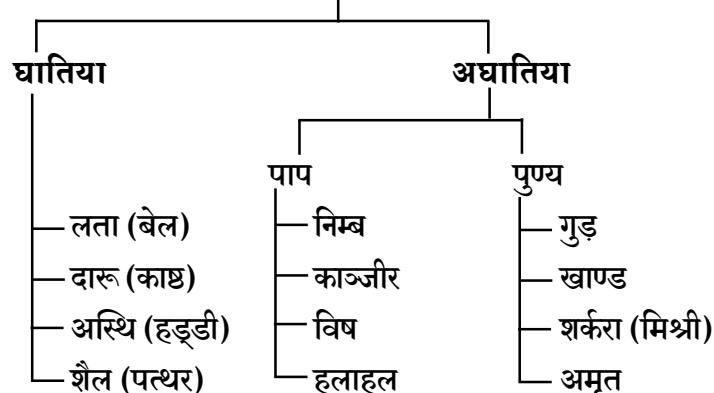
स्वमुख परमुख

* अपने स्वभाव रूप ही उदय में आना * अन्य कर्म रूप हो उदय में आना
* जैसे - असाता साता रूप उदय
में आए

जिनका नियम से स्वमुख से उदय आता है

- * मूल प्रकृतियाँ
- * 4 आयु
- * दर्शन और चारित्र मोहनीय

फल दान शक्ति की तारतम्यता



निर्जरा

सविपाक	अविपाक/सकाम	अकाम
* कर्म का स्थिति पूर्ण होने पर फल देकर खिरना	* स्थिति बिना पूर्ण हुए तपादि द्वारा बीच में ही कर्मों को खिपा देना	* इच्छा बिना भूख-प्यासादि को मंद कषाय से सहना * यहाँ पाप की निर्जरा व पुण्य का बंध होता है

नामप्रत्ययः सर्वतो योगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थितः

सर्वात्मप्रदेशोष्वनन्तानन्तप्रदेशाः॥२४॥

सूत्रार्थ - कर्म प्रकृतियों के कारणभूत प्रति समय योग विशेष से सूक्ष्म, एकक्षेत्रावगाही और स्थित अनन्तानन्त पुद्गल परमाणु सब आत्म-प्रदेशों में (सम्बन्ध को प्राप्त) होते हैं॥२४॥

प्रदेश बंध

* किस रूप?	ज्ञानावरणादि रूप
* कब	संसारी जीवों को सदा (सभी भवों में)
* किस कारण से	योग की न्यूनाधिकता से
* किसमें	सभी आत्मप्रदेशों में (दूध में पानीवत्)
* कैसे स्वभाव वाला	सूक्ष्म एक क्षेत्रावगाही (आत्मा के प्रदेशों पर ही स्थित)
* कितनी स्थिति वाले	1 समय से असंख्यात समय की
* कितना	अनंत परमाणु (जघन्यपने अभव्य राशि से अनंतगुणा व उत्कृष्टपने सिद्ध राशि का अनंतवाँ भाग)

सद्देवशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम्॥२५॥

सूत्रार्थ - साता वेदनीय, शुभ आयु, शुभ नाम और शुभ गोत्र - ये प्रकृतियाँ पुण्यरूप हैं॥२५॥

अतोऽन्यत्पापम्॥२६॥

सूत्रार्थ - इनके सिवा शेष सब प्रकृतियाँ पापरूप हैं॥२६॥

पुण्य-पाप प्रकृति विभाजन

	पुण्य	पाप	कुल
अनुभाग अपेक्षा	68	100	168
स्थिति अपेक्षा	3(3 आयु)	145	148

$$\text{कुल कर्म प्रकृति} - 148 + 20 = 168 \\ (\text{वर्णादि प्रशस्त व अप्रशस्त दोनों होते हैं})$$

पुण्य प्रकृतियाँ (68)

आयु(3)	नाम(63)	गोत्र(1)	वेदनीय(1)
*तिर्यचायु		*उच्च	*साता
*मनुष्यायु			
*देवायु			
शरीर संबंधी	वर्णादि	जोड़े की प्रत्येक	पिण्ड
(20)	(20)	प्रशस्त प्रकृतियाँ	प्रकृति(7)
शरीर(5)	स्पर्श(8)	(10)	प्रकृति(6)
बंधन(5)	रस(5)	उपघात के	गति(2)
संघात(5)	गंध(2)	अलावा शेष	जाति(1)
अंगोपांग(3)	वर्ण(5)		आनुपूर्वी(2)
संस्थान(1)			विहायोगति(1)
संहनन(1)			

पाप प्रकृतियाँ (100)

घातिया(47)	आयु(1)	गोत्र(1)	वेदनीय(1)	नाम(50)
	*नरकायु	*नीच	*असाता	
50				

शरीर	वर्णादि	जोड़े की	प्रत्येक	पिण्ड
संबंधी	(20)	अप्रशस्त	प्रकृति (1)	प्रकृति (9)
(10)		प्रकृतियाँ	*उपघात	
संस्थान(5)	(10)			गति(2)
संहनन(5)				जाति(4)
				आनुपूर्वी(2)
				विहायोगति(1)

घातिया कर्म

सर्वधाति (जो अनुजीवी गुणों (21) को पूरे तौर से घाते)	देशधाति (जो अनुजीवी गुणों (26) को एकदेश घाते)
ज्ञानावरण(1)	दर्शनावरण(6)
* केवलज्ञानावरण	* केवलदर्शनावरण
* 5 निद्राएँ	* मिथ्यात्व
	* मिश्र
	* 12 कषाय
ज्ञानावरण(4)	दर्शनावरण(3)
* केवलज्ञाना- वरण के	* चक्षुदर्शनावरण
अलावा	* अचक्षुदर्शनावरण
शेष चार	* 4 संज्वलन कषाय
	* अवधिदर्शनावरण
	* 9 नोकषाय



विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
संवर का लक्षण व कारण	1-2	2	184,186-188
निर्जरा का कारण	3	1	187-188
संवर प्रकरण			
गुणि, समिति, धर्म, अनुप्रेक्षा	4-7	4	189-191
परीषहजय	8-17	10	192-195
चारित्र	18	1	195-196
निर्जरा प्रकरण			
बाह्य तप के नाम	19	1	197-198
आभ्यन्तर तप के नाम व भेद	20-21	2	199
प्रायश्चित्त, विनय, वैयाकृत्य, स्वाध्याय, व्युत्पर्ग के भेद	22-26	5	200-202
ध्यान	27-44	18	202-208
-ध्याता, ध्यान, ध्यान का काल	27		202
- ध्यान के भेद व फल	28-29		203
- आर्त ध्यान	30-34		204-205
- रौद्र ध्यान	35		204-205
- धर्म्य ध्यान	36		206
- शुक्ल ध्यान	37-44		206-208
निर्जरा विशेषता	45	1	209
निर्ग्रन्थ के भेद व विशेषता	46-47	2	210-212
	कुल	47	

आस्रवनिरोधः संवरः||1||
सूत्रार्थ - आस्रव का निरोध संवर है||1||

संवर (आस्रव का रुकना)

द्रव्य भाव

कर्मों का आना रुकना संसार के निमित्तभूत परिणामों की निवृत्ति

संवर दूसरे गुणस्थान से प्रारम्भ होकर आगे-आगे बढ़ता जाता है।
इसलिए यहाँ 'गुणस्थान' का स्वरूप दिया जा रहा है :-

गुणस्थान

(मोह और योग के निमित्त से होने वाली जीव की अवस्था विशेष)

गुणस्थान का नाम	स्वरूप
1. मिथ्यादृष्टि	जिसके मिथ्यादर्शन पाया जाता है।
2. सासादन सम्बन्धित	सम्यक्त्व से च्युत होकर भी मिथ्यात्व को प्राप्त नहीं हुआ। इष्टि अनुभय रूप है।
3. सम्यग्मिथ्यादृष्टि	जिसकी दृष्टि सम्यक्त्व व मिथ्यात्व उभयरूप है।
4. अविरत सम्यग्दृष्टि	सम्यग्दृष्टि होकर जो अविरति है।
5. देशविरत (ब्रती श्रावक)	स्थावर हिंसा से विरत न होकर भी त्रस हिंसा से विरत है।
6. प्रमत्तसंयंत (मुनि)	प्रमाद सहित संयमभाव पाया जाता है।
7. अप्रमत्तसंयंत	प्रमाद रहित संयमभाव पाया जाता है।
8. अपूर्वकरण	जहाँ पहले नहीं प्राप्त हुए, ऐसे परिणाम (करण) प्राप्त होते हैं।
9. अनिवृत्तिकरण	जहाँ एक समय वालों के परिणामों में भेद नहीं होता है।
10. सूक्ष्म लोभ	जहाँ सिर्फ लोभ कषाय अत्यंत सूक्ष्म रह जाती है।
11. उपशांत मोह	जहाँ सम्पूर्ण मोह दब जाता है।
12. क्षीणमोह	जहाँ सम्पूर्ण मोह का क्षय हो जाता है।
13. सयोग केवली (अरहंत)	जहाँ केवलज्ञान के साथ योग पाया जाता है।
14. अयोग केवली	जहाँ केवलज्ञान के साथ योग का अभाव है।
गुणस्थानातीत (सिद्ध)	जहाँ द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म तीनों का अभाव है।

किन आस्त्र के कारणों के अभाव में किन प्रकृतियों का संवर होता है ?

कारण	किस गुण-स्थान से संवर होता है	कितनी प्रकृतियाँ	कौन-सी प्रकृतियाँ
1. मिथ्यात्व	2 आयु = 1 नामकर्म = 13 <hr/> कुल = 16	मोहनीय = 2 नरकायु	मिथ्यात्व, नपुंसक वेद नरकायु नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, एकेन्द्रियादि 4 जाति, हुण्डक संस्थान, असम्माप्तासृपाटिका संहनन, सूक्ष्म, साधारण, स्थावर, आतप, अपर्याप्त
2. अविरति - अनंतानुबंधी सम्बन्धी	3 दर्शनावरण = 3 आयु = 1 गोत्र = 1 नाम = 15 <hr/> कुल = 25	मोहनीय = 5 3 बड़ी निद्रा, तिर्यचायु नीच गोत्र	अनंतानुबंधी 4 कषाय, स्त्रीवेद, तिर्यचगत्यानुपूर्वी, मध्य के 4 संस्थान एवं 4 संहनन दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अप्रशस्त विहायोगति, उद्योत
-अप्रत्या - ख्यानावरण संबंधी	5 आयु = 1 नाम = 5 <hr/> कुल = 10	मोहनीय = 4 मनुष्यायु मनुष्य गति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, औदारिक शरीर एवं अंगोपांग, वज्रवृषभनाराच संहनन	अप्रत्याख्यानावरण 4 कषाय

-प्रत्याख्याना वरण संबंधी	6	4	प्रत्याख्यानावरण 4 कषाय
3. प्रमाद	7	मोहनीय = 2 वेदनीय = 1 नाम = 3 <hr/> कुल = 6	अरति, शोक असाता वेदनीय अस्थिर, अशुभ, अयशःकीर्ति
	8	आयु = 1	देवायु(प्रमाद के नजदीक का अप्रमाद भी बंध का कारण है)
4. कषाय (प्रमाद रहित) -तीव्र	9	मोहनीय = 4 दर्शनावरण=2 नाम = 30 <hr/> कुल = 36	हास्य, रति, भय, जुगुप्ता निद्रा, प्रचला देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, पंचेन्द्रिय जाति, 4 शरीर, 2अंगोपांग, समचतुरस संस्थान, वर्णादि 4, जोड़ों की 9 प्रशस्त प्रकृति, 6 प्रत्येक प्रकृति, प्रशस्त विहायोगति
-मध्यम	10	मोहनीय = 5	संज्वलन 4 कषाय, पुरुषवेद
-जघन्य	11	16	ज्ञानावरण 5, अंतराय 5, दर्शनावरण 4, उच्च गोत्र, यशःकीर्ति
5. योग	14	1	साता वेदनीय

स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीष्हजयचारित्रैः॥१॥

सूत्रार्थ - वह संवर गुप्ति, समिति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीष्हजय और चारित्र
से होता है॥१॥

तपसा निर्जरा च॥३॥

सूत्रार्थ - तप से निर्जरा होती है और संवर भी होता है॥३॥

संवर के कारण						
निश्चय से			व्यवहार से			
गुप्ति	समिति	धर्म	अनुप्रेक्षा	परीष्हजय	चारित्र	तप
स्वरूप (संसार के कारणों से आत्मा की रक्षा करना)	निवृत्ति (संसार प्रवृत्ति	यत्नाचार रूप में धरे	उत्तम स्थान के स्वभाव का बार- बार चिंतन	शरीरादिक के संक्लेशता रहित सहना	क्षुधादि वेदना को संक्लेशता रहित सहना	संसार परिप्रमण की कारण रुकना रूप क्रिया का अभाव
भेद	3	5	10	12	22	5
						12

निर्जरा

द्रव्य	भाव
बँधे कर्मों का एकदेश	जीव के परिणाम
खिरना (नाश होना)	जिनसे कर्म खिरते हैं

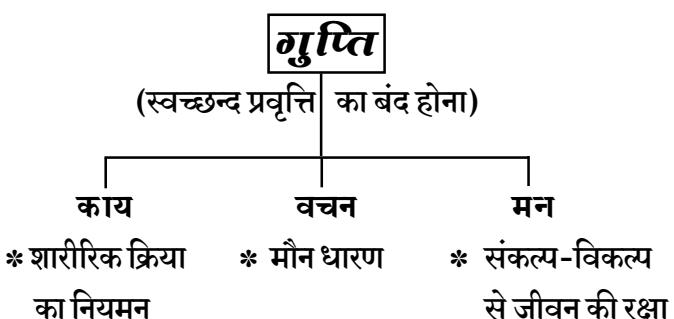
निर्जरा का कारण

शुद्ध आत्मस्वरूप में प्रतपन अर्थात् विजय करना

संतर प्रकरण

सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ॥४॥

सूत्रार्थ - योगों का सम्यक् प्रकार से निग्रह करना गुप्ति है ॥४॥



ईर्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गः समितयः ॥५॥

सूत्रार्थ - ईर्या, भाषा, एषणा, आदाननिक्षेप और उत्सर्ग - ये पाँच समितियाँ हैं ॥५॥

समिति				
ईर्या	भाषा	एषणा	आदान-निक्षेपण	उत्सर्ग
4 हाथ आगे की जमीन देखकर चलना	हित-मित प्रिय वचन बोलना	दिन में 1 बार निर्दोष आहार लेना	उपकरणों को देख-भाल कर लेना व रखना	जन्तुरहित स्थान पर मल-मूत्र आदि का त्याग करना

उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्याणि धर्मः ॥६॥

सूत्रार्थ - उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव, उत्तम शौच, उत्तम सत्य, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आकिञ्चन्य, उत्तम ब्रह्मचर्य - यह दस प्रकार का धर्म है ॥६॥

धर्म	
नाम	स्वरूप
1. उत्तम क्षमा	क्रोध
2. उत्तम मार्दव	मान
3. उत्तम आर्जव	माया
4. उत्तम शौच	लोभ
5. उत्तम सत्य	सज्जन पुरुषों के साथ साधु वचन बोलना
6. उत्तम संयम	प्राणियों की हिंसा व इन्द्रिय विषयों का परिहार
7. उत्तम तप	कर्मक्षय के लिए जो तपा जाता है
8. उत्तम त्याग	संयत के योग्य ज्ञानादि का दान
9. उत्तम आकिञ्चन्य	शरीरादि में ममकार का त्याग
10. उत्तम ब्रह्मचर्य	मन, वचन, काय से समस्त स्त्रियों का त्याग

अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्वसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्म
स्वाख्यातत्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षा: ॥७॥

सूत्रार्थ - अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्व, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ और धर्मस्वाख्यातत्व का बार-बार चिन्तन करना अनुप्रेक्षाएँ हैं ॥७॥

अनुप्रेक्षा (भावना) - बासम्बार चिंतन करना

वैराग्य प्रेरक 6 भावनाएँ

नाम	संयोगों संबन्धी चिंतन	आत्मा संबन्धी चिन्तन
1. अनित्य	क्षणभंगुरता	नित्यता- स्थायीपना
2. अशरण	अशरणता	शरणभूतत्व
3. संसार	निरर्थकता	सार्थकता
4. एकत्व	निःसंगता	संगता
5. अन्यत्व	पृथक्ता	एकता
6. अशुचि	अपवित्रता	पवित्रता

तत्त्व प्रधान 6 भावनाएँ

नाम	किनका चिंतन?
7. आस्व	विकारी संयोगी भावों का
8. संवर	संवर के गुणों का
9. निर्जरा	निर्जरा के गुणों का
10. लोक	लोक के स्वभाव का
11. बोधिदुर्लभ	रत्नत्रय की दुर्लभता का
12. धर्म	मोक्ष प्राप्ति के उपाय का

मार्गच्यवननिर्जरार्थं परिषोदव्याः परीषहाः ॥८॥

सूत्रार्थ - मार्ग से च्युत न होने के लिए और कर्मों की निर्जरा करने के लिए जो सहन करने योग्य हों, वे परीषह हैं ॥८॥

क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशश्याक्रोशवध-याचनालाभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥९॥

सूत्रार्थ - क्षुधा, तृष्णा, शीत, उष्ण, दंशमशक, नग्नता, अरति, स्त्री, चर्या, निषद्या, शश्या, आक्रोश, वध, याचना, अलाभ, रोग, तृणस्पर्श, मल, सत्कार पुरस्कार, प्रज्ञा, अज्ञान और अदर्शन - इन नामवाले परीषह हैं ॥९॥

परीषह क्यों सहना

मार्ग (रत्नत्रय-संवर)
से च्युत न हो

निर्जरा के लिए

22 परीषह

परीषह	स्वरूप	परीषह	स्वरूप
1. क्षुधा	भूख	12. आक्रोश	कठोर वचन
2. तृष्णा	प्यास	13. वध	मारना
3. शीत	ठण्ड	14. याचना	माँगना
4. उष्ण	गर्मी	15. अलाभ	आहारादि की अप्राप्ति
5. दंशमशक	मच्छरादि का काटना (चेतन)	16. रोग	व्याधियाँ
6. नग्नता	बालकवत् जन्मजात रूप	17. तृणस्पर्श	काँटे, कंकर आदि का स्पर्श (अचेतन)
7. अरति	अच्छान लगना	18. मल	शरीर पर एकत्रित मल
8. स्त्री	सभी प्रकार की स्त्री	19. सत्कार	पूजा-प्रशंसा
9. चर्या	गमन	20. प्रज्ञा	पाण्डित्य का गर्व
10. निषद्या	बैठना	21. अज्ञान	ज्ञान का कम होना
11. शश्या	सोना	22. अदर्शन	मुनि मार्ग से आस्था चलित होना

सूक्ष्मसाम्परायछद्वस्थवीतरागयोश्चतुर्दश॥10॥

सूत्रार्थ - सूक्ष्मसाम्पराय और छद्वस्थवीतराग के चौदह परीषह सम्भव हैं।।10।।

एकादश जिने॥11॥

सूत्रार्थ - जिन में ज्यारह परीषह सम्भव हैं।।11।।

बादरसांपराये सर्वे॥12॥

सूत्रार्थ - बादरसाम्पराय में सब परीषह सम्भव हैं।।12।।

कहाँ कौन-सा परीषह सम्भव है

कहाँ	गुणस्थान क्रमांक	कौन-सा परीषह	कुल कितने	संबंधित कर्म
बादर कषाय	छठे से नवाँ	सब	22	सभी 4
सूक्ष्म कषाय व वीतराग	दसवाँ व ज्यारवें-	क्षुधा, तृष्णा, शीत, उष्ण दंशमशक, चर्या, शय्या वध, अलाभ, रोग, तृण-स्पर्श, मल, प्रज्ञा, अज्ञान	14	ज्ञानावरण-2 अंतराय-1 वेदनीय-11
छद्वस्थ	बारहवें			
केवली जिन	तेरहवें	ऊपर की 14 में से प्रज्ञा अज्ञान, अलाभ नहीं	11	वेदनीय

ज्ञानावरणे प्रज्ञाज्ञाने॥13॥

सूत्रार्थ - ज्ञानावरण के सद्वाव में प्रज्ञा और अज्ञान परीषह होते हैं।।13।।

दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालाभौ॥14॥

सूत्रार्थ - दर्शनमोह और अन्तराय के सद्वाव में क्रम से अदर्शन और अलाभ परीषह होते हैं।।14।।

चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाच्चनासत्कार-

पुरस्काराः॥15॥

सूत्रार्थ - चारित्रमोह के सद्वाव में नाग्न्य, अरति, स्त्री, निषद्या, आक्रोश, याचना और सत्कार-पुरस्कार परीषह होते हैं।।15।।

वेदनीये शेषाः॥16॥

सूत्रार्थ - बाकी के सब परीषह वेदनीय के सद्वाव में होते हैं।।16।।

किस कर्म के उदय से कौन-सा परीषह होता है

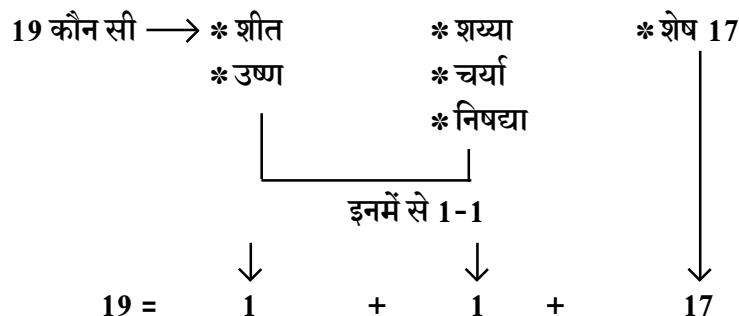


एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नैकोनविंशते: ||17||

सूत्रार्थ - एक साथ एक आत्मा में एक से लेकर उनीस तक परीषह विकल्प से हो सकते हैं। ||17||

एक साथ एक जीव को कितने परीषह सम्भव हैं

1 से लेकर 19



सामायिक छ्ठे दोपस्थापना परिहार विशुद्धि सूक्ष्म साम्पराय -
यथाख्यात मिति चारित्रम् ॥18॥

सूत्रार्थ - सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहार विशुद्धि, सूक्ष्म साम्पराय और
यथाख्यात - यह पाँच प्रकार का चारित्र है। ||18||

चारित्र

- | | |
|---------------------|-----------------------|
| 1. ब्रतों का धारण | 2. समितियों का पालन |
| 3. कषायों का निग्रह | 4. दण्डों का त्याग |
| | 5. इन्द्रियों की विजय |

नाम	सामायिक	छेदोप-स्थापना	परिहार विशुद्धि	सूक्ष्म साम्पराय	यथाख्यात
स्वरूप	समस्त सावद्य (हिंसा सहित) योग का एक साथ त्याग	*दोषों को दूर कर पुनः ब्रतों का ग्रहण करना *समस्त सावद्य योग का भेद रूप से त्याग	प्राणी हिंसा से पूर्ण निवृत्ति से प्राप्त विशुद्धि	जहाँ कषाय अति सूक्ष्म हो	मोहनीय के सम्पूर्ण क्षय अथवा उपशम से-आत्मा का जैसा स्वभाव है, वैसा होना
गुण-स्थान	6-9	6-9	6-7	10	11-14

परिहार विशुद्धि चारित्र

निम सभी विशेषताओं से युक्त जीव के ही परिहार विशुद्धि चारित्र हो सकता है:-

- * 30 वर्ष तक सुखी रहने के बाद
- * दीक्षा लेकर
- * 8 वर्ष तीर्थकर के पाद मूल में रहकर
- * नवमें प्रत्याख्यान नामक पूर्व का अध्ययन करने वाला जीव।

इस चारित्र के धारक जीव

नियम से

- * 2 कोस प्रतिदिन विहार करते हैं।

परंतु

- * 3 संध्या काल में विहार नहीं करते
- * वर्षा काल में विहार का निषेध नहीं है।

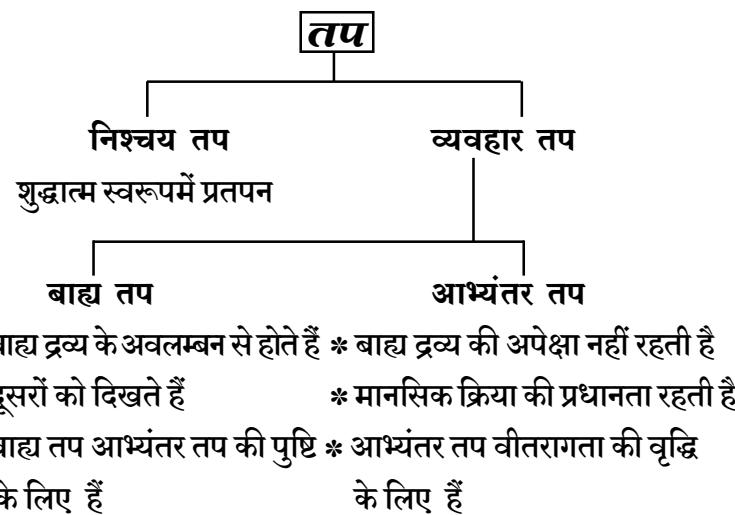
सामायिकों में अन्तर

सामायिक	गुणस्थान	स्वरूप
1. सामायिक शिक्षा ब्रत	दूसरी प्रतिमा, पंचम गुणस्थान	अभ्यास रूप
2. सामायिक प्रतिमा	तीसरी प्रतिमा, पंचम गुणस्थान	ब्रतरूप
3. सामायिक आवश्यक	छठा-सातवाँ गुणस्थान	नियमरूप
4. सामायिक चारित्र	छठे से नौवाँ गुणस्थान	यमरूप

निर्जरा प्रकरण

अनशनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासन-
कायकलेशा बाह्यं तपः||19||

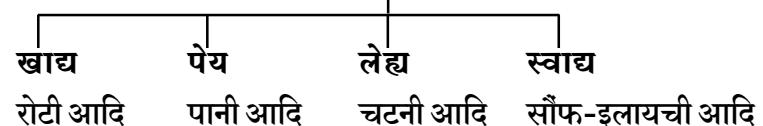
सूत्रार्थ - अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशस्यासन और कायकलेश - यह छह प्रकार का बाह्य तप है॥19॥



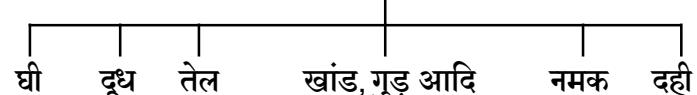
ବାହ୍ୟ ତପ

नाम	अनशन	अवमौदर्य / ऊनोदर	बृत्तिपरि- संख्यान	रस परित्याग	विविक्त शय्यासन	कायकलेश
स्व-रूप	4 प्रकार के आहार, विषय व कषाय आहार का त्याग	दिन में एक बार भूख से कम आहार करना	अनेक प्रकार की अटपटी प्रतिज्ञाओं की पूर्ति पर भोजन करना	1,2 आदि एकांत 6 रसों तकस्थान में का त्याग करना	एकांत सोना-बैठना	अनेकप्रकार के काय के कष्ट रूप तप करना
क्यों किया जाता है ?	-संयम की सिद्धि -राग का नाश -ध्यान, आगम की प्राप्ति के लिये	-संयम की जागृति -संतोष एवं स्वाध्याय की सिद्धि के लिए	-आशा की निवृत्ति -परम संतोष की सिद्धि के लिए	-इन्द्रियों पर विजय -निद्रा पर विजय	-बाधारहित ब्रह्मचर्य, स्वाध्याय, ध्यान की प्रसिद्धि के लिए	-सुख विषयक आसक्ति कम करने के लिये -प्रवचन प्रभावना के लिए

4 प्रकार का आहार



6 प्रकार के रस



प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्त्यस्वाध्यायव्युत्सर्गध्यानान्युत्तरम्॥20॥

सूत्रार्थ - प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान - यह छह प्रकार का आभ्यन्तर तप है॥20॥

नवचतुर्दशपञ्चद्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात्॥21॥

सूत्रार्थ - ध्यान से पूर्व के आभ्यन्तर तर्पों के अनुक्रम से नौ, चार, दश, पाँच और दो भेद हैं॥21॥

आग्यांतर तप

नाम	प्रायश्चित्त	विनय	वैयावृत्त्य	स्वाध्याय	व्युत्सर्ग	ध्यान
स्व- रूप	प्रमाद से लगे दोषों को दूर करना	-ज्ञानादि का बहुमान -पूज्य पुरुषों का आदर	अन्य मुनियों की संयम -पूज्य पुरुषों का आदर	ज्ञान की आराधना करना	अहंकार- ममकार का त्याग	चित्त की चंचलता का त्याग
भेद	9	4	10	5	2	4
लाभ	-दोषों का शोधन -मर्यादा में रहना -भावों में उज्ज्वलता	-ज्ञान की प्राप्ति -आचार की विशुद्धता -सम्यक् आराधना की सिद्धि	-समाधि की प्राप्ति -ज्ञानि का अभाव -प्रवचन में वात्सल्य	-बुद्धि में अतिशय प्रकट होना -संशय दूर होना -अतिचारों में विशुद्धि -संसारादि से विरक्तता	-निःसंगता -निर्भयता -जीवित रहने की आशा का अभाव	कर्मों का क्षय

**आलोचनप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपच्छेदपरिहारो-
पस्थापनाः॥22॥**

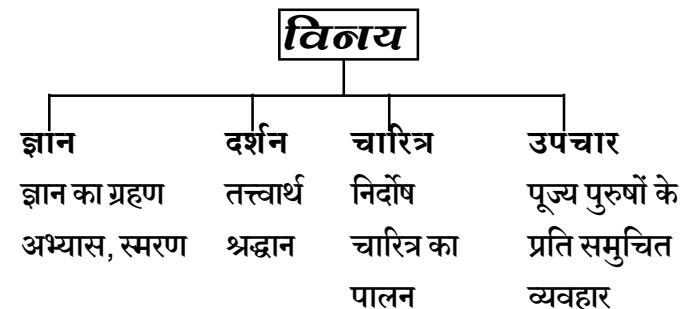
सूत्रार्थ - आलोचना, प्रतिक्रमण, तदुभय, विवेक, व्युत्सर्ग, तप, छेद, परिहार और उपस्थापना - यह नव प्रकार का प्रायश्चित्त है॥22॥

प्रायश्चित्त

प्रायश्चित्त	स्वरूप
1. आलोचना	गुरु के समक्ष अपने दोषों का निवेदन करना
2. प्रतिक्रमण	'मेरे दोष मिथ्या हैं' ऐसे भावों को वचनों से प्रकट करना
3. तदुभय	आलोचना व प्रतिक्रमण दोनों साथ में करना
4. विवेक	सदोष अन्न, पात्र, उपकरणादि मिलने पर उनका त्याग
5. व्युत्सर्ग	नियमित काल के लिए कायोत्सर्ग करना
6. तप	अनशनादि
7. छेद	कुछ समय की दीक्षा का छेद करना
8. परिहार	कुछ समय के लिए संघ से दूर करना
9. उपस्थापन	पूर्ण दीक्षा छेद कर पुनः दीक्षा प्राप्त करना

ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः॥23॥

सूत्रार्थ - ज्ञानविनय, दर्शनविनय, चारित्रविनय और उपचारविनय - ये चार प्रकार की विनय हैं॥23॥



आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्षग्लानगणकुलसंघसाधुमनोज्ञानाम्॥२४॥
सूत्रार्थ - आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु और मनोज्ञ - इनकी वैयाकृत्य के भेद से वैयाकृत्य दश प्रकार का है॥२४॥

वैयाकृत्य के विषय

(इन 10 प्रकार के मुनियों की सेवा)

आचार्य	उपाध्याय	तपस्वी	शैक्ष	ग्लान
ब्रतों का	श्रुत का	महान	शिक्षा	रोगी
आचरण	अध्ययन	उपवासादि	शील	मुनि
करायें	करें-करायें	करें		
गण	कुल	संघ	साधु	मनोज्ञ
वृद्ध मुनियों	दीक्षकाचार्य	4 वर्ण के	बहुत काल	लोक सम्मत
का समुदाय	का शिष्य	मुनियों का	के दीक्षित	साधु
	समुदाय		समूह	

4 प्रकार का संघ

ऋषि	मुनि	यति	अनगार
ऋद्धि प्राप्त	अवधिज्ञानी	उपशम व	शेष सभी
	मनःपर्ययज्ञानी	क्षपक श्रेणी वाले	मुनि
राजर्षि	ब्रह्मर्षि	देवर्षि	परमर्षि

प्राप्त	* विक्रिया	* बुद्धि	चारण	केवलज्ञान
ऋद्धियों	* अक्षीण	* सर्वोषधि		
के नाम	महानस	आदि		

वाचनापृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशः॥२५॥

सूत्रार्थ - वाचना, पृच्छना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय और धर्मोपदेश - यह पाँच प्रकार का स्वाध्याय है॥२५॥

स्वाध्याय

वाचना	पृच्छना	अनुप्रेक्षा	आम्नाय	धर्मोपदेश
पढ़ना	पूछना	चिंतन	पुनः-पुनः दोहराना	उपदेश देना

बाह्याभ्यन्तरोपध्योः॥२६॥

सूत्रार्थ - बाह्य और अभ्यन्तर उपधि का त्याग - यह दो प्रकार का व्युत्सर्ग है॥२६॥

व्युत्सर्ग

बाह्य	अभ्यन्तर
* आत्मा से भिन्न	* क्रोधादिरूप आत्मभाव का त्याग
मकान, पुत्रादि का त्याग	* शरीर के ममत्व का त्याग

उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात्॥२७॥

सूत्रार्थ - उत्तम संहननवाले का एक विषय में चिन्तवृत्ति का रोकना ध्यान है, जो अन्तर्मुहूर्त काल तक होता है॥२७॥

ध्यान

(एक विषय में चिन्त का रुकना)

* ध्याता	ध्यान करने वाला - उत्तम संहनन सहित(शुरू के तीन संहनन)
* ध्येय	जिसका ध्यान किया जाए - एक अग्र (प्रधान विषय)
* ध्यान	ज्ञान में व्यग्रता का अभाव
* ध्यान	अंतर्मुहूर्त का काल

अंतर्मुहूर्त

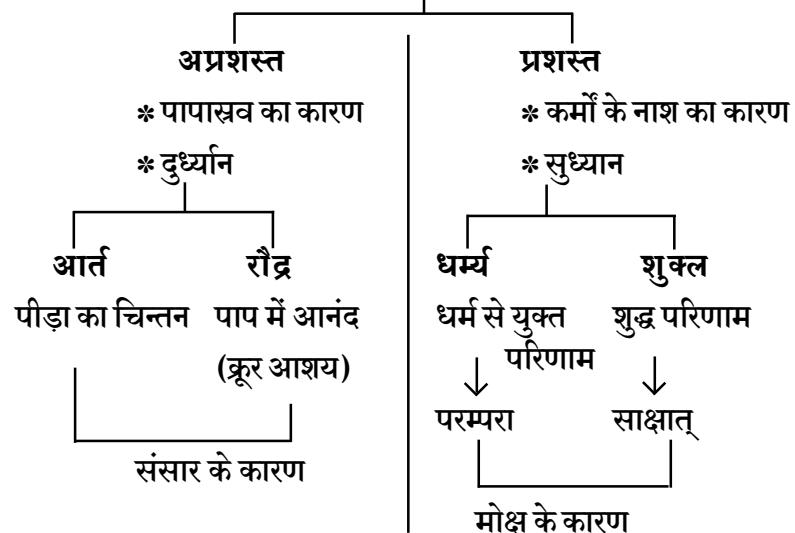
जघन्य	उत्कृष्ट
1 आवलि 1 समय	48 मिनिट में 1 समय कम
इनके बीच में असंख्यात मध्यम भेद हैं।	

आर्तरौद्रधर्मशुक्लानि॥28॥

सूत्रार्थ - आर्त, रौद्र, धर्म और शुक्ल - ये ध्यान के चार भेद हैं॥28॥
परे मोक्षहेतु॥29॥

सूत्रार्थ - उनमें से पर अर्थात् अन्त के दो ध्यान मोक्ष के हेतु हैं॥29॥

द्यान



आर्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृतिसमन्वाहारः॥30॥
सूत्रार्थ - अमनोज्ञ पदार्थ के प्राप्त होने पर उसके वियोग के लिए चिन्तासातत्य (सतत चिन्ता) का होना प्रथम आर्तध्यान है॥30॥

विपरीतं मनोज्ञस्य॥31॥

सूत्रार्थ - मनोज्ञ वस्तु के वियोग होने पर उसकी प्राप्ति की सतत चिन्ता करना दूसरा आर्तध्यान है॥31॥

वेदनायाश्च॥32॥

सूत्रार्थ - वेदना के होने पर उसे दूर करने के लिए सतत चिन्ता करना तीसरा आर्तध्यान है॥32॥

निदानं च॥33॥

सूत्रार्थ - निदान नाम का चौथा आर्तध्यान है॥33॥

तदविरतदेशविरतप्रमत्तसंयतानाम्॥34॥

सूत्रार्थ - यह आर्तध्यान अविरत, देशविरत और प्रमत्तसंयत जीवों के होता है॥34॥

हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरतदेशविरतयोः॥35॥

सूत्रार्थ - हिंसा, असत्य, चोरी और विषय संरक्षण के लिए सतत चिन्तन करना रौद्रध्यान है। वह अविरत और देशविरत के होता है॥35॥

आर्त - रौद्र ध्यान

नाम	आर्तध्याय	रौद्र ध्यान
स्वरूप	दुःख चिंतन	पाप में आनंद
फल	तिर्यच गति	नरक गति
गुणस्थान	1-6 (छठे में निदान नहीं)	1-5
भेद	निरंतर चिंता करना — अनिष्ट संयोगज * अप्रिय संयोग को दूर करने की — इष्ट वियोगज * प्रिय के वियोग में उसकी प्राप्ति की — वेदना * रोग दूर करने की — निदान * आगामी भोगों की प्राप्ति की	आनंद मानना — हिंसानंदी * हिंसा में — मृषानंदी * झूठ में — चौरानंदी * चोरी में परिग्रहानंदी/ विषयानंदी * पाँच इन्द्रिय के भोगों में

निदान

निदान शब्द	निदान आर्तध्याय
* निरंतर सताती है	* कभी-कभी होता है
* कषाय की तीव्रता	* कषाय कम-तीव्र
* अव्रती	* अव्रती व देशव्रती

आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय धर्म्यम्॥३६॥

सूत्रार्थ - आज्ञा, अपाय, विपाक और संस्थान - इनकी विचारणा के निमित्त मन को एकाग्र करना धर्म्यध्यान है॥३६॥

धर्म्य ध्यान

नाम	आज्ञाविचय	अपायविचय	विपाकविचय	संस्थानविचय
स्वरूप	जिनेन्द्रदेव की आज्ञा प्रमाण	ये प्राणी मिथ्यादर्शनादि से कैसे दूर होंगे, ऐसा	कर्म के फल का	लोक के आकार का
गुणस्थान	← निरंतर चिंतन करना →			
	← यथायोग्य 4 से 7 →			
	मिथ्याहृषि के धर्म भावना होती है, धर्म्य ध्यान नहीं			

शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः॥३७॥

सूत्रार्थ - आदि के दो शुक्ल ध्यान पूर्वविद् के होते हैं॥३७॥

परे केवलिनः॥३८॥

सूत्रार्थ - शेष के दो शुक्लध्यान केवली के होते हैं॥३८॥

पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिव्युपरतक्रियानिवर्तीनि॥३९॥

सूत्रार्थ - पृथक्त्ववितर्क, एकत्ववितर्क, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति और व्युपरत-क्रियानिवर्ति - ये चार शुक्लध्यान हैं॥३९॥

त्र्येकयोगकाययोगायोगानाम्॥४०॥

सूत्रार्थ - वे चार ध्यान क्रम से तीन योग वाले, एक योग वाले, काय योग वाले और अयोग के होते हैं॥४०॥

एकाश्रये सवितर्कवीचारे पूर्वे॥४१॥

सूत्रार्थ - पहले के दो ध्यान एक आश्रय वाले, सवितर्क और सवीचार होते हैं॥४१॥

अवीचारं द्वितीयम्॥४२॥

सूत्रार्थ - दूसरा ध्यान अवीचार है॥४२॥

वितर्कः श्रुतम्॥४३॥

सूत्रार्थ - वितर्क का अर्थ श्रुत है॥४३॥

वीचारोऽर्थव्यंजनयोगसंक्रान्तिः॥४४॥

सूत्रार्थ - अर्थ, व्यञ्जन और योग की संक्रान्ति वीचार है॥४४॥

वितर्क	= श्रुत	= विशेष रूप से तर्कणा या विचार करना
वीचार	= संक्रान्ति	= परिवर्तन (पलटना) किसका
अर्थ	व्यञ्जन	योग
द्रव्य और पर्याय	वचन या शब्द	मन, वचन या काय की क्रिया

शुक्लद्यान

नाम	पृथक्त्व वितर्क वीचार	एकत्व वितर्क अवीचार	सूक्ष्मक्रिया प्रतिपाती	व्युपरत क्रियानिवृत्ति
स्वरूप	पृथक्त्व = भिन्न- भिन्न में वितर्क = भावश्रुत ज्ञान के बल से वीचार = परिवर्तन सहित	एकत्व = एक में (द्रव्य या पर्याय) वितर्क = भावश्रुत ज्ञान के बल से वीचार = परिवर्तन रहित	सूक्ष्म क्रिया = सूक्ष्म काय योग में स्थित अप्रतिपाती = जिससे गिरना न हो	व्युपरत क्रिया = समस्त योग से निवृत्ति अनिवृत्ति = संसार से अभी निवृत्ति नहीं
गुणस्थान	8-11	12	13 के अंत में	14
स्वामी	श्रुत केवली	श्रुत केवली	केवली	केवली
योग कौन सा	तीन योग	कोई एक योग	काय योग	योग नहीं
फल	मोहनीय का उपशम व क्षय	शेष 3 घातिया कर्मों का क्षय	योग का अभाव	4 अघातिया कर्मों का क्षय अर्थात् मोक्ष
संहनन	उत्तम 3 संहनन	वज्रवृषभ नाराच	वज्रवृषभ नाराच	वज्रवृषभ नाराच
दृष्टांत	दीपक की लौ	मणि का प्रकाश	सूर्य का प्रकाश	

सम्यग्विरुद्धश्रावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्त-
मोहक्षपकक्षीणमोहजिना: क्रमशोऽसंख्येयगुणनिर्जरा:॥45॥

सूत्रार्थ - सम्यग्विरुद्धश्रावक, विरत, अनन्तानुबन्धवियोजक, दर्शनमोहक्षपक, उपशमक, उपशान्तमोह, क्षपक, क्षीणमोह और जिन - ये क्रम से असंख्यगुण निर्जरा वाले होते हैं॥45॥

गुणश्रेणी निर्जरा में विशेषता के 10 स्थान (एक ही जीव की अपेक्षा)

स्थान	स्वरूप	स्वामी (गुणस्थान अपेक्षा)	निर्जरा
सातिशय मिथ्याहृषि	प्रथमोपशम सम्यक्त्व के पहले करण लब्धि में	1	आगे-2 के स्थान में असंख्यात गुणी निर्जरा होती है।
1. सम्यग्विरुद्ध	अब्रती श्रावक	4	
2. श्रावक	ब्रती श्रावक	5	
3. विरत	मुनि	7	
4. अनंतानुबन्धी	अनंतानुबन्धी को अप्रत्याख्यानावरण वियोजक	4-7	
5. दर्शनमोह क्षपक	दर्शनमोह का क्षय करने वाला	4-7	सामान्य से सबका अंतर्मुहूर्त काल होने पर भी आगे-2 संख्यात गुणहीन काल है।
6. उपशामक	चारित्र मोह दबाने वाला	उपशमश्रेणी 8-10	
7. उपशान्त कषाय	चारित्र मोह दबने पर	11	
8. क्षपक	चारित्र मोह क्षय करने वाला	क्षपकश्रेणी 8-10	
9. क्षीण मोह	चारित्र मोह क्षय होने पर	12	
10. सयोगी जिन	घातिया कर्मी का क्षय करने के बाद योग सहित	13	

पुलाकबकुशकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातका निर्ग्रन्था:॥46॥

सूत्रार्थ - पुलाक, बकुश, कुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक ये पाँच निर्ग्रन्थ हैं॥46॥

संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिंगलेश्योपपादस्थानविकल्पतः
साध्या:॥47॥

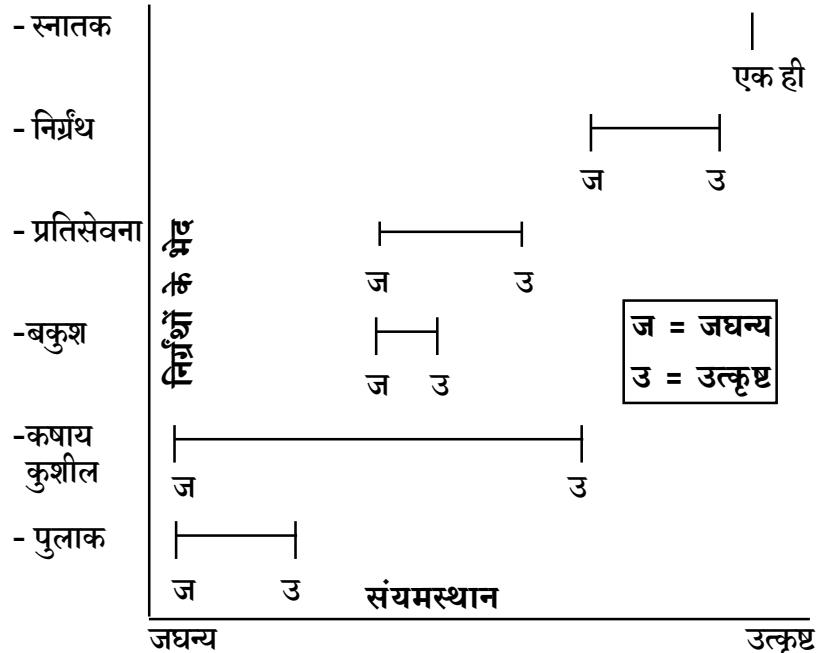
सूत्रार्थ - संयम, श्रुत, प्रतिसेवना, तीर्थ, लिंग, लेश्या, उपपाद और स्थान के भेद से इन निर्ग्रन्थों का व्याख्यान करना चाहिए॥47॥

निर्ग्रन्थ

नाम	पुलाक	बकुश	कुशील		निर्ग्रन्थ	स्नातक
			प्रतिसेवना	कषाय		
स्वरूप	-उत्तर गुणों की भावना से रहित -मूलगुणों में भी कदाचित् अपूर्णता	-ब्रतों को अखण्ड पालते हैं -शरीर, उपकरण की शोभा बढ़ाने में लगते हैं	-मूल-उत्तर गुणों में परिपूर्ण -कभी-2 उत्तर गुणों की विराधना	-संज्ञलन के अलावा शेष कषायों को जीत लिया है	-जिनका मोह नाश हो गया है -केवल ज्ञान नहीं हुआ है	समस्त घातिया कर्मों का नाश कर दिया है
गुणस्थान	6-7	6-7	6-7	6-10	11-12	13-14
संयम	सामायिक, छेदो-पस्थापना	सामायिक, छेदो-पस्थापना	सामायिक छेदो-पस्थापना	यथाख्यात के सिवाय शेष 4	यथाख्यात	यथाख्यात
श्रुत-जघन्य	आचारांग में आचार वस्तु प्रमाण (5 समिति, 3 गुप्ति)	8 प्रवचन मातृका	8 (अष्ट) प्रवचन मातृका	8 प्रवचन मातृका	8 प्रवचन मातृका	श्रुतज्ञान से रहित केवली होते हैं
-उत्कृष्ट	10 पूर्व	10 पूर्व	10 पूर्व	14 पूर्व	14 पूर्व	

नाम	पुलाक	बकुश	कुशील		निर्ग्रथ	स्नातक
			प्रतिसेवना	कषाय		
प्रति- सेवना (विरा- धना)	दूसरों के दबाववश 5 ब्रत व रात्रि भोजन त्याग ब्रत में से 1 की विराधना	1. उपकरण बकुश- उपकरण की चाह 2. शरीर बकुश - शरीर संस्कार की चाह	उत्तर गुणों की विराधना	प्रतिसेवना का अभाव	प्रतिसेवना का अभाव	प्रतिसेवना का अभाव
तीर्थ	सभी निर्ग्रथ सब तीर्थकरों के तीर्थ में होते हैं।					
भावलिंग	* सभी भावलिंगी होते हैं।					
द्रव्यलिंग	* सभी यथाजात रूप वाले होते हैं। * शरीर की ऊँचाई आदि प्रवृत्ति में अंतर होता है।					
लेश्या (भाव)	3 शुभ	6	6	कापोत, पीत, पद्म, शुक्ल	शुक्ल	शुक्ल/ लेश्या रहित
उत्कृष्ट उपपाद (जन्म)	12वें स्वर्ग - 18 सागर आयु	15-16वें स्वर्ग 22 सागर	15-16वें स्वर्ग 22 सागर	सर्वार्थ- सिद्धि 33 सागर	सर्वार्थ- सिद्धि 33 सागर	मोक्ष ही जाते हैं
जघन्य उपपाद	सभी का पहले स्वर्ग - 2 सागर आयु					
संयम स्थान	कषाय सहित	कषाय सहित	कषाय सहित	कषाय सहित	कषाय रहित	कषाय रहित

संयम स्थान की तारतम्यता



ज = जघन्य
उ = उत्कृष्ट

- * सभी के जघन्य से उत्कृष्ट तक असंख्यात संयमस्थान होते हैं।
- * स्नातक अर्थात् केवली का एक ही संयमस्थान होता है।



विषय-वस्तु	सूत्र क्रमांक	कुल सूत्र	पृष्ठ संख्या
मोक्ष के पहले केवलज्ञान की उत्पत्ति का कारण	1	1	214
मोक्ष होने का हेतु	2	1	214
मोक्ष होने पर-			
-किन भावों का अभाव व सद्ब्राव	3-4	2	217
- ऊर्ध्वगमन	5	1	218
- ऊर्ध्वगमन क्यों? हेतु व वृष्टांत	6-7	2	218
- लोकाग्र से आगे न जाने का कारण	8	1	218
मुक्त जीवों में -			
- भेद के कारण व अत्यबहुत्व	9	1	220-222
	कुल	9	

मोहक्षयाज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च केवलम् ॥1॥

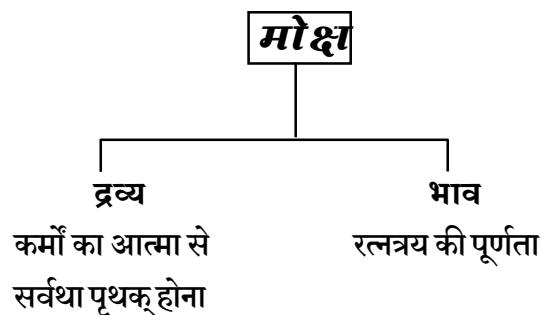
सूत्रार्थ - मोह का क्षय होने से तथा ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्म का क्षय होने से केवलज्ञान प्रकट होता है ॥1॥

मोक्ष के पहले केवलज्ञान की उत्पत्ति

घातिया कर्म	क्षय किस गुणस्थान में
1. दर्शन मोहनीय	4 से 7 किसी एक में
2. चारित्र मोहनीय	10 के अंत में
3. ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय	12 के अंत में
	फल
	केवलज्ञान की उत्पत्ति 13वें गुणस्थान में

बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥2॥

सूत्रार्थ - बन्ध-हेतुओं के अभाव और निर्जरा से सब कर्मों का आत्मनिक क्षय होना ही मोक्ष है ॥2॥



मोक्ष होने के हेतु

नवीन बंध के हेतुओं (मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय, योग) का अभाव
पूर्व बँधे कर्मों की निर्जरा

कर्म का अभाव (क्षय)

यत्नसाध्य(145)

अयत्नसाध्य(3)

चरमदेह वाले के इनका सच्च ही नहीं

* नरकाय

* तिर्यंचायु

* देवायु

गुणस्थान	प्रकृति संख्या	मूल प्रकृति	उत्तर प्रकृतियाँ
4 से 7 किसी एक में	7	4 चारित्र मोहनीय 3 दर्शन मोहनीय	- अनन्तानुबंधी 4 कषाय - मिथ्यात्व, मिश्र, सम्यक्त्व प्रकृति
9	16	3 दर्शनावरण 13 नाम कर्म	- 3 बड़ी निद्रा - नरक गति, नरक गत्यानुपूर्वी, तिर्यच गति, तिर्यच गत्यानुपूर्वी, एकेन्द्रियादि 4 जाति, सूक्ष्म, साधारण, स्थावर, आतप, उद्योत
	8	चारित्र मोहनीय	- अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण 8 कषाय
	1	"	- नपुंसक वेद
	1	"	- स्त्रीवेद
	6	"	- नो कषाय
	1	"	- पुरुष वेद
	1	"	- संज्वलन क्रोध
	1	"	- संज्वलन मान
	1	"	- संज्वलन माया

गुणस्थान	प्रकृति संख्या	मूल प्रकृति	उत्तर प्रकृतियाँ
10	1	चारित्र मोहनीय	- संज्वलन लोभ
12	2 14 [16]	दर्शनावरण 5 ज्ञानावरण 5 अंतराय 4 दर्शनावरण	- निद्रा, प्रचला - पाँचों - पाँचों - निद्राओं के अलावा शेष 4
14	72	1 वेदनीय 1 गोत्र 70 नामकर्म	- कोई भी एक - नीच गोत्र - अन्य स्थानों में क्षय प्रकृतियों के अलावा शेष सभी
	13 [85]	1 वेदनीय 1 गोत्र 1 आयु 10 नाम कर्म	- कोई भी एक - उच्च गोत्र - मनुष्यायु - मनुष्य गति-मनुष्य गत्यानुपूर्वी पंचेन्द्रिय जाति, त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशःकीर्ति, तीर्थकर
कुल	145		

औपशमिकादिभव्यत्वानां च॥३॥

सूत्रार्थ - तथा औपशमिक आदि भावों और भव्यत्व भाव के अभाव होने से मोक्ष होता है॥३॥

अन्यत्र के वलसम्यक्त्वज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः॥४॥

सूत्रार्थ - पर केवल सम्यक्त्व, केवलज्ञान, केवलदर्शन और सिद्धत्व भाव का अभाव नहीं होता॥४॥

मोक्ष होने पर किन भावों का

अभाव होता है		सद्बाव रहता है	
भाव	क्यों?	भाव	क्यों?
*औपशमिक	कर्म के निमित्त से होते थे	*क्षायिक भाव - क्षायिक सम्यक्त्व - " ज्ञान - " दर्शन - " वीर्य	प्रतिपक्षी कर्म का अभाव होने से
*पारिणामिक - भव्यत्व	रत्नत्रय की पूर्णता हो गई	*पारिणामिक - जीवत्व	कर्म निरपेक्ष-स्वभाव
- अभव्यत्व	मोक्षगामी के पहले ही नहीं था		

3 प्रकार के कर्मों के नाश होने पर मोक्ष

नाम	भावकर्म	द्रव्य कर्म	नोकर्म
स्वरूप	जीव के विकार	पौद्गलिक कर्म	शरीर
नाश कैसे होता ?	जीव के पुरुषार्थ से	भाव कर्म के नाश से	द्रव्यकर्म के नाश से

तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्यालोकान्तात्॥५॥

सूत्रार्थ - तदनन्तर मुक्त जीव लोक के अन्त तक ऊपर जाता है॥५॥

पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद् बन्धच्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च॥६॥

सूत्रार्थ - पूर्वप्रयोग से, संग का अभाव होने से, बन्धन के टूटने से और वैसा गमन करना स्वभाव होने से मुक्त जीव ऊर्ध्वगमन करता है॥६॥

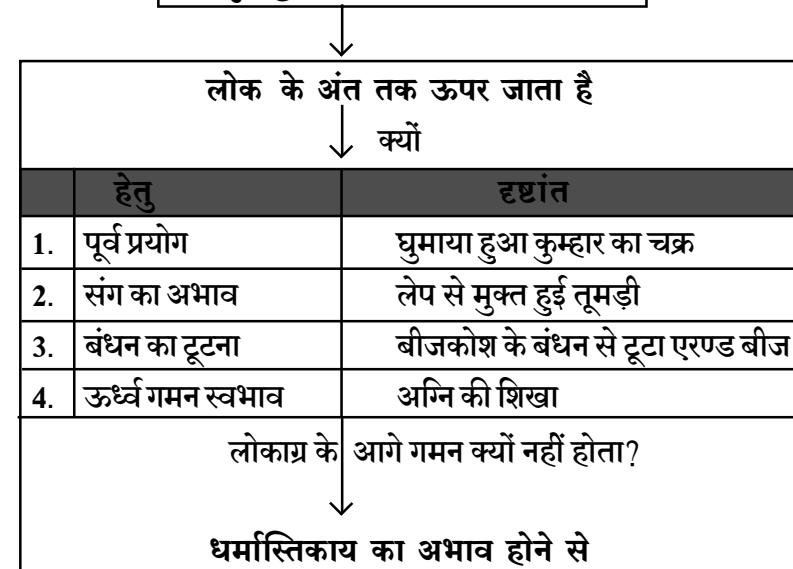
आविष्कुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजवदग्निशिखावच्च॥७॥

सूत्रार्थ - घुमाये हुए कुम्हार के चक्र के समान, लेप से मुक्त हुई तूमड़ी के समान, एरण्ड के बीज के समान और अग्नि की शिखा के समान॥७॥

धर्मास्तिकायाभावात्॥८॥

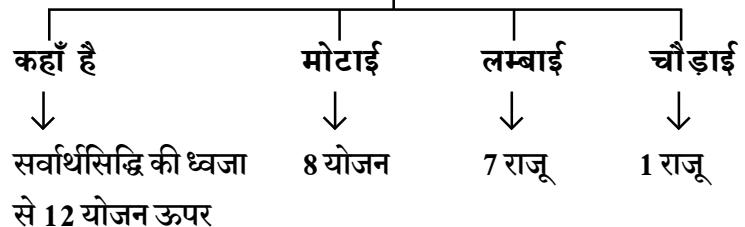
सूत्रार्थ - धर्मास्तिकाय का अभाव होने से मुक्त जीव लोकान्त से और ऊपर नहीं जाता॥८॥

मोक्ष होने के बाद आत्मा

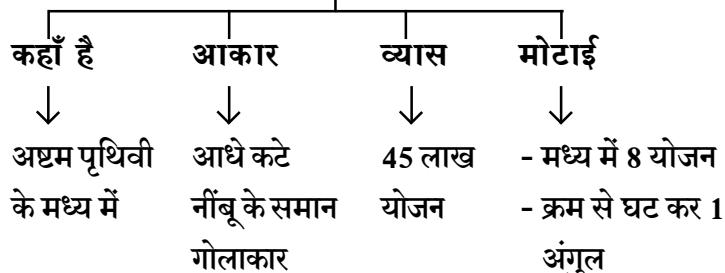


मोक्ष होने पर सिद्धों (मुक्त जीवों) का निवास

अष्टम पृथिवी - ईषत् प्रान्मार



सिद्ध शिला



सिद्धों का निवास - सिद्ध क्षेत्र

लोकाग्र में

(सिद्ध शिला से ठीक ऊपर तनुवात वलय के अन्त में)

क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहना-
न्तरसंख्यात्पवहृत्वतः साध्याः ॥१९॥

सूत्रार्थ - क्षेत्र, काल, गति, लिंग, तीर्थ, चारित्र, प्रत्येकबुद्ध, बोधितबुद्ध, ज्ञान, अवगाहना, अन्तर, संख्या और अत्पबहुत्व - इन द्वारा सिद्ध जीव विभाग करने योग्य हैं॥१९॥

ਮੁਕਤ ਜੀਵਾਂ ਮੈਂ ਭੇਦ ਨਹੀਂ

↓
आत्मिक सुख, ज्ञान, दर्शन, वीर्यादि- अनंत गुणों की अपेक्षा

मुक्त जीवों में कथंचित् भ्रेद

	अनुयोग	प्रत्युत्पन्न नय (वर्तमान को ग्रहण करने वाला)	भूत नय (अतीत को ग्रहण करने वाला)
1.	क्षेत्र	*अपने आत्मप्रदेश *आकाश प्रदेश *सिद्ध क्षेत्र	* जन्म अपेक्षा - 15 कर्म भूमि * अपहरण अपेक्षा - अढाई द्वीप
2.	काल	1 समय में	* विदेह में - सर्व काल * भरत - ऐरावत में - अवसर्पिणी के चौथे काल में - उत्सर्पिणी के तीसरे काल में उत्पन्न जीव ही सिद्ध होते हैं। हुण्डावसर्पिणी काल दोष की वजह से तीसरे काल में उत्पन्न जीव भी सिद्ध होते हैं।
3.	गति	सिद्ध गति	* निकट - मनुष्य गति * दूर - चारों गति से आकर
4.	लिंग(वेद) - भाव - द्रव्य	वेद रहित	* तीनों वेद * पुरुष वेद * यथाजात रूप निर्गीथपना - नगनलिंग

अनुयोग	प्रत्युत्पन्न नय (वर्तमान को ग्रहण करने वाला)	भूत नय (अतीत को ग्रहण करने वाला)
5. तीर्थ		* तीर्थकर बनकर * इतर - तीर्थकर के रहते - तीर्थकर के अभाव में
6. चारित्र	चारित्र - अचारित्र के अभाव में	* निकट - यथाख्यात चारित्र * दूर - 5 चारित्र अथवा परिहार विशुद्धि के अलावा शेष 4 चारित्र
7. प्रत्येकबुद्ध बोधितबुद्ध		* प्रत्येक बुद्ध - स्वयं से ज्ञान प्राप्त करे * बोधित बुद्ध - दूसरे के उपदेश से ज्ञान प्राप्त करें
8. ज्ञान	केवलज्ञान	* 2 ज्ञान * 3 ज्ञान * 4 ज्ञान
9. अवगाहना	अंतिम शरीर से कुछ कम	* उत्कृष्ट - 525 धनुष * मध्यम - अनेक भेद * जघन्य - $3 \frac{1}{2}$ हाथ

1. अंतर	जघन्य - 1 समय उत्कृष्ट - 6 महीने
अंतर अभाव (निरन्तर सिद्ध होने का काल)	जघन्य - 2 समय उत्कृष्ट - 8 समय
2. संख्या (एक समय में कितने जीव सिद्ध होते हैं)	जघन्य - 1 उत्कृष्ट - 108

अल्पबहुत्व (सिद्ध होने वाले जीवों की संख्या की तुलना)	
कम से ज्यादा →	
1. क्षेत्र	लवणसमुद्र < कालोदधि समुद्र < जम्बूद्वीप धातकी खण्ड द्वीप < पुष्करार्द्ध द्वीप
2. काल	उत्सर्पिणी < अवसर्पिणी < दोनों से रहित (विदेह क्षेत्र में परिवर्तन नहीं)
3. गति(भूत अपेक्षा) किस गति से आकर	तिर्यच गति < मनुष्य गति < नरक गति < देव गति
4. लिंग(भूत अपेक्षा)	भाव नपुंसक वेद < भाव स्त्री वेद < भाव पुरुषवेद
5. तीर्थ	तीर्थकर केवली < सामान्य केवली
6. चारित्र(भूत अपेक्षा)	5 चारित्र वाले < 4 चारित्र वाले
7. प्रत्येक-बोधितबुद्ध	प्रत्येक बुद्ध < बोधित बुद्ध
8. ज्ञान(भूत अपेक्षा)	2 ज्ञानधारी < 4 ज्ञानधारी < 3 ज्ञानधारी
9. अवगाहना	जघन्य अवगाहना < उत्कृष्ट अवगाहना < मध्यम अवगाहना
10. अंतर	6 माह के अंतर से < 1 समय के अंतर से < मध्य के अंतर से
11. संख्या(1 समय में सिद्ध)	108 जीव < 107-50 जीव < 49-25 जीव < 24-1 जीव



परिशिष्ट - 1

ज्ञानावरण कर्म के आस्रव के विशेष कारण

1. सच्चे आचार्य तथा उपाध्याय से प्रतिकूलता रखना, 2. तत्त्वों में श्रद्धा नहीं रखना, 3. तत्त्वाभ्यास - तत्त्वश्रवण में आलस रखना, 4. अनादर पूर्वक शास्त्र का उपदेश सुनना, 5. धर्मतीर्थ - सच्चे उपदेश का लोप करना, 6. स्वयं को बहुश्रुतज्ञ मानकर अभिमान करना तथा मिथ्या उपदेश देना, 7. अन्य बहुश्रुत ज्ञानियों का अपमान करना, 8. असत्य प्रलाप तथा उत्सूक्त कथन करना, 9. लोभबुद्धि (धनार्जन, ख्यातिबुद्धि, पदवी प्राप्ति आदि) से शास्त्र लिखना और बेचना, 10. हिंसादि में प्रवर्तन करना।

दर्शनावरण कर्म के आस्रव के विशेष कारण

1. आँखें बिगाड़ देना - निकाल लेना, 2. अपनी दृष्टि का गर्व करना, 3. बहुत सोना, 4. दिन में सोना, 5. आलस्य स्वभाव रहना, 6. नास्तिकता का भाव रखना, 7. सम्यग्दृष्टि को दूषण लगाना, 8. अन्य मतों की प्रशंसा करना, 9. प्राणियों का घात करना, 10. सच्चे मुनियों की निन्दा करना।

असातावेदनीय के आस्रव के विशेष कारण

1. पर का अपवाद, विश्वासघात, चुगली, निंदा, 2. पर को दुःखी करना, निरर्थक दण्ड देना, 3. निर्दयता, अंगोपांग का छेदन-भेदन, ताड़न, त्रासन, तर्जन, भर्त्सना इत्यादि, 4. अपनी प्रशंसा करना, 5. संकलेश प्रकट करना, 6. महा आरम्भ, महा परिग्रह धारण करना, 7. वक्रस्वभाव रखना, 8. पापकर्म से आजीविका करना, 9. विष मिलाना, जाल-पिंजरा-फाँसी आदि बनाना, 10. अन्य जीवों को पकड़ने - मारने के यन्त्रादि उपाय बताना, 11. खोटे प्रयोग सिखाने वाले शास्त्रों को दूसरों को देना।

चारित्रमोह के आस्रव के विशेष कारण

1. जगत का उपकार करने में समर्थ ऐसे शीलव्रतों की निन्दा करना 2. आत्मज्ञानी तपस्त्रियों की निन्दा करना, 3. धर्म का विध्वंस करना - धर्म के साधन में अन्तराय करना, 4. शीलवन्तों को शील पालन करने से चलायमान करना, 5. देशब्रती-महाब्रती जीवों को व्रतों से चलायमान करना, 6. मद्य-मांस-मधु के त्यागियों के चित्त में भ्रम उत्पन्न करना, 7. चारित्रवन्तों के चारित्र में दूषण लगाना, 8. क्लेशरूप लिंग - भेष धारना, क्लेशरूप व्रत धारना।

नौ नोकषायों के आस्रव के विशेष कारण

1. हास्य - मूर्खतापूर्ण हँसना, दीन-दुखी-अनाथों की हँसी करना, कामकथा और कामचोषा पूर्वक हँसना, बहुत व्यर्थ प्रलाप करना।
2. रति - दूसरे जीवों की विचित्र क्रीड़ा (कठिनता से किये जा सकनेवाले आगमानुकूल कार्य) में सहयोग पूर्वक तत्परता करना, उचित क्रिया को नहीं रोकना, अन्य का कष्ट दूर करना, अन्य देशों-विदेशों में उत्सुकतापने से देखने का भाव नहीं होना।
3. अरति - दूसरे जीवों के अरति उत्पन्न करना, दूसरों की कीर्ति नष्ट करना, पापी जीवों की संगति करना, खोटी क्रिया करने में उत्साह करना।
4. शोक - स्वयं को शोक होने पर दुखी होकर चिन्ता करना, दूसरों को दुख उत्पन्न करना, दूसरे को शोक में देखकर आनन्द मानना।
5. भय - स्वयं भयरूप परिणाम रखना, दूसरों को भय उत्पन्न कराना, निर्दयता के परिणाम करके दूसरों को दुःख देना।
6. जुगुप्सा - सत्य धर्म को धारण करनेवाले चारों वर्ण - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र के कुल की क्रिया - आचार के प्रति ज्लानि रखना, दूसरों का अपवाद - निन्दा करने का स्वभाव होना।
7. ऋति वेद - अति क्रोध के परिणाम, अति मानीपना, ईर्ष्या का व्यवहार, झूठ बोलने में हर्ष होना, अति मायाचार में तत्पर होना, अति रागभाव करना, पर ऋति

सेवन करना, पर स्त्री का रागभाव से आदर करना व स्व स्त्री के समान भाव से आलिंगन आदि करना।

8. पुरुष वेद - अत्य क्रोध, कुटिलता का अभाव, विषयों में उत्सुकता का अभाव, निर्लोभता, स्त्री के सम्बन्ध में अत्य राग होना, स्व स्त्री में सन्तोष रखना, ईर्ष्या का अभाव, स्नान-गन्ध-पुष्पमाला - आभरणादि में अनादरपना।

9. नपुंसकवेद - प्रबल क्रोध, मान, माया, लोभ के परिणाम, गुह्य इन्द्रिय का छेदना, अनंग क्रीड़ा करना, शीलवन्तों पर उपसर्ग करना, व्रती जीवों को दुःखी करना, गुणवानों की निन्दा करना, दीक्षा ग्रहण करने वालों को दुःख देना, परस्त्री के संगम का बहुत राग रखना, आचार रहित निराचारी होना।

नरकायु के आस्रव के विशेष कारण

1. मिथ्यादर्शन सहित आचरण करना, 2. अत्यधिक मान करना, 3. शिलाभेद के समान तीव्र क्रोध करना, 4. तीव्र लोभ के परिणाम करना, 5. निर्दयता के परिणाम रखना, 6. दूसरे जीवों को दुःख उत्पन्न करने के परिणाम रखना, 7. दूसरों का घात करने के परिणाम रखना, 8. दूसरों को बन्धन में होने का अभिग्राय रखना, 9. प्राणियों का घात करने वाला असत्य वचन कहना, 10. पर द्रव्य छीनने के परिणाम रखना, 11. मैथुन में अतिराग रखना, 12. अभक्ष्य भक्षण करना, 13. दृढ़ बैर रखना, 14. साधु की निन्दा करना, 15. तीर्थकर की आज्ञा का विरोध करना, 16. कृष्ण लेश्या के परिणाम रखना, 17. रौद्र ध्यानपूर्वक मरण करना।

तिर्यचायु के आस्रव के विशेष कारण

1. मिथ्याधर्म का उपदेश देना, 2. कपट-कूट-कुटिल कार्यों में तत्परता रखना, 3. पृथ्वी रेखा के समान क्रोधीपना होना, 4. शीलरहितपना होना, 5. शब्दों द्वारा प्रवृत्ति करके तीव्र मायाचार करना, 6. दूसरे के भावों में भेद-विवाद-शत्रुता उत्पन्न करना, 7. शब्दों का मिथ्या अर्थ करना, अति अनर्थ रूप विरुद्ध अर्थ

प्रकट करना, 8. मिलावट करना, 9. जाति, कुल, शील में दूषण लगाना, 10. विसंवाद में प्रीति रखना, 11. दूसरे के उत्तम गुणों को छिपाना, न रहनेवाले अवगुण प्रकट करना - कहना, 12. नील और कापोत लेश्या के परिणाम रखना, 13. आर्तध्यान पूर्वक मरण करना।

मनुष्यायु के आस्रव के विशेष कारण

1. मिथ्यादर्शन सहित ज्ञानवान होना, 2. मिथ्यादर्शन सहित विनयवान होना, 3. सरल स्वभाव रखना, 4. सत्य आचरण में सुख मानना, 5. अपना सच्चा सुख प्रकट बतलाना, 6. अत्य और क्षणिक क्रोध रखना, 7. व्यवहार में सरलता रखना, 8. विशेष गुणी पुरुषों के साथ प्रिय व्यवहार रखना, 9. व्यवहार में सन्तोषभाव रखना तथा उसी में सुख मानना, 10. जीवों के घात से विरक्तता रखना, 11. कुर्कम से निर्वृत्त रहना, 12. सभी से मीठा अनुकूल बोलना, 13. स्वभाव में मधुरता होना, 14. व्यर्थ बकवाद नहीं करना, 15. लौकिक व्यवहार कार्यों से उदासीन रहना, 16. ईर्ष्यारहितपना रखना, 17. अत्य संक्लेशभाव रखना, 18. देव, गुरु और अतिथि आदि के लिए दान-पूजा के लिए अपना धन अलग रखना, 19. कापोत लेश्या और पीत लेश्या के परिणाम होना, 20. धर्मध्यान पूर्वक मरण करना।

देवायु के आस्रव के विशेष कारण

1. अपने आत्मा के कल्याणकारक मित्रों से सम्बन्ध रखना, 2. धर्म के स्थानों का सेवन करना, 3. सत्यार्थ धर्म का श्रवण करना, प्रशंसा करना, 4. धर्म की महिमा दिखाना, 5. तप में भावना रखना, 6. जल रेखा समान अति मन्द क्रोध होना।

अशुभ नामकर्म के आस्रव के विशेष कारण

1. मिथ्यादर्शन बनाये रखना, 2. पीठ के पीछे खोटा बोलना, 3. किसी के द्वारा मार्ग पूछने पर खोटा मार्ग ही सही बतलाना, 4. चित्त की अस्थिरता, 5. तौलने

के तराजू-बाँट खोटे रखना, 6. स्वर्ण-मणि-रत्नादि खोटे को सच्चे में मिला देना, 7. खोटी गवाही देना, 8. कपट की अधिकता करना, 9. दूसरों की निन्दा करना, 10. झूठ बचन बोलना, 11. दूसरे का धन ले लेना, 12. महा आरम्भ और महा परिग्रह के भाव करना, 13. अपने सुन्दर रूप-उज्ज्वल भेष का गर्व करना, 14. अपने आभूषण, रूप आदि का मद करना, 15. कठोर-निंद्य-असत्य प्रलाप करना, 16. क्रोध और ढीठता के बचन कहना, 17. अपना सौभाग्य चाहना, 18. अन्य जीवों को कौतुहल उत्पन्न कराना, 19. आभूषण-वस्त्रादि पहनने में बहुत शैक - अनुराग रखना, 20. जिनमन्दिर के चन्दन-गन्ध-पुष्पमालादि-धूपादि की चोरी करना, 21. हँसी उड़ाना, 22. ईंट पकाने का कार्य करना, 23. दावागिनि लगाने का कार्य करना, 24. प्रतिमा का नाश तथा मन्दिर का नाश करना, 25. मनुष्य-तिर्यचों के सोने-बैठने के स्थान को मल-मूत्रादि से बिगाड़ देना, 26. बाग-बगीचा-बन का विनाश करना, 27. क्रोध-मान-माया-लोभ की तीव्रता रखना, 28. पापकर्म से आजीविका करना।

नीच गोत्रकर्म के आस्रव के विशेष कारण

- जाति, कुल, बल, रूप, ज्ञान, आज्ञा, ऐश्वर्य और तप का मद करना,
- दूसरों की अवज्ञा करना,
- दूसरों की हँसी करना,
- अपवाद करने का स्वभाव रखना,
- धर्मात्मा पुरुषों की निन्दा करना,
- अपनी उच्चता दिखाना,
- दूसरों के यश को बिगाड़ देना,
- अपनी असत्य कीर्ति प्रकट करना,
- गुरुओं का तिरस्कार करना,
- गुरुओं के दोष प्रकट करना,
- गुरुओं का स्थान बिगाड़ना - अपमान करना,
- गुरुओं को कष्ट उत्पन्न कराना, अवज्ञा करना, गुणों को लोपना,
- गुरुओं को हाथ नहीं जोड़ना, स्तुति नहीं करना, गुण प्रकाशित नहीं करना, उन्हें देखकर खड़े नहीं होना,
- तीर्थकर आदि की आज्ञा का लोप करना।

उच्च गोत्रकर्म के आस्रव के विशेष कारण

- दूसरों से जाति, कुल, रूप, बल, वीर्य (आज्ञा), विज्ञान, ऐश्वर्य और तप में स्वयं अधिक विशेषता वाला हो तो भी अपने को उच्च नहीं समझना,
- अन्य जीवों की अवज्ञा नहीं करना,
- अन्य जीवों से उद्धतपना छोड़ना,
- दूसरों की निन्दा-ग्लानि-हास्य-अपवाद करना छोड़ना,
- अभिमान रहित होकर रहना,
- धर्मात्मा जनों का आदर-सत्कार करना,
- देखते साथ ही उठ खड़े होना, हाथ जोड़ना, नम्रीभूत रहना, बन्दना करना,
- इस काल में जो गुण दूसरों को प्राप्त होना दुर्लभ हैं, वे गुण अपने में होते हुए भी उद्धतपना नहीं करना,
- अपना माहात्म्य प्रकट नहीं करना,
- धर्म के कारणों में परम हर्ष करना।

अन्तरायकर्म के आस्रव के विशेष कारण

- कोई ज्ञानाभ्यास कर रहा हो उसमें बाधा पहुँचाना,
- किसी का सत्कार हो रहा हो, उसे बिगाड़ देना,
- दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्य-स्नान-विलेपन-इत्र-फुलेल-सुगन्ध-पुष्पमाला आदि में विघ्न करना,
- वस्त्र-आभरण-शैया-आसन-भक्षण करने योग्य भोजन, पीने योग्य पेय, आस्वादन योग्य लेह्य इत्यादि में दुष्ट भावों से विघ्न करना,
- वैभव - समृद्धि देखकर आश्चर्य करना,
- अपने पास धन होने पर भी खर्च नहीं करना,
- धन की अत्यधिक वांछा करना,
- देवता को चढ़ाई गई वस्तु (निर्मात्य) को ग्रहण करना,
- निर्दोष उपकरण का त्याग कर देना,
- दूसरों की शक्ति-वीर्य का विनाश कर देना,
- धर्म का छेद करना,
- सुन्दर आचार के धारक तपस्वी गुरु का धात करना,
- धर्म के आयतन तथा जिन प्रतिमा की पूजा को बिगाड़ देना,
- त्यागी-दीक्षित को तथा दरिद्री-अनाथ-दीनों को कोई वस्त्र-पात्र-स्थान आदि देता हो, उसका निषेध करना,
- दूसरे को बन्दीगृह में रोकना - बाँधना,
- किसी का गुह्य अंग छेदना,
- कान-नाक-ओष्ठ को काटना,
- जीवों को मारना।



परिशिष्ट - 2

पाठांतर

पृष्ठ	प्रथम पाठ	द्वितीय पाठ
41	चरमोत्तम शब्द के अर्थ-	
	उसी भव से मोक्ष जाने वाले (सर्वार्थसिद्धि-अध्याय 2, सूत्र 53)	तीर्थकर (तत्त्वार्थ वृत्ति-अध्याय 2, सूत्र 53)
61	अंत का आधा स्वयंभूरमण द्वीप एवं स्वयंभूरमण समुद्र में कौन-सा काल है-	
	दुःष्म (पंचम) काल तुल्य (त्रिलोकसार-गाथा 884)	चतुर्थ काल (वृहद्-द्रव्यसंग्रह-गाथा 35 श्री ब्रह्मदेव कृत संस्कृत टीका)
77	शुक्र-महाशुक्र (9-10) स्वर्ग में भाव लेश्या-	
	पद्म और शुक्ल (सर्वार्थसिद्धि -अध्याय 4, सूत्र 22)	पद्म (गोम्मटसार जीवकाण्ड-गाथा 534-535)
81	लौकान्तिक देवों की कुल संख्या-	
	407820 (त्रिलोकसार-गाथा 537-538)	407806 (राजवार्तिक- अध्याय 4, सूत्र 25)
198	चार प्रकार का आहार-	
	खाद्य, पेय, लेह्य, स्वाद्य	अन्न, पान, खाद्य, लेह्य (रत्नकरण्ड श्रावकाचार -श्लोक 142)

पृष्ठ	प्रथम पाठ	द्वितीय पाठ	
203	जघन्य अंतर्मुहूर्त का प्रमाण-		
	1 आवलि 1 समय (गोम्मटसार जीवकाण्ड, संस्कृत टीका जीवतत्त्व- प्रदीपिका- गाथा 575)	आवली का एक असंख्यात भाग (यह पाठ भी वर्णी दिया है)	
206	धर्मध्यान कौन से गुणस्थान में होता है-		
	यथायोग्य 4 से 7 में (वृहद्-द्रव्य संग्रह-गाथा 48 श्री ब्रह्मदेव कृत संस्कृत टीका)	4 से 10 में (धवला जी-पुस्तक 13, पृष्ठ 74)	
208	पृथक्त्व वितर्क वीचार शुक्ल ध्यान कौन - से गुणस्थान में होता है-		
	8 से 11 में (वृहद्-द्रव्य संग्रह- गाथा 48 श्री ब्रह्मदेव कृत संस्कृत टीका)	11 में (धवला जी- पुस्तक 13, पृष्ठ 78)	
78	सौधर्मादि सोलह स्वर्गों के देवों के शरीर की उत्कृष्ट ऊँचाई (हाथ में)-		
	स्वर्ग	सर्वार्थसिद्धि अध्याय 4, सूत्र 21	त्रिलोकसार गाथा 543
	सौधर्म-ऐशान	7	7 व 6
	सानकुमार-माहेन्द्र	6	5 व 4
	बह्य-ब्रह्मोन्नर	5	3.5
	लांतव-कापिष्ठ	5	3.5
	शुक्र-महाशुक्र	4	3.5
	शतार-सहस्रार	4	3.5
	आनत-प्राणत	3.5	3
	आरण-अच्युत	3	3

लेखिका-परिचय

श्रीमती पूजा छाबड़ा

आयु :	32 वर्ष
लौकिक शिक्षा :	एम. ए. सी. पी. ए. (सर्टीफाइड प्रोफेशनल अकाउटेण्ट)
	वाशिंगटन स्टेट, अमेरिका
भूतपूर्व कार्य क्षेत्र :	प्रोफेशनल अकाउटेण्ट बेडर मार्टिन, पी. एस., सिएटल, अमेरिका
पति :	श्री ग्रकाश छाबड़ा बी. ई. (मेकेनिकल), एम.एस. (कम्प्यूटर साइंस), अमेरिका भूतपूर्व-सॉफ्टवेयर इंजीनियर, माइक्रोसॉफ्ट कॉर्पोरेशन, वाशिंगटन स्टेट, अमेरिका